Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हरी घाटी

रघुवंश

भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हरी घाटी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

■ ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—१३६

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हरी घाटी

[यात्रा-डायरी-संस्मरण]

Hari Ghati

रघुवंश

Raghu Vansh.

Bharti Gyan Pith
भारतीय ज्ञानपीठ
काशी Kashi

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Acc. No 22155
Cost .....
Date .....

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला
सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

H 99.1
R 13 H

प्रथम संस्करण
१९६१
मूल्य साढ़े चार रुपये

1961
4.50

प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साथ बीते क्षणोंका यह अनुभूत,
कामिल भाईको !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनुक्रम

१. प्रतीक्षा और फिर उल्लास ९
२. पहली मंज़िल २७
३. विश्राम और विस्मरण ४५
४. अपरिचितोंकी ममताके बीच ६७
५. आत्मीय जनसे भेंट ९१
६. प्रवेश और अन्वेषण ११५
७. घाटीका साक्षात्कार १४१
८. घिरते-घुमड़ते हुए बादलोंके बीच १६१
९. शिखर और उपत्यकाकी खोज १७७
१०. स्तब्ध रातकी ध्वनियोंके बीच १९९
११. आत्मसाक्षात् और आत्ममन्थन २२३
१२. परिचयकी सीमा-रेखाएँ २६७
१३. बीते क्षणोंकी घाटीसे विदा २९७

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह वैयक्तिक तथा घनिष्ठ प्रकारका लेखन दूसरोंके सामने 'हरी घाटी' के रूपमें प्रस्तुत करना होगा, ऐसा कभी सोचा नहीं था। यदि पहले समझता, तो 'तंतुजाल' में इसका आंशिक प्रयोग इस प्रकार शायद न करता। यद्यपि दोनोंके चरित्रों और संवेदनाओंमें मौलिक तथा गहरा अन्तर है, पर स्थितियोंकी आवृत्तिसे सहज ही बच सकता था। यह यहाँ इसलिए कहना पड़ रहा है कि 'तंतुजाल'को लेकर मुझे आन्तरिक क्लेश झेलना पड़ा है। योग्य आलोचकोंने भी उसको 'अवैध सम्बन्ध' तथा 'रुग्णाके प्रणय'के आधारपर विवेचित किया है। कृतिकारके लिए यह क्लेशकी स्थिति है, चाहे वह स्वयं अपने संवेदनकी मौलिक समस्याको व्यंजित करनेमें असफल रहा हो, या पाठक अपनी समझकी परम्परागत सीमाओंके आगे बढ़नेमें असमर्थ रहा हो। कृतिकारके लिए उसकी कृतिकी घोषित सफलता या असफलताका प्रश्न असंगत है, उसके लिए सार्थक बात संवेदनकी सर्जनात्मक उपलब्धि ही है, क्योंकि यह संसक्ति (involvement) उसकी मुख्य समस्या है।

'हरी घाटी' के बारेमें आज भी मेरे मनमें संकोच है कि यह सब जो मेरा अपना व्यक्तिगत है, दूसरोंके लिए क्यों महत्त्वपूर्ण या सार्थक है? आजसे बारह वर्ष पूर्वके अपने जीवनके प्रति मैं तटस्थ हूँ, इसमें जो व्यक्त है वह सब उन्हीं क्षणोंका है और उसी मनःस्थितिमें लिखा हुआ है। उन क्षणोंका जो उपलब्ध और सार्थक रहा है, वह शायद आज मेरे व्यक्तित्वमें किसी रूपमें समाहित हो, पर वे सब क्षण गत हो चुके हैं और मुझसे असम्बद्ध हैं। अतः इनके प्रति व्यक्तिगत और आत्मीय होनेका संकोच तथा मोह भी समाप्त हो चुका है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसका अधिकांश डायरीके रूपमें लिखा गया था और प्रस्तुत करनेमें बहुत कम स्थलोंपर संक्षेप किया गया है। शेष अंश उन्हीं दिनों संस्मरणके रूपमें लिखा गया था, वस्तुतः दोनोंकी शैलीमें कोई अन्तर नहीं है। मौन-व्रतके दिनोंकी डायरी बादमें भरी गयी थी, क्योंकि उन दिनों अन्य कोई कार्य नहीं किया जा सकता था। कुछ शब्दोंको बदलनेके अतिरिक्त अभिव्यक्ति तथा शैली सम्बन्धी भी कोई अन्तर नहीं किया गया है। उन दिनोंकी अपेक्षा आज उन भावनाओं, विचारों तथा परिकल्पनाओंको व्यक्त करनेके लिए अधिक उपयुक्त शब्द विकसित हो गये हैं, अतः ऐसे स्थलोंपर कुछ शब्दोंको बदलना तथा अंग्रेज़ी शब्दोंके हिन्दी पर्याय देना उचित समझा गया है।

१५ मार्च, १९६१]

—रघुवंश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रतीक्षा और फिर उल्लास

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसका अधिकांश डायरीके रूपमें लिखा गया था और प्रस्तुत करनेमें बहुत कम स्थलोंपर संक्षेप किया गया है। शेष अंश उन्हीं दिनों संस्मरणके रूपमें लिखा गया था, वस्तुतः दोनोंकी शैलीमें कोई अन्तर नहीं है। मौन-व्रतके दिनोंकी डायरी बादमें भरी गयी थी, क्योंकि उन दिनों अन्य कोई कार्य नहीं किया जा सकता था। कुछ शब्दोंको बदलनेके अतिरिक्त अभिव्यक्ति तथा शैली सम्बन्धी भी कोई अन्तर नहीं किया गया है। उन दिनोंकी अपेक्षा आज उन भावनाओं, विचारों तथा परिकल्पनाओंको व्यक्त करनेके लिए अधिक उपयुक्त शब्द विकसित हो गये हैं, अतः ऐसे स्थलोंपर कुछ शब्दोंको बदलना तथा अंग्रेजी शब्दोंके हिन्दी पर्याय देना उचित समझा गया है।

१५ मार्च, १९६१]

—रघुवंश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रतीक्षा और फिर उल्लास

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: १ :

मैं विचित्र स्वभाव लेकर जनमा हूँ। अपने विषयमें सोचते समय सबको ऐसा लग सकता है, पर यहाँ सबकी बात न कहकर मैं अपनी बात ही कह रहा हूँ। मैं अपने स्वभावकी इस विचित्रताका अनुभव प्रायः करता रहता हूँ। सहज परिचित परिस्थितियोंमें अकुला उठना, और किसी अपरिचित अज्ञातके लिए उत्सुक हो जाना····लेकिन उसकी खोजमें निकलकर पा जानेपर फिर परिचितोंके लिए अकुला उठना, यही मेरा स्वभाव है। परिचितों, स्नेहियोंके बीच, उनसे घिरे रहकर, किसी अपरिचितके आकर्षणसे मन जाने कैसी-कैसी उत्सुकतासे दौड़ा करता है, और जब कभी नये देशमें अपरिचितोंके बीच, उनके आदर, सत्कार, स्नेहके बीच पहुँच जाता हूँ, तो मन उदास हो उठता है, परिचितोंके लिए आकांक्षासे भर जाता है। अपने स्वभावके इसी विरोधके बीच मैं जी रहा हूँ—स्थिरतासे असन्तुष्ट, परिवर्तनके लिए आकुल और नवीनताके बीच उद्विग्न, स्थितिकी कामनासे स्फुरित !

जबसे याद है मैं ऐसा ही अपनेको पाता हूँ। मैं ऐसा ही रहा हूँ। बचपनकी एक घटना है, जितनी अस्पष्ट उतनी ही गहरी। याद है घटनाके रूपमें नहीं, केवल दृश्योंमें। एक बड़ी उमरकी कोई स्त्री है जिसे माँ कहता हूँ, और एक दूसरी है: नयी-नयी अपना मुख बारीक़ घूँघटसे ढँके हुए। उसका यह घूँघट सदा बना रहता है, क्या कहता हूँ, याद नहीं। मैं माँकी गोदमें बैठा हूँ और नयी अपरिचित स्त्री हाथ फैलाकर बुलाती है मुझे। मैं माँका मुँह देखता हूँ, और उसके पास जानेके लिए उत्सुक हो उठता हूँ। माँ अपने मुँहकी अभिव्यक्तिसे रोकती हों जैसे, पर नयी स्त्रीके आकर्षणको मैं रोक नहीं पाता। मैं किलकारी मारता हुआ माँकी गोदसे निकल भागता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हूँ, नवागन्तुकाकी गोदके पास पहुँचकर एक क्षणके लिए झिझकता हूँ, लेकिन वह ममतासे अपनी गोदमें उठा लेती हैं। माँ अपनी गोद बन्द करके बैठ जाती हैं, जैसे 'अब मत आना मेरे पास।' मैं स्त्रीकी गोदसे देखता हूँ और फिर माँकी गोदके लिए ही व्याकुल हो जाता हूँ। परिचयकी सीमा और नवीनके प्रति आकर्षणके बीच मुझे अपने शैशवकी यह धुँधली याद आ जाती है।

सन् '४७ की गर्मीकी छुट्टियाँ इलाहाबादमें, हिन्दू होस्टलकी ऊपरी मंज़िल-के कमरा नं० १७४ में बीती हैं। लम्बी दुपहरियोंवाली गर्मी इसी कमरेकी सारी खिड़कियोंको बन्द कर, अन्दर पसीनेसे लथपथ, प्रबन्धकी प्रथम पाण्डु-लिपि तैयार करनेमें बीती थी। बाहर हूहाकार करती हुई लू बहती रहती थी और मैं अपने नोट्सके बीच बैठा हुआ सारी सामग्रीको एक सूत्रमें बाँधने-का प्रयास करता रहता। सुबहके कई घण्टे लाइब्रेरीमें किताबोंसे उलझने-में लगाने पड़ते। सुबहका नाश्ता, दोपहरकी खिचड़ी और शामके टोस्ट सब कुछ स्टोवपर अपने-आप तैयार करना पड़ता। होस्टलमें एकदम एकान्त और सूनापन था····रातके एकाकीपनमें यदि कभी नींद खुल जाती, यद्यपि थकानमें प्रातः चारके पहले नींद क्या खुलती, तो पत्तोंकी खड़खड़ाहटमें ऐसा जान पड़ता मानो प्रेतोंके नरकंकाल बज रहे हैं। इस प्रकार सन् '४७ की गर्मियोंका एकान्त परिश्रमकी थकानमें डूबा-डूबा बीत गया। उसके बाद सारा वर्ष प्रबन्ध प्रस्तुत करनेमें ही बीता। जनवरी सन् '४८ में अन्ततः प्रबन्ध प्रस्तुत कर ही दिया, पर उसके बादकी चिन्ताएँ कम नहीं हुईं। अगला वर्ष भी वैसा ही बीता। प्रत्येक आर्थिक संघर्ष करनेवाले विद्यार्थीकी समान गाथा होती है, उनकी चिन्ताएँ और संघर्ष भी समान होते हैं। कुछ पैसे पैदा ही करने थे, उनके लिए अपने एक मित्रकी सहायतासे एक पाठ्यपुस्तक लिखनेका काम मिल गया। प्रकाशक महोदय जानते थे कि मुझे तुरन्त रुपयेकी आवश्यकता है, अतः उन्होंने रॉयल्टी या एकमुश्तका प्रस्ताव उदा-

22155

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रतापूर्वक रखा था। स्पष्ट ही उनकी उदारताका उपयोग मेरे लिए कर सकना सम्भव नहीं था।

सन् '४९ की अप्रैलके अन्त तक अथक परिश्रम करके पाठ्य-पुस्तकोंका कार्य, लिखनेसे लेकर प्रूफ़ देखने तकका, समाप्त हो चुका था और काम चलाने भरको रुपया मिल गया। परन्तु मेरे स्वास्थ्यमें सारे परिश्रम और चिन्ताओंके चिह्न व्यक्त हो चुके थे। मैं अपने मनसे तो श्रान्त और क्लान्त अनुभव कर ही रहा था, मित्रोंने भी इसे लक्ष्य किया। कुछ मित्रोंकी राय थी कि हिमालयके किसी स्थानमें चला जाऊँ, स्वास्थ्यके लिए हितकर होगा। विशेषकर रामगढ़, जीजी (श्रीमती महादेवीजी) के साथ जानेमें सुविधा हो सकती थी, अथवा रानीखेतमें भी सस्ता प्रबन्ध हो सकनेकी सम्भावना थी। स्नेहसे कही गयी उनकी यह बात मैंने सुन ली, सिर भी हिला दिया, पर मनमें कुछ उतरी नहीं। थोड़ी-सी विश्रान्तिको लेकर बड़े-बड़े शब्दोंमें स्वास्थ्य-रक्षाकी दुहाई देना, उसके लिए सज-धजकर किसी पहाड़ी-प्रदेशमें जाना और नाना प्रकारके सस्ते मनोरंजनोंमें खूब खर्च करके वापस लौट आना, यह सब मुझे सदा ही हँसीका विषय लगता रहा है। हिमालय मेरे लिए अपरिचित भी नहीं कहा जा सकता। पर्वतकी ऊँची-ऊँची चोटियों, उसकी गहरी अतल घाटियों, अनन्त वनराजिसे शरीर अथवा मनके बीमार कहीं-कहीं कोई प्रेरणा लेते हैं, उनकी बीमारीसे उनका कोई सामंजस्य है, मुझे कभी नहीं लगा। उनका आकर्षण तो पुरुषके मनको अपनी ओर खींचता है, उत्साहको ललकारता है।

अनेक कारणोंसे हिमालयकी ओर जानेका मन नहीं हो रहा है। फिर भी कहीं, किसी ओर जानेकी बात मनमें बार-बार उठ रही है। मई आते ही प्रयागमें विद्यार्थी, जैसे शीतप्रदेशमें बरफ़ पड़नेके पहले ही पक्षी ग़ायब हो जाते हैं, अन्तर्धान हो जाते हैं। फिर एक अजीब उदासी चारों ओर छा जाती है, सारी सड़कें वीरान लगती हैं। सारा शहर उजाड़-सा मन-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को बहुत भारी लगने लगता है। जब कोई काम हो, मनमें उत्साह हो, यह झेला जा सकता है; पर जिस मनःस्थितिमें मैं हूँ, उसमें मईकी कल्पना से ही वह उदासी घेरने लगी। तभी याद आती है फ़ादर बुल्केकी। उन्होंने किसी प्रसंगमें एक बार कहा था, मैं गर्मीकी छुट्टियोंमें उनके पास हज़ारीबाग़ आऊँ तो अच्छा रहेगा। वे दृढ़संकल्प हैं कि अपनी थीसिस हिन्दीके माध्यमसे ही प्रस्तुत करेंगे और यदि मैं पहुँच गया तो उनको सहायता मिल सकेगी। उन्होंने यह भी तो कहा है कि स्थान मेरे अनुरूप है। पानी अप्रैल-मईसे ही बरसता रहता है, इस कारण कुछ ठण्ढा भी रहता है। उस समय बात उठी थी और मैंने हामी भरी थी। उसमें कोई पकड़की बात हो, ऐसा नहीं समझा था—प्रबन्ध, ख़र्च क्या कैसे होगा? एकाएक मनमें जैसे किसीने कहा, क्यों न इस बार हज़ारीबाग ही चला जाय, हाँ, यदि प्रबन्ध हो सके। नवीन अनुभूतियाँ····नवीन संवेदनाएँ, नया स्थान···· विन्ध्य-श्रेणियोंका वह छोर, उनकी चोटियाँ, घाटियाँ और प्लेटोके ऊँचे-नीचे विस्तार! मिर्ज़ापुरके पास इन श्रेणियोंके दर्शन किये हैं अवश्य, टाँडा-फ़ाल और बेंडम फ़ॉल भी देखे हैं। कभी मुक्त रूपसे विचरण करनेका अवसर नहीं मिला। इस बार क्यों न विन्ध्यके उस छोरका निमन्त्रण स्वीकार किया जाय।

मनमें बात उठी और जैसे किसी अज्ञात अपरिचित घाटीका आकर्षण मनको अपनी ओर खींच रहा है। लगा, यह घाटी मेरी परिचित है और उसके लिए मेरे मनमें न जाने कबकी कामना पलती रही है। आज यह घाटी भूली हुई सुधिके समान मनको घेर रही है। मनमें बात आयी है, तो बुल्के जी ही कितनी दूर हैं। उल्लेख करनेपर ज्ञात हुआ उन्होंने सेण्ट स्टेनिसलॉस, कॉलेजके रेक्टरसे अनुमति माँगी है और आशा है मिल भी जायगी। मनमें सोचता हूँ, यह भी कैसी बात हुई। जिसे मैं केवल बातकी-बात मान रहा था, उसे उन्होंने गम्भीरतासे पकड़ लिया है और सारा कार्य-क्रम वह उसीके अनुसार बना रहे हैं। ख़ैर, मनके कौतूहलको सन्तोष ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मिला। यह प्रसंग अप्रैलके प्रारम्भका है और छुट्टियाँ शुरू होनेमें अभी तीन-चार सप्ताहकी देर है। दिनोंतक बात भूला-सा रहा हूँ। एकाएक एक दिन बुल्के भाईने सेमेनरीके अपने कमरेमें उल्लसित होकर बिस्कुट देते हुए वह पत्र भी दिखाया जिसमें रैक्टरने हमको रहनेकी अनुमति ही नहीं दी है, वरन् साग्रह निमन्त्रण दिया है। साधुके मुखपर सात्त्विक प्रसन्नता झलक रही है। और वह बतला रहे हैं, 'हमारा कॉलेज सीतागढ़में है, जो हज़ारीबाग़से चार मील दूर सुन्दर पहाड़ी ढालपर स्थित है। कॉलेजका अपना कम्पाउण्ड बहुत बड़ा है, जो उस प्रदेशमें फैले हुए जंगलका एक भाग ही जान पड़ता है और वहींसे एक सुन्दर पहाड़ी घाटी प्रारम्भ होती है। वहाँ रहनेमें एकान्तवास ही समझो, जिससे मनको शान्ति मिल सकेगी, साथ ही सैर करनेका क्षेत्र भी फैला हुआ है। पानी बरसनेके बाद गर्मी बिलकुल नहीं रहती।' इसी प्रकार उल्लासमें वह बहुत कुछ कहते गये। मैं बिस्कुटको दाँतोंसे कुतरता हुआ देख रहा हूँ—एक वैरागीके मनका अनुराग। वे उल्लसित हैं कि हम दोनों साथ-साथ रह सकेंगे, साथ-साथ घूम सकेंगे और कुछ काम भी कर सकेंगे। एक साधुके मनमें मेरे जैसे स्नेहाकांक्षी जनके प्रति ममता; जिसने सब कुछ त्याग दिया है, घर, देश, माँ-बाप, परिजन तथा स्नेहीजनको····उसके मनमें देश-देश पारके अपरिचित मेरे जैसे व्यक्तिके लिए कहाँसे आया इतना ममत्व····जब कभी सोचता हूँ तभी मेरा मन भर आता है, पर कारण कभी समझ नहीं सका। शायद यह ऐसा ही होता होगा। मनमें उनकी बातसे उस पहाड़ीकी सुधि आ गयी है। पहाड़ीकी चली गयी शृंखला मुझे जैसे अपनी ओर बरबस खींच रही है। न जाने क्यों जंगलोंसे भरी हुई घाटी मेरे मनको आकर्षित कर रही है। मेरे मनमें यह हरी घाटी अपरिचितका न जाने कितना आकर्षण लेकर घूम गयी।

फिर भी मईके अन्ततक प्रतीक्षा करनी है। बुल्के भाई पहले कानके इलाजके लिए कलकत्ता जायँगे और वहाँसे मईके अन्ततक हज़ारीबाग़ पहुँच सकेंगे। मैं चाहूँ तो पहले भी जा सकता हूँ, पर उनके बिना वहाँ ठीक नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहेगा। प्रतीक्षा करनी ही होगी। मई मासमें इलाहाबादमें प्रतीक्षा सरल नहीं होती। सारे वातावरणमें चला-चलीकी हलचल रहती है। पहली अप्रैलसे ही विश्वविद्यालयके विद्यार्थी जाने लगते हैं और मईका प्रथम सप्ताह समाप्त होते-होते युनिवर्सिटी क्षेत्रमें सन्नाटा व्याप जाता है। इसीके साथ बहुतसे शिक्षक चले जाते हैं, कुछ उत्तर-पुस्तकोंकी विवशतासे रुके रहते हैं, बस जाने-जानेको। यही नहीं, यदि रुकना है तो इस बीच कितने ही मित्रोंको सी-ऑफ़ करनेका दायित्व भी निभाना होगा ही। पिछले वर्षों काम-का उत्साह था, अतः आत्मन्‌को रामेश्वरम्‌की यात्राके लिए, जीजीको रामगढ़के ग्रीष्मावासके लिए, मगहरसिंह मनहासको यहाँसे स्थायी रूपसे विदाई देनेके लिए सी-ऑफ़ करनेमें मनमें आवेगका अनुभव तो हुआ था, पर उदासी या डिप्रेशनका भाव नहीं आ सका था। लेकिन इस बार प्रतीक्षा, मई मासकी प्रतीक्षा, काफ़ी भारी पड़ रही है। केवल यात्राकी कल्पनाका सहारा ले रहा हूँ।

अब जैसे सीतागढ़की पहाड़ियाँ, उनकी बिखरी फैली श्रेणियाँ और उनके बीचमें फैली वनराजियाँ मानो मेरी चिरपरिचित हों। अनेक बार हिमराजकी असंख्य शृंखलाओंमें फैली हुई श्रेणियोंको अपलक देखता रहा हूँ, और अरावलीकी कितनी ही घाटियोंके सौन्दर्यसे अप्रतिभ ठगा-सा खड़ा रह गया हूँ....पर उनमें किसीकी याद इस तरह घेर नहीं रही है, किसीका आकर्षण इस प्रकार खींच नहीं रहा है। छोटानागपुर तथा संथाल परगनातक फैली हुई इन हज़ारीबाग़ पहाड़ियोंके दर्शनमात्र किये हैं, कलकत्ताके रास्तेमें। परन्तु लगता है, वे पहाड़ी श्रेणियाँ मेरी बहुत अपनी, सगी हों और मुझे इतनी दूरसे बुला रही हों। और यह घाटी मेरी स्मृतिमें जैसे उभरती हो, अपने विस्तारमें फैल जाती हो। उसके चट्टानी शिखरों-पर मानो बादल उमड़ रहे हों, नीचे ढालोंकी हरियाली सामने उमड़ती आ रही हो। मैं घाटीके बीचमें खड़ा उन्नत शिखरोंवाली पहाड़ीको देखता हूँ, उसमें उमड़ते हुए बादलोंको निहारता हूँ और फिर अपने चारों ओरकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घिरती हुई हरियालीपर दृष्टि डालता हूँ। इसी प्रकारकी कल्पनाओंसे मन भरा रहता है, जब मैं हैमिल्टन रोड होता हुआ सी० वाई० चिन्तामणि रोडपर आता हूँ और फिर अल्फ्रेड पार्कके लिए चल पड़ता हूँ। अभी छुट्टी होनेमें एक सप्ताहकी देर है, बुल्के भाईके कलकत्ता जानेमें अभी दो सप्ताह-की देर है।

विश्वविद्यालयमें छुट्टियाँ हो गयीं, विद्यार्थियोंकी भीड़ तितर-बितर हो रही है। प्रयागमें उदासी अपने डैने फैलाये उतरती आती है, लोगोंमें जैसे प्रतिद्वन्द्विता चल रही हो कि कौन इसके डैनोंकी छायासे पहले मुक्त हो जायगा। इन लड़कोंके साथ ही नगरका स्पन्दन धीरे-धीरे दबता जा रहा है। सिन्दबादके रहस्यमय लोककी उस चिड़ियाके डैनोंमें नीचे विद्यालय तथा छात्रा-वासकी इमारतें नीरव और मौन हैं, लम्बी तारकोलकी काली सड़कें किसी अजब अलस भावसे घिरी हुई हैं। वासन्ती बयारके स्पर्शके साथ जो नवीन कोपलोंका श्रृंगार चतुर्दिक् पाकड़, बरगद, पीपल तथा आमने किया था, वह भी गहरे होते रंगके साथ मन्द हो चुका है। गरम हवाके झोंके अवश्य किसी तप्त स्मृतिके समान अन्तरको झकझोर जाते हैं। शिरीषकी उत्फुल्लता गहरी होकर जरठ हो गयी है। नीम ज़रूर झूम रहा है, हँस रहा है, खिला हुआ है। वह हँसता हुआ जीवनकी क्षणिकतामें उदास होनेवाले हम-जैसों-का मानो उपहास करता हो—यह मुँह लटकाना भी क्या, यह मनहूसियत भी क्या, वसन्त था तो ग्रीष्म भी है, इसमें ऐसा क्या ?

इस गहरे और घिरे हुए वातावरणमें मेरा मन सदा खिन्न और उदास हो जाता है। पर इस करुण अवसादमें टीसके साथ एक सुख भी हो जैसे। कुछकी दृष्टिमें मैं दुःखवादी हूँ, पर मैं इसे करुण रसका उपभोग ही मानूँगा। मुझे अनेक बार तो ऐसा लगा है कि यह ऋतु ही ऐसी है। इस संवेदनशील ऋतुमें देख रहा हूँ, धीरे-धीरे परिचित और मित्र अपने घर जा रहे हैं या कहीं घूमनेके कार्यक्रमके साथ जा रहे हैं। बुल्केजी कलकत्ताके लिए जा चुके हैं, ट्रेनमें उन्होंने ममत्वके साथ मुझे अपने अंकमें दबाते हुए कहा—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'हम जल्दी फिर मिलेंगे भइया, और इसलिए उदास होनेकी बात नहीं है।' ट्रेनके छूटनेके बाद उनके हिलते हुए हाथको देखकर मुझे लगा था कि जैसे मेरा मन ट्रेनके साथ जा रहा है और मैं जो प्लेटफ़ार्मपर खड़ा हूँ, मात्र शरीर हूँ। तोमर भाई (रामसिंह) कुछ दिन रुके रहे पर अन्ततः उन्हें भी जाना था। मैंने अनेक बार देखा है, अनुभव किया है, विस्तृत प्लेटफ़ार्मपर एका-एक भीड़-भाड़के बीच एक ट्रेन भयंकर गर्जन-तर्जन करती आती है और फिर धीरे-धीरे किसी अज्ञात शक्तिसे रुक जाती है। कुछ क्षणोंके लिए सिमटा हुआ कोलाहल बिखरकर और बढ़ जाता है। उसी उमड़ते-घुमड़ते जनरवके बीच मैं खड़ा रहता हूँ किसी कम्पार्टमेंटका द्वार थामे, मेरे मित्र-स्नेही अब भी अपनी उद्विग्नतामें मुझे भूले-से हैं : फिर शोरगुल कम हो जाता है, मैं स्नेह और ममताके सघन क्षणोंकी अनुभूति पाता हुआ अपने मित्रके साथ हूँ, सब कुछ भूला हुआ। अकस्मात् कर्कश सीटीकी आवाज़ सारे प्लेटफ़ार्ममें गूँज उठती है और कुछ ही क्षणोंमें सरकती हुई ट्रेन आँखोंसे ओझल हो जाती है। मैं अकेला, उदास, एक विचित्र विकलताका अनुभव करता हुआ लौट पड़ता हूँ। पर ऊपरसे मुसकराता हुआ, गुनगुनाता हुआ, सीटी बजाता हुआ, जैसे यह सब कुछ नहीं है, केवल खेल है ! पर इसमें कहीं कोई टीस होती है, उसको कोई कैसे झुठला सकेगा ?

अभी आश्वासनकी बात है। इस वर्ष जीजी (महादेवीजी) अभी पहाड़ नहीं जा सकी हैं और पाण्डेयजी इलाहाबादमें ही हैं। आत्मन्को एक सप्ताहके लिए घर जाना है, अभी जा नहीं सके हैं। इसी बीच जयपुरसे राम आ गया (मेरा भानजा) और इस कारण कई दिन उसके साथ चहल-पहलमें बीते। वातावरणकी उदासी मेरे मनसे इन दिनों दूर है। एक प्रकार-से उससे मेरा सौहार्द्र है और वह मेरे सामने अपने-आपको पूरी तरह खोल कर रखता है। पाण्डेयजीकी पुस्तक 'महाप्राण निराला' छप रही है, इस कारण उनके मनमें पूरा उत्साह है। उसका कुछ भाग मुझे मिलता ही है। पाण्डेयजीकी मोटरकारने इस उल्लासको बढ़ा दिया है। इधर आत्मन्के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्वभावकी विचित्रतासे हम दोनों खिन्न हैं, भिन्न कारणोंसे। परिणामस्वरूप अपने मनकी बात कहनेका अवसर भी निकालते हैं। कारमें कभी उनके साथ रसूलाबाद चला जाता हूँ और फिर रात वहीं बिताकर लौटता हूँ। रातमें हम लोग जब चाँदनीमें खुली छतपर लेटते हैं और अपनी बातें शुरू करते हैं तब कितनी रात बीती इसका ध्यान नहीं रहता। सामने खड़े होनेपर दूर गंगाकी पतली चमकती हुई धार दिखाई देती है। इस वातावरणमें दो मित्रोंका भावुक हो उठना स्वाभाविक है। पाण्डेयजीको आत्मन्के प्रति कुछ शिकायतें हैं, उनके कहनेमें कुछ आरोप जैसा लगता है, पर वे मेरे मनका अन्दाज़ लगाते हुए कुछ स्पष्ट कह नहीं पाते। मुझे भी आत्मन्से शिकायतें हैं, मैं कहना भी चाहता हूँ, पर पाण्डेयजीके भावसे कहनेमें संकुचित होता हूँ, क्योंकि उनके प्रति मेरे मनमें कहीं आरोप तो है ही नहीं, और इस प्रकारकी बात मेरे लिए सहना भी सरल नहीं। मैं बात टालता हूँ और पाण्डेयजीको साहित्यके स्तरपर ले आता हूँ।

इन सबके बीच घिरा पाकर भी मैं न जाने क्यों अपनेको नितान्त अकेला पाता हूँ। ऊपरसे देखनेमें लगता है कि हम सब बिलकुल अपने हैं, आत्मीय हैं। और नहीं हैं, ऐसा भी नहीं है (कमसे-कम तब ऐसा ही लगता था)। पर अन्दर-ही-अन्दर ऐसा लगता है, अनुभव होता है—हममें कहीं मौलिक मतभेद है जो हमको अत्यन्त निकट नहीं आने देता है। हो सकता है, यह मेरे स्वभावकी अपनी गहरी भूल हो, मैं आत्मीयताके भावको उस प्रकार ग्रहण करनेमें ही असमर्थ होऊँ। सम्भव है, जितना प्रतिदानकी आकांक्षा करता हूँ, उसमें निराश होना पड़ता हो। पर दूसरी ओरसे कहीं कुछ प्रदानकी कमी भी हो सकती है। मैं अपने स्वभावकी कमी मानता हूँ जो किसी स्थितिपर टिकना चाहता नहीं, जो जीवनकी एक गतिसे स्वयं ऊबने लगता है। अपने आपको एकान्त अकेला माननेका कारण भी यही होगा, हो सकता है।

राम आया है, मैं उससे दो वर्ष बाद मिला हूँ। जयपुरको एक दिन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने अपना घर माना था। बड़ी जीजी मेरे लिए आत्मीयताकी चरम विन्दु थीं और इसलिए रामको मैंने सदा अनुज जैसा ही माना है। उसे मैं प्यार करता रहा हूँ, उसकी सारी कमज़ोरियोंके बावजूद। उसके संस्कारोंके प्रति मुझमें उतनी ही वितृष्णाका भाव रहा है। मैं जिसे उसके संस्कार कहता हूँ, वह उसके वातावरणका दोष भी हो सकता है। जीवनका विचित्र व्यावहारिक दृष्टिकोण—अधिकारकी लज्जाहीन उपासना—धनकी शक्तिपर दृढ़ विश्वास, नहीं पता कहाँसे इस लड़केमें जड़ पकड़ गया है। साथ ही वह स्नेहशील है, भावुकता उसका विशेष गुण है। मुझे कभी-कभी आश्चर्य भी होता है—मेरे इतने निकट वह रहा है और मुझे मानता भी रहा है, फिर भी उसने मुझसे कुछ भी प्रभाव ग्रहण नहीं किया। मेरा सम्मान करता है, स्नेह करता है—पर मेरी बातका, मेरे आदर्शका उसके लिए कोई महत्त्व नहीं। वह सुन लेता है, चुप रहता है, लगता है समझ रहा है। पर जब बात करता है तब अपनी ही जैसी। उसके दृष्टिकोणके लिए मैंने उसे प्रताड़ित किया है, उसकी भर्त्सना भी कम नहीं की है और व्यंग्य भी करता रहा हूँ। उसने सदा आदरवश, स्नेहवश सब चुपचाप सह लिया है। लगता है, उसके मनमें भी कहीं अपने आपको लेकर द्वन्द्व रहा है। नौकरशाहीके वातावरणमें वह पला है, उसने कैरियरको ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण जाना है। उसकी अपनी विवशता है कि वह स्वयं उतना परिश्रमी तथा अव्यवसायी नहीं है, और उसकी पूर्ति वह इस प्रकार करना चाहता है। उसने देखा है, नौकरशाही भी अन्ततः पैसे और ऐश्वर्यके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती है, तो क्यों न धनको ही सर्वोपरि महत्त्व दिया जाय। वास्तवमें इसमें कोई विषमता नहीं है, नौकरशाही साम्राज्यवादी व्यवस्थाकी परिणति है, और वह उसके आगेकी स्थितिके प्रति आकर्षित हो गया है—पूँजीवादके प्रति। हम जो लोग हैं वे इस बीचकी स्थितिको ऐतिहासिक अनिवार्यताके रूपमें ग्रहण न करके सीधे समाजवादकी ओर बढ़ना चाहते हैं, बढ़ रहे हैं।

इस बार मैं रामको अतिथिके रूपमें लेता हूँ, उससे काफ़ी समय बाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भेंट हुई है। विशेषतः वह एक मानसिक तनावकी स्थितिमें आया है, अतः मैं यथासम्भव उसको प्रसन्न रखता हूँ। केवल मैं उसे कुछ व्यावहारिक सीख अवश्य देता हूँ, पर मेरा कहना व्यर्थ है। विमाताको लेकर वह पिताके प्रति आक्रोशमें है। अपने स्वभावके अनुसार वह विमाताको स्वीकार कर लेता है, एक प्रकारसे उनके प्रति स्नेहशील भी है। पर उसके मनने आर्थिक प्रश्नको संघर्षका केन्द्र बना लिया है। मैं उसकी बात समझता हूँ, उसने जीवनमें आराम और ऐश्वर्यको बहुत-कुछ माना है, ऐसे ही वातावरणमें वह रहा है। इस क्षेत्रमें उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ भी हैं। पर उसकी अपनी प्रतिभा तथा शक्ति कम है, यह सब अपने आप कर लेना, उसके वशकी बात नहीं जान पड़ती। अतः वह अज्ञात रूपसे पिताकी सामर्थ्यपर अधिक विश्वास करनेका अभ्यासी हो गया है। आज वह अपने उस आधारको छिनते पाता है, तो उसे लगता है कि वह अपने अधिकारसे वंचित किया गया है। यही भाव उसको पीड़ित करता रहता है। नौकरशाही मनोवृत्तिने हमारे युवकोंपर कुप्रभाव डाला है, उसका यह उदाहरण है। अपनी कमियों-के बावजूद वह मुझे प्रिय लगता है और उसको ज़बरदस्ती फ़ैजाबाद भेजकर मुझे कष्ट भी हुआ। वह चाहता था कि कुछ दिन यहाँ रुककर सीधे हरदोई बड़े मामाके पास चला जाय। पर मुझे सन्तोष है कि छोटे दादा और बड़े दद्दाको उसके फ़ैजाबाद पहुँचनेपर सन्तोष हुआ होगा। अन्यथा यह समझ कर कि रामने उनकी उपेक्षा की है, उनको क्लेश होता।

अब जीजी और पाण्डेयजीके जानेके दिन निकट आ रहे हैं और आत्मन् उनके साथ जायेंगे यह भी निश्चित है, यद्यपि वे नित्य ही जानेके विषयमें आजकल कर रहे हैं। उनके स्वभावसे मैं परिचित हूँ। एक-दो दिनसे सभी अपनी-अपनी तैयारीमें व्यस्त हैं, और मैं अकेलेपनका भार लेकर अन्यमनस्क हूँ। यह सन्तोष मनको इस बीच उल्लसित करता है कि मेरे जानेका दिन भी निकट है। मैं जूनके प्रथम सप्ताहमें गयाके लिए चल सकता हूँ। फिर ९ जूनतक बुल्केजी हज़ारीबाग़ पहुँच जायेंगे। जाना है तो कुछ पहले भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चला जा सकता है, केशवका आग्रह गयामें दो सप्ताह रोकनेका है भी। पर अब मुझे लग रहा है कि आत्मन्‌के घरसे वापस आ जानेके बाद ही मेरा जाना उचित होगा। फिर भी तो सप्ताहसे कम ही रुकना है। बुल्के-जीके दो पत्र कलकत्तासे आ चुके हैं और वे शीघ्र-से-शीघ्र हज़ारीबाग़ पहुँचनेके लिए लिख रहे हैं। उधर केशवजी भी लिख रहे हैं कि इस प्रकार प्रयागमें समय बिता देनेसे क्या लाभ? कई बार निश्चय बदलकर अन्तमें जीजीके जानेकी तिथि २६ मई आ ही गयी। आत्मन्‌को जीजीके घर १ एलिगिन रोड होकर जाना है, अतः मैं उनका सामान लेकर सीधे स्टेशन पहुँच गया। वहाँ लीला अक्का, रेणुका भाभी, कौशल्या 'अश्क' आदि पहलेसे कम्पार्टमेंण्टमें विद्यमान हैं। आत्मन् टिकट आदिकी व्यवस्थामें गये हैं। मैंने उनका सामान रखाया, उसी समय जीजी और उनकी पार्टीका सामान आ पहुँचा। देहरादूनकी बोगीमें भीड़ अधिक नहीं है, अतः परेशानी नहीं हुई। थोड़ी देरमें आत्मन् आ गये और उनके बाद ही जीजी श्रान्त-सी पाण्डेयजीके साथ पहुँचती हैं। शायद वह प्रबन्ध आदिमें बहुत व्यस्त रही हैं।

मैंने प्लेटफ़ार्म टिकटके स्थानपर प्रयागका टिकट ले रखा है। मन उदास है, खिन्न भी। बोलनेका जी नहीं हो रहा है। पाण्डेयजीकी मुखर आत्मीयतामें मन लग नहीं रहा है। प्रश्नोंका उत्तर दे देता हूँ, अनमना-सा। कलकी छोटी-सी घटनाने खिन्न कर दिया है मुझे। अन्तिम दिनके लिए यह तय था कि मैं रसूलाबाद पाण्डेयजीके साथ रहूँगा। मैं जब एल-गिन रोड नं० १ पहुँचा, तो वह अन्दर किसी व्यवस्थामें व्यस्त हैं, ऐसा समाचार मिला। 'लौटनेपर मिलूँगा' का समाचार देकर सिविल लाइन्स चला गया। पर लौटनेपर ज्ञात हुआ कि 'पाण्डेय बाबू' रसूलाबाद चले गये हैं। मैं समझ रहा था कि यह इस प्रकार उन्होंने मुझे काटा है और कल इसका कोई सटीक कारण भी सुननेको मिल जायगा। पर मैंने उसके लिए अवसर ही नहीं दिया है। पाण्डेयजीने लक्ष्य तो किया, पर किसीके भावको समझकर उसके अनुसार अपनेको छोड़ पाना उनके लिए सहज नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह अपनेको, अपनी ही भाषामें अपने 'बुल'को (जिसका एक रोचक प्रसंग बादमें जोशीजीने दक्षिण-यात्रा सन्दर्भमें बताया) कभी भूल नहीं पाते। पाण्डेयजी उसे शक्ति और पुरुषत्वका प्रतीक मानते हैं, यह शिवका वाहन जो ठहरा !

जीजीको छोड़कर सभी उल्लासमें हैं, वह अपनी क्लान्तिको हटा नहीं पा रही हैं। मेरा मन उदास है, कहीं किसी कारणसे खिन्न भी। ट्रेन चलनेको हुई, सीटी देती है। ट्रेन चली, कौशल्याजी गुड्डेको लेकर चलती ट्रेनसे उतर पड़ीं। पाण्डेयजीने सहायता दी, एक क्षणके लिए हम सब उद्विग्न हुए। मैं खड़ा हूँ, पाण्डेयजी बैठनेको कहते हैं। मैं उत्तर देता हूँ, 'मेरा स्टेशन बस अब आया ही, और मेरा इस प्रकार उतरना नहीं हो सकेगा।' जीजीने हँसते हुए कहा, 'अरे भाई वह पंजाबी तो नहीं है।' सब हँस पड़े और वातावरण कुछ हल्का हुआ। ट्रेन प्रयाग स्टेशनपर रुकी और मैं उतरकर बाहर खड़ा हो गया। इसी ओर सब बैठे हैं, दो मिनट बीतते क्या लगता है। ट्रेन चली, मैंने प्रणाम किया। उदासी वापस न लौटे, इसलिए दृढ़तासे खड़ा रहा। फिर स्थिर, निश्चित क़दमोंसे टैगोर टाउनकी ओर लौट पड़ा।

मैं विद्यालयके पाससे गुज़र रहा हूँ और उसी समय साढ़े दसका डिंग-डांग क्लाकमें बजता है। लगता है ध्वनियोंसे उदासी फैल रही है, जैसे लड़के विद्यालयका सब कुछ लेकर चले गये हैं। इधर-उधर लाइब्रेरीके चारों ओर, दो-चार शोधके विद्यार्थी दिखाई देते हैं या दफ़्तरोंमें काम करनेवाले बाबू लोग अपने काममें व्यस्त हैं। एक मन होता है, लाइब्रेरीमें ही कुछ देर बैठा जाय, पर पैर उस ओर बढ़े नहीं। विचार उठा, जोशीजीके पास संगम आफ़िस ही चला जाय, उन्होंने 'संगम' के लिए कुछ माँगा है और अबतक मैं टालता रहा हूँ। लेकिन कहीं जानेकी इच्छा नहीं हो रही है, घर ही लौटना होगा। इसी मनःस्थितिमें याद आ जाता है, मुझे जाना है, अब केवल ग्यारह दिन और हैं। मनमें एक गुदगुदी-सी उठी····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं अपनी हरी घाटीकी ओर चल पड़ूँगा, उस अपरिचित घाटीकी कल्पना बहुत अपनी लगी, जैसे यह घाटी जन्म-जन्मकी अपनी हो, उसकी स्मृतिने मनकी उदासीको बहा दिया हो। मैं स्वयं चकित हूँ कि यह कैसा आकर्षण है। मैं अपनी बड़ी जीजीकी बात कभी नहीं समझ सका हूँ। वह कहतीं, 'मुझे अपने गाँव-घरकी ईंट-मिट्टीसे भी प्यार है।' मैं तब सोचता कि कोई ईंट-मिट्टीसे कैसे प्यार करता होगा, और आज मैं उस अज्ञात घाटीके लिए इतना इच्छुक हो उठा हूँ। वहाँ कौन है अपना ?

उदासीके छट जानेके बाद जो उल्लासका ज्वार आया तो उसमें प्रतीक्षा के दिन ठहर नहीं सके। पता नहीं चला कब कैसे अपने आप वे दिन बीत गये। अब मैं घरमें अकेला हूँ। अपने बहुत निकटके सारे मित्र चले जा चुके हैं। तोमर दादा (टीकम सिंहजी)से कभी लाइब्रेरीमें भेंट हो जाती है ! वह अपने थीसिसके कार्यमें और कुछ अपने आने वाले मित्रोंमें व्यस्त हैं। शमशेर भाईसे इधर भेंट नहीं हुई, एक दिन विद्यालयके सामने मिले भी तो जल्दीमें। फिर भी अपने कड़े हाथोंमें गहरी आत्मीयतासे मेरे हाथोंको दाब-कर अपना स्नेह उन्होंने व्यक्त किया और किसी दिन आनेका आश्वासन देकर चले गये। जोशीजीसे मिलनेकी बात सोचता हूँ, पर उनके लिए कहानी बिना लिखे मिलनेका साहस नहीं होता। लेकिन कहानी उत्साहमें पूरी कर ही ली, और एक निबन्ध भी। जोशीजीसे जब उनके घरपर मिला, उन्होंने हर्ष प्रकट करते हुए स्वागत किया। कहानी और निबन्ध पाकर वह प्रसन्नता प्रकट करते हैं, 'कहो रघुवंशजी, क्या हाल-चाल हैं। पाण्डेयजीका भी कोई पत्र आया ? मैं तो इधर बड़े-बड़े चक्करोंमें फँसा रहा····और यही तो कहता हूँ मैं रघुवंशजी, बादमें आप देखिएगा। सब मानेंगे।' वे अच्छे मूडमें हैं और अपना हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। मैं अपनी हज़ारीबाग़ जानेकी बातका उल्लेख करता हूँ, और जोशीजी उसका समर्थन करते हैं, 'ज़रूर जाइए, अच्छी जगह है। ठंडी तो क्या, पर अच्छा रहेगा। खास बात तो चेंजकी है। विशेषतः बुल्केजीके साथ आपका मन लग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जायगा।' फिर वह साहित्यकी चर्चामें आ जाते हैं, और बहुत देर तक गुरुदेवके साहित्यपर कहते रहते हैं। मैं अनमना-सा हाँ-हूँ करता रहता हूँ।

इस बीच एक बार मनकी रिक्तताको भरनेके खयालसे ऐसे ही घूमते हुए जो कौशल्याजीके यहाँ जाता हूँ, तो एक पुस्तकके चक्करमें कई बार जाना पड़ जाता है। 'अश्क' जी बाहर हैं और उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं है, इसी बीच एक पुस्तकके प्रूफ़का झंझट आ गया है। लेकिन कई बार जाना ही मेरे हाथ लगा, मुझसे काम कुछ हो नहीं सका। कुछ व्यस्तता मिल जानेसे मुझे भी कुछ खला नहीं है। कपड़े सिलनेको दे दिये हैं, पर तैयारीकी विशेष कुछ चिन्ता नहीं है। इन सब आमन्त्रित और अनिवार्य चिन्ताओंके बीच भी एक ऐसी स्मृति है जो मुझे घेरती है। सन्ध्याकी गोधूलीमें जब मैं वृक्षाच्छादित सड़कोंपर घूमने निकलता हूँ, तो लगता है मैं कल्पना-लोकमें विचर रहा हूँ, जहाँ दुःख और अवसाद अपरिचित हैं। मनमें हल्की-सी फुरहरी, हृदयमें विचित्र-सा स्पन्दन और कल्पनाकी रंगीनी—यह ऐसा ही उल्लासके क्षणोंका अनुभव है। न मैं जीवनकी थिरताका उपासक हूँ, न मुझे अनन्त आनन्दकी भावना ही उद्वेलित करती है। कुछ लोग संसारको दुःखमय मानते हैं, उसके कष्टोंकी ओर विशेष ध्यान देते हैं। उसकी क्षणिकताके प्रति अत्यधिक जागरूक होकर चिन्तित हो उठते हैं, मनमें संसारके प्रति उदास होनेकी साधनाका प्रयास करते हैं। ऐसे लोगोंके प्रति मेरे मनमें कभी आदर भाव नहीं रहा। एकान्तमें किसी काल्पनिक आनन्दकी खोजमें तपस्या करनेवालोंको मैं बड़ा मान सका हूँ—कभी उस बड़प्पनको स्वीकार करनेमें भी मनने विद्रोह किया है—पर मानवताके पथ-प्रदर्शकके रूपमें उन्हें नहीं देख सका हूँ। और जो संसारके दुःख और उसकी क्षणभंगुरताके प्रति आँखें बन्द कर ऐश्वर्य तथा सुखके जीवनको चरम मान बैठे हैं, उनको अपना मानकर भी अपने मनके अनुरूप नहीं स्वीकार कर सका। मुझे लगता है आदमीको अपना दुःख भी झेलना चाहिए, अपने सुखका उपभोग भी करना चाहिए। क्षण है तो उसे नगण्य क्यों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माना जाय, आखिर भूत-भविष्यकी शृंखला भी क्या है ? क्षणका दुःख अपनाना है और उसके सुखको भी स्वीकारना है। हाँ, हम दुःखमें दूसरोंसे सहानुभूति चाहते हैं, और सुखमें दूसरोंका सहयोग। दुनियाके दुःख-दर्दको अपने ऊपर झेलनेकी मसीहाईमें मेरा विश्वास जमता नहीं।

इस प्रकार सड़कके सूनेपनपर सन्ध्याकी गोधूली उतरती है और अपनी धुँधली छाया चारो ओर फैला देती है। मैं अपने उल्लासमें विस्मृत चला जा रहा हूँ। इसीमेंसे होकर मेरे भविष्यका सुन्दर पथ जाता है····जो उस हरी घाटीके बीचसे होकर निकलता है। ऐसा लगता है, यह हरी घाटी ही मेरा भविष्य है और वह मेरे मनके उल्लासके रंगसे रंजित हो गयी है। मैं कल्पनाके पंखोंपर उसी ओर उड़ता जाता हूँ। मेरे जीवनके आदर्शोंका प्रशस्त पथ अपने-आप सीधा और सुलभ हो गया है। उस पथकी सारी विषमता भी मुझे रमणीय लगती है। यह क्या है, जो मुझे कोमल बनाता है ? ऐसा लगता है उस दूरकी घाटीमें कोई मेरा साथी मेरी प्रतीक्षा युग-युगसे कर रहा है, और मैं उसे पाऊँगा, उसका सहारा मेरे जीवनकी प्रेरणा बन सकेगा ! मैं चौंककर सोचता हूँ—कैसी है यह हरी घाटी, जिसने मुझे इस प्रकार घेरा है ? और देखता हूँ, सड़कपर अभी-अभी भक्से बल्ब जल उठे हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहली मंज़िल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: २ :

मेरा रिज़रवेशन आठ जूनका हुआ है, और आज वह दिन आ गया। आत्मन् सीतापुरसे आज ही आनेवाले हैं, इस व्यग्रतासे शायद मैंने उनकी प्रतीक्षा कभी नहीं की होगी। क्यों कर रहा हूँ प्रतीक्षा? मुझे लग रहा है, बाहर निकलनेके पहले आत्मन्से मिलना ही चाहिए। क्यों? स्वयं भी निश्चित रूपसे नहीं कह सकता। लगता है, मनमें कोई बार-बार कह रहा है कि आत्मन्से मिलना ही चाहिए। व्यावहारिक कारण ढूँढ़-कर भी नहीं खोज पा रहा हूँ। मुझे उनसे लौटनेपर होल्डाल ज़रूर लेना है, पर इसे कारण रूपमें सोचनेपर हँसी अपने ऊपर ही आती है। उसके बिना तो पुरानेवालेसे सहज ही काम चल सकता है। हो सकता है विदाके समय किसी आत्मीयको समीप पानेकी सहज इच्छा होती हो! कभी आदमी अपने जीवनकी सहज ही आ उपस्थित होनेवाली घटनाओंको महत्त्व देता है, उनको युग, देश, कालके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यमें बहुत बढ़ा-कर देखता है। क्यों? इसलिए कि वह अपनेको, अपने लघु लगनेवाले व्यक्तित्वको इस संदर्भमें विशेष करके देखना चाहता है, जिससे वह अपनी संवेदनाको अधिक गहराई दे सके, अपने अनुभूतको ऐतिहासिक आयाममें व्यापक बना सके। और मैं समझ रहा हूँ मेरा अपना 'मैं' इस इतने संघर्षके बाद अपने ही व्यक्तित्वमें महत्त्वपूर्ण हो उठा है। इस यात्राको उसने अपना उपलक्ष्य बनाया है।

प्रातःसे ही लग रहा है, दो विरोधी भावनाएँ उठकर मनको निरपेक्ष कर रही हैं। एक ओर यात्राका हर्ष और दूसरी ओर प्रयाग छोड़नेकी सहज उदासी। आत्मीयताके बन्धनके अभावमें भी प्रयाग जैसे स्वयं अपने मोहका बन्धन मनपर फैला रहा है। और इस मनःस्थितिमें केवल क्रियाके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रूपमें सब काम कर रहा हूँ। जोशीजीको एक कहानी और एक निबन्ध दे चुका हूँ, तोमर दादाको लाइब्रेरीके अपने कमरेकी ताली भी सुबह दे दी। फिर निरुद्देश्य भावसे घूमता रहा, मनमें शायद यह भाव उठा भी नहीं कि कहाँ जाना चाहिए? प्रयागकी चौड़ी सड़कोंकी फैली हुई विस्तृत लम्बाई देखी, मौलश्रीकी गहरी छायाकी ओर ध्यान गया, नीमके फूलोंकी मस्ती अब जरठा गयी है, फूलोंके बीच हरी निबौरियाँ भरने लगी हैं, पीपल और बरगद तो कबके गहरा गये हैं····मैं सब देखता हूँ, विश्वविद्यालयका डिंगडांग कई बार कई दिशाओंसे कानमें पड़ता है, पर मैं निरपेक्ष हूँ। सब कुछ जैसे सामने घटित हो रहा है, पर मैं विवश हूँ। मेरी तटस्थता मुझे स्वयं बोझिल लग रही है। पर यह 'लगने' जैसी अनुभूति भी तो नहीं है, बस ऐसा लगता है किसी स्थिर सागरमें मेरे अस्तित्वकी नाव 'फ़्लोट' कर रही है। तिरनेका कोई एहसास नहीं है।

घूम-घामकर वापस लौटा हूँ और ग्यारह बज चुके हैं। रामप्यारेसे खानेके सम्बन्धमें पूछ लेता हूँ और फिर आत्मन्‌की प्रतीक्षा····। कुछ देरमें ही सहारनपुर पैसिंजरसे वे आ गये। रिक्शेसे वे उतरे, नमस्कार होता है। उन्होंने सामान उतारनेकी आज्ञा देकर मुझसे मुसकराते हुए पूछ लिया—'सब ठीक, आज ही जानेकी बात है न!' मेरे मनसे एक भारी बोझ उतर गया है, जैसे अब सब अपने-आप ठीक हो जायगा। मैं निश्चिन्त और प्रकृतिस्थ हूँ। सामान्य जीवनके क्रमके साथ हमारी बातचीत भी चल रही है। प्रारम्भमें मिसरिखके हालचाल, यहाँके समाचार। यहाँ समाचार ही क्या है, पाण्डेयका रामगढ़से एक पत्र ज़रूर आया है, उससे वहाँके समाचार कम, आकाश, पहाड़ी और जंगलका भावुक परिचय विशेष मिला है। भोजनपर हमारी बातचीत स्नेह-सम्बन्ध और उसके लिए निकटताकी आकांक्षापर होती रहती है। आत्मन् कहते हैं स्नेहके लिए सदा निकट रहनेकी आकांक्षा स्वाभाविक है। इस क्षेत्रमें व्यक्तिका केन्द्र स्नेहपात्र रहेगा, उसके न रहनेपर स्नेहीके लिए जीवनका सारा रस तथा आक-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

र्पण समाप्त हो जाना स्वाभाविक है। उनके तर्कमें कुछ ऐसी ध्वनि है कि वास्तविक प्रेममें ऐसा होना प्रायः अनिवार्य है। और मैं सोचता हूँ, मैंने कहनेका प्रयत्न भी किया, कि प्रेममें इस प्रकार सीमाएँ बनाकर एक केन्द्र-पर अपने सारे व्यक्तित्वको बाँध देना सहज भले ही हो, पर उसमें प्रेमकी सार्थकता नहीं है। तर्कहीन प्रेम, मैं स्वीकार नहीं कर रहा हूँ, उसे तो आत्मन् भी मान नहीं पा रहे हैं। मैं कहता हूँ, प्रेमको, व्यक्तित्वको व्याप-कता देनी चाहिए, उसकी स्वयं सीमाएँ बनकर तो वह निरर्थक हो जायेगा। ऐसी स्थितिमें प्रेम प्रेमपात्रकी भौतिक निकटतासे अधिक उसके मानसिक सहचरण और प्रेरणामें प्रतिफलित हो सकता है। और जो लोकमें प्रेमपात्र-को समीप पानेकी इच्छा ही प्रेम लगती है, वह किन्हीं स्वार्थों और मोहोंकी अनिवार्य स्थितिके कारण। यह तो ठीक है कि आदमीकी पूर्ण अभिव्यक्ति उसकी इन सारी कमज़ोरियोंके साथ ही मानी जा सकती है। पर इसको जो आदर्श स्थिति मानकर चलते हैं, उनसे मेरा मतभेद है। इसी प्रकार बातचीतका क्रम चलता रहा, उसके पीछे हमारा यह मनोभाव है कि हम इस प्रकार एक दूसरेके साथ अधिक सघनताके साथ रहना चाहते हैं, उन क्षणोंमें जिनके बाद हमको कुछ समयके लिए अलग हो जाना है।

मुझे एक बार चौक जाना है, पर मन कहीं निकलनेको नहीं हो रहा है। ऐसा लगता है कि समय बातचीतमें बहता जाये, और हमारे सह-अस्तित्व (आजके अर्थमें नहीं) की स्थिति बनी रहे जितनी भी देर हो सके। इस मनोभावके साथ चौक जानेकी सारी आवश्यकताएँ धीरे-धीरे विलीन होती गयीं, फिर मैं चौक नहीं गया। आत्मन्ने एक बार मेरे सारे सामानकी चेकिंग की, एक प्रकारसे 'फ़िनिशिंग टचेज़' की दृष्टिसे। सन्ध्या समय आत्मन् ८ बजेतक आ जानेका वादा करके ८६, गाड़ीवान टोला मिलने चले गये हैं, और मैं कुछ समयके लिए अकेला हूँ। अपनी पूर्ण निष्क्रिय मनःस्थितिमें भी मैं इस व्यस्तताका अनुभव करना चाहता हूँ कि सोच लूँ कि कोई आवश्यक वस्तु रह तो नहीं गयी है। पर कहीं किसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्तरपर यह भाव भी है कि मुझे कुछ नहीं करना है। जो होना होगा हो ही जायगा। मैं अपने ७१, टैगोर टाउनके लॉनपर कुर्सी डालकर बैठा हूँ, इसे लॉन केवल इसी अर्थमें कहा जा सकता है कि यत्र-तत्र कहीं घास इस लूके मौसममें भी जीवित है और फिर ऐसे स्थानपर है जहाँ बँगलोंके सामने लॉन रखनेका फ़ैशन है। चाँदनी दिनकी रोशनीके साथ ही प्रवेश कर रही है, फीका-फीका चाँद क्रमशः चमकता जा रहा है। कुछ समयके लिए जो झुटपुटेका अँधियारा था वह भी साफ़ होता जा रहा है। न जाने कितनी बारके देखे हुए इस दृश्यमें न जाने कैसा 'अपनापन' उभर रहा है जो मन-को घेरता है। मैं टहलने लगता हूँ, मैं टहलता रहा। चाँदनीमें प्रकाशमान आकाशको कभी देखता हूँ, कभी कुछ ही दूरके रेलमार्गके बाँधके घेरेको चक्कर काटते हुए देखता हूँ। फिर घूमकर अपने ही मकानकी सफ़ेद जहाज़ी आकृतिको देखता हूँ। मनमें कहता हूँ, कल यह सब नहीं होगा, जो होगा वह नवीन होगा, कुछ अपरिचित होगा और फिर मनमें उठा—'मेरे परिचित, तुम्हें प्रणाम !' प्यारे खाना बनानेमें व्यस्त है, वह आज उदास है फिर भी काममें मनोयोगसे लगा है। उसने ही सारी तैयारी की है। मंजन-ब्रशसे लेकर इजारबन्द डालनेके प्रबन्धतक उसका ध्यान रहा है। उसके आग्रहसे मेरा सामान कुछ बढ़ ही गया है। उसे पूरी चिन्ता है कि मुझे बाहर किसी वस्तुकी कमी न पड़ जाय।

आकाशमें हल्के-हल्के बादल कभी चाँदपर आ जाते हैं, और हवाके सुखद झोंके दिन भरकी तपनके बाद लग रहे हैं। सारा वातावरण कल्पना जैसा सुखद लग रहा है। और मन कहता है, इससे अधिक सुखकी खोजमें कहाँ भटकते घूमोगे। यह तो तुम्हारे लिए यहीं सुखद ऋतु प्रस्तुत हो गयी है। तुम जानेके लिए उत्सुक हो, कहीं ठण्डककी खोजमें, सुखकी चाहनामें। ऐसा भी क्या जाना ? अपने परिवारको छोड़कर, अभ्यस्तको छोड़कर ! क्या सुख मिलेगा इन सबसे विमुख होकर ! मैं मनमें उत्तर देने जैसी भाव-स्थिति नहीं बना पाता, मैं चुप हूँ—विवश और उदास। पर मनके किसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोनेसे एक धीमा स्वर आता है—'यही तो, यही सब असह्य हो उठता है कभी। परिचयमें, अभ्यस्तके साथका जीवन सुखका, तृप्तिका जीवन है; पर यह प्रगाढ़ता ही क्या कभी बोझिल नहीं बन जाती है ? स्थिरताकी शान्ति, रुके रहनेकी भावना कितनी भारी होती है, कितनी बड़ी विवशता जान पड़ती है। उस क्षण आदमी साँस लेनेके लिए जैसे किसी अपरिचितके लिए व्याकुल हो उठता है। और यह ठण्डक-गरमीका प्रश्न ? अरे भोले, यह तो बहाना है ! जो यहीं जनमा है, रहा है, उसको यहाँकी गरमी-वर्षाकी क्या चिन्ता। यह सब सहना तो उसका स्वभाव बन गया है। यह सब परिवर्तन, गति जीवनकी चाहना है। यह बरसोंसे जीवनमें रुकापन आ गया है, जीवन एक क्रममें बँधा हुआ बीतने लगा है, मैं इसीसे ऊबकर जा रहा हूँ। शेष सब कुछ उपलक्ष्य मात्र है—किसी मुक्तिके लिए, स्वच्छन्द प्रवाहके लिए मैं किसी फैलेपनके लिए अन्तर्मनसे व्याकुल हूँ और उसीकी खोजमें अपरिचित-की ओर दौड़ पड़ा हूँ।

मैं इसी प्रकार टहल रहा हूँ, कितनी बीती बातें मनमें आ-आकर निकली जा रही हैं। इनके बीच कितनी ही भविष्यकी कल्पनाएँ भी झाँक गयीं। भविष्यके उन्मुक्त रूपने, उसके प्रशस्त वातावरणने मुझे उल्लसित ही किया और मेरे उस भविष्यके पथकी रेखापर हरी घाटीकी छाया जैसे फैल रही हो। आठ बज रहे हैं, प्रतापगढ़ पैसिंजर न जाने कब निकल गया, मुझे भान नहीं हुआ। मैं अपने-आपमें ऐसा डूबा हूँ कि सामनेसे पैसिंजरके निकल जानेका कुछ भी ध्यान नहीं रहा। आत्मन्‌ने आकर कहा—'तैयार।' मैं संक्षिप्त उत्तर दे देता हूँ—'हूँ ही।' आत्मन् और मैंने साथ ही खाना खाया, हमारा साथ खानेका ही अभ्यास है। सोच लेता हूँ, अब कितने दिनों बाद यह अवसर मिलेगा। सन्ध्यासे ही मुझे ऐसा क्यों लग रहा है कि प्रत्येक आजके समय आगत कल यहाँ नहीं रहूँगा, अन्यत्र कहीं रहूँगा। उसी समय प्यारे रिक्शा लेकर आ गया और हम प्यारेकी नमस्ते-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को लेकर विदा होते हैं। वह उदास है, जैसे कोई परिजन ही प्रवासपर जा रहा हो। हम दोनों चुपचाप स्टेशनकी ओर जा रहे हैं।

रिक्शा हैमिल्टन रोड होकर सी० वाई० चिन्तामणि रोडपर पहुँच गया। मैं पिछले दिनों इस सड़कपर जिन भविष्यकी कल्पनाओंसे उत्प्रेरित होता रहा हूँ, वे जैसे फिर एक बार हल्की झाँकी दिखाकर निकल जाती हैं। मैं, अपने मनको गत-आगतसे मुक्त करनेके लिए, आत्मन्से बातचीत शुरू करना चाहता हूँ। पर आत्मन्की चुप्पी कभी-कभी दुर्भेद्य हो जाती है, विशेषकर भावावेश या भावुकताके क्षणोंमें। फिर भी मैं सामान्य जीवनकी चर्चाओंमें, उनको खींच लाता हूँ और रामगढ़, मिसरिख तथा उतरौला आदिकी बातें होती रहती हैं। अल्फ्रेड पार्कसे रिक्शा निकला, खिली हुई चाँदनीमें उसके पेड़ोंकी छायाएँ, बाईं ओरकी विक्टोरियाकी मूर्ति, सूखे पड़े हुए फूलोंके बेड्स और सूखी-सी घास भी स्वप्नलोकके समान जान पड़ती हैं। मनमें मोहका ज्वार, दूरपर उठता आभासित होकर ही, विलीन हो गया। आत्मन्ने घड़ी देखी, अभी समय काफ़ी है। मार्गमें सिविल लाइन्स भी पड़ा, पर उसकी हलचल बहुत बिखरी हुई जान पड़ती है। दुकानोंकी तेज़ रोशनीकी अपेक्षा लोग घने वृक्षोंके सहारे अधिक घूम-फिर रहे हैं। पर रिक्शाको यह सब पार करते देर नहीं लगती है, और हम स्टेशनके पोर्टिकोमें उतर रहे हैं। टिकट लेना नहीं है, आत्मन्ने एक प्लेट-फ़ार्म टिकट खरीद लिया और अन्दर प्लेटफ़ार्म नम्बर ३–४ पर पहुँच गये। हमारी बम्बई मेलमें लगायी जानेवाली बोगी प्लेटफ़ार्मसे हटकर खड़ी है, कुली प्लेटफ़ार्मसे नीचे उतरकर सामान पहुँचाता है, पर हमको कूदकर वहाँ तक पहुँचना पड़ा। कूद-कादकर कम्पार्टमेण्टमें अपनी सीटपर पहुँच जाता हूँ, और ज्ञात होता है कि उसमें अन्य सीटोंपर दो महिलाओं और कई बच्चोंका क़ब्ज़ा पहलेसे हो चुका है। मेरी सीट अलग पड़ती है, इससे मुझे सन्तोष हुआ। आत्मन्ने सामान लगवाया और फिर बिस्तर लगाने लगे। ज्ञात होता है, मेल कुछ लेट आ रही है। एक बार मनमें संकोच होता है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आत्मन् को अधिक देरतक स्टेशनपर रहना पड़ेगा, जानेकी बात कहना व्यर्थ है। साथ ही प्रसन्न भी होता हूँ, चलो कुछ देर और साथ रहकर बात करेंगे। हम अपने बिस्तरपर बैठे जमकर बातचीतमें व्यस्त हैं।

बातचीतका रुख अनेक प्रसंगोंमें मुड़ जाता है, और मेरे ध्यान-केन्द्रमें साथकीमहिला-यात्री आ जाती हैं, उनके बिस्तरे नौकरोंकी सहायतासे सारे समय बिछते ही रहे—न जाने कितनी बार चद्दर तकियोंकी व्यवस्था की गयी। शायद बच्चोंकी व्यवस्थाके कारण यह उलझन अधिक है। बच्चे ऊधम कर रहे हैं, छोटी स्त्री मना करती है और प्रौढ़ स्त्री डाँटती भी है, पर कोई मान नहीं रहा है। परिवार विहारका लगता है, साथमें कोई पुरुष नहीं है, इस कारण अन्दर मनसे वे चिन्तित भी कम नहीं लगतीं जो उनकी व्यस्तता और उद्विग्नतासे प्रकट है। हम बातचीतके क्रममें वह रहे हैं। आत्मन् मुझे पूर्ण विश्राम करनेकी सलाह देते हैं, मैं उनसे उनका आगेका कार्यक्रम पूछता हूँ। मैंने बेमनसे जानेके लिए भी कहा, मैं समझता हूँ, उनको विदा देनेमें विशेष कष्ट ही होता है, यह कार्य उनकी रुचिका नहीं है। पर कर्तव्यसे सब कुछ झेलना उनका स्वभाव है। मेरा स्वभाव इसके विपरीत विदाईकी करुणामें भी एक अजीब तरहके उदास रसके ग्रहण करनेका है। पर उन्होंने 'न' कहकर विशेष उत्साहके मनोभावको व्यक्त किया, वे इस प्रकार उत्साहका भाव अक्सर दिखाते हैं, जिसमें अन्तर्निहित उनका सही मनोभाव समझ पाना सरल नहीं है। मैं समझ रहा हूँ कि उनके मनपर कुछ बोझा है, स्वयं मैं भी, मनपर एक विचित्र भारका अनुभव कर रहा हूँ। लेकिन मैंने घटना-क्रमके प्रवाहमें इस प्रकार अपनेको छोड़ दिया है कि वैराग्य जैसी उदासी मेरे चारो ओर छाकर कवच बन गयी है। पहलेकी मानसिक स्थितियाँ याद आ रही हैं, जब इस संधि-स्थलपर परिचित अपरिचितके बीच मैंने संघर्ष झेला था, पर आज वह क्षण केवल निरपेक्ष अनुभूतिका विषय है, उसके प्रति राग-विराग मनमें शेष नहीं रह गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्लेटफ़ार्मकी हलचल बढ़ जाती है, और हमारा ध्यान उस ओर जाता है। ट्रेन धीरे-धीरे प्लेटफ़ार्मपर प्रवेश कर रही है, कुलियोंकी दौड़धूप शुरू हो गयी है। फेरीवाले सजग हो जाते हैं। फिर ट्रेनके बीचमें आ जानेसे प्लेटफ़ार्मका दृश्य ओझल हो जाता है, केवल शोर और हलचलका आभास मिलता रहता है। फेरीवालोंकी हाँकें सुनाई दे रही हैं। इसी बीच शंटिंग करनेवाले इंजनने हमारी बोगीको खींचना शुरू कर दिया, हम चाहते हैं कि बोगी पीछे जोड़ी जाय, विशेषकर कोयलेसे बचनेके मोहसे। बोगी पीछे जुड़ती है और आत्मन् प्लेटफ़ार्मपर उसी समय उतर जाते हैं, जैसे इतनी देरमें थक गये हों। उनके पीछे मैं भी उतरता हूँ। देरसे उनको पान नहीं मिल सका है, इसका मुझे ध्यान भी नहीं था, उन्होंने एक बार उत्कंठासे चारो ओर दृष्टि डाली, पर लगता है कि ट्रेन अब छूटनेवाली है। वे रुक जाते हैं, मुझे ट्रेनपर चढ़ जानेको कहते हैं। ट्रेन सीटी दे रही है, गार्ड हरी झण्डी दिखा रहा है। लगता है, ट्रेनका यह जाना आकस्मिक हो रहा है। आत्मन् अपने हाथोंको जोड़े खड़े हैं, उनके मुखपर कल्पनात्मक मुसकान है, वे उसीमें अपने मनका आवेग सँभाले जैसे खड़े हों। ट्रेन धीरे-धीरे खिसक चली, द्वारकी जालीके कारण अधिक झाँककर देर तक देखते रहनेकी सुविधा नहीं है। इसलिए एक झलकसे अधिक मैं उनको और उनके वातावरणको देख नहीं पाता हूँ। केवल मेरे सामनेसे प्लेटफ़ार्म खिसकता जाता है और मैं विवश होकर उस ओरसे मुँह मोड़कर अपनी सीटकी ओर बढ़ता हूँ। शीघ्र स्टेशनका यार्ड भी पार हो रहा है और मैं अब लेटनेकी तैयारीमें हूँ। अपने ओढ़नेकी चद्दर सिरहानेसे निकाल ली। उसी समय एकाएक मेरा ध्यान आकर्षित होता है—'यदि आप अपनी ओरकी जाली चढ़ा लें तो अच्छा हो।' कम आयु-की स्त्रीने कहा। एक क्षणमें मैं समझकर उत्तर देता हूँ—'आप चढ़ा लें तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है।' उसके मुखपर मेरी बातको सुनकर आक्रोश और आश्चर्यका मिला-जुला भाव दौड़ जाता है, पर उसके प्रकृतिस्थ होने-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के पहले ही प्रौढ़ स्त्री मेरी बात समझ लेती है और दयाके भावसे मेरी ओर देखती हुई मेरी ओरकी जाली चढ़ा देती है। मेरे लिए उस आक्रोश-से अधिक असह्य यह दया भाव है। मैं नहीं चाहता कि केवल इसलिए मुझे कोई बेचारा मान सके कि मैं जाली चढ़ाने जैसे नगण्य कामको सहज रूपसे नहीं कर सकता। दोनोंने मिलकर कम्पार्टमेण्टको चारों ओरसे बन्द कर लिया। मैं उनके क्रियाकलापकी ओरसे निरपेक्ष होकर अपने बिस्तरपर लेट चुका हूँ। कुछ समय बाद सारे प्रकाशके बन्द हो जानेसे लगा अब उनका काम पूरा हो चुका है। मुझे इस धुँधले वातावरणमें आरामका अनुभव हो रहा है, मैं चाहता हूँ कि नींद आ जाये।

ट्रेन अपने-आप चली जा रही है और मैं अपने-आप अनुभव कर लेता हूँ····फिर लगता है मैं अपने बिस्तरपर लेटा हूँ, केवल धीरे-धीरे नीचेसे कोई लगातार उसे हिला रहा है।····एक बार तन्द्रामें लगा जैसे छायालोक-में कुछ आकृतियाँ घूम रही हैं, और इसी लोकसे मैं एक हल्के गुलाबी रंगसे आभासित पथपर आगे बढ़ रहा हूँ। पथके दोनों ओर लाल, पीले, नीले फूलोंसे गहगहाकर ढँके हुए पेड़ चले गये हैं। लगता है, जैसे उनसे सारा वातावरण विभिन्न रंगोंसे रंजित हो रहा है। इस अज्ञात अपरिचित यात्रामें मैं विचित्र सुखद अनुभूतिका अनुभव कर रहा हूँ।····एकाएक जागता हूँ, ट्रेन खड़ी है····मिर्ज़ापुर स्टेशन आ गया है, केवल अनुमानसे जान रहा हूँ। तीलियोंसे लेटे-लेटे अधिक कुछ दिखाई क्या दे सकता है! मुझे तन्द्राका स्वप्न याद आता है, मुझे लगता है, मेरी इस यात्राका मार्ग सुखद है, और इसमें होकर जिस घाटीसे भविष्यकी ओर जाना है वह किसी उज्ज्वल लोककी ओर ही जाती है। साथकी प्रौढ़ स्त्री उठती है, एक बार बच्चोंको सँभालती है, खड़ी होकर हल्की-सी अँगड़ाई लेती है, खिड़कीसे स्टेशनको झाँक लेना चाहती है। ट्रेन फिर सीटी देकर खिसकने लगती है, स्त्रीके मुखपर प्लेटफ़ार्मका प्रकाश पड़ रहा है। मैं बिलकुल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मौन देख रहा हूँ, उसके मुखकी छायासे लगता है उसके मनमें ऐसी निर्जीवता है जो उसको भावशून्य कर रही है। बिलकुल फ़्लैट फ़ेस—भावशून्य ही नहीं जड़ भी ! मुझे अजब-सा लगा, एकाएक जीवित मुर्देकी कल्पनासे मैं सिहर उठा और अपनी दृष्टि उसकी ओरसे हटा ली। आहट मिली, वह मुड़कर फिर अपने बिस्तपर आ गयी।

मेरे सामने वही फ़ेस उभर रहा है, मैं जितना ही उससे मुक्त होना चाहता हूँ, वह उतना ही मनको घेरता है। मैं अपनी विकलतासे मुक्ति पानेके ख़यालसे उठ बैठता हूँ और बाथरूम जाकर निवृत्त होता हूँ। लौटकर सुराहीसे पानी पीता हूँ। फिर अपने बिस्तरपर लेट रहता हूँ।.... किंचित् देर बाद मैं फिर उसी पूर्व तन्द्रामें डूब जाता हूँ। वही धूमिल वातावरण, हल्के रंगोंसे आभासित छायाभास....लगता है जैसे मैं कोमल-कोमल किसी नारीमूर्तिके साथ उसी पथपर जा रहा हूँ....मेरे मनमें अजीब उत्साह है, विचित्र उल्लास है। उस नारीमूर्तिकी निकटतासे मेरे रोम-रोममें-हर्ष छाया है....फिर एकाएक वह उसी छायालोकके रंगीन वातावरणमें विलीन हो जाती है, मेरा मन व्याकुल हो जाता है....जैसे वह छायापथ नहीं, मेरी कल्पनाकी घाटी है और मेरे हृदयपर यह सारी घाटीका वातावरण पत्थर-सा भारी होकर जमता जा रहा है। मेरा दम घुटने लगता है, जल्दी-जल्दी मैं पथरीले मार्गसे पहाड़ीपर चढ़ता जाता हूँ, इस घुटनसे बचनेके लिए ! बोझासे अपनी रक्षा करनेके लिए ! आकस्मिक रूपसे ऐसा मार्ग आ जाता है जो चारों ओरसे घिर गया है, निकलनेका कोई रास्ता नहीं है। ऊँचे पहाड़ी शिखरोंसे घिरे इस स्थलसे लगता है इन शिखरोंको पार कर पाना मानव-शक्तिकी बात नहीं है। नीचे झाँककर देखनेपर भी कहीं कोई मार्गका चिह्न नहीं....विशाल दुर्गम घाटी। अब न ऊपर चढ़नेकी गति और न नीचे उतरनेका अवसर। घने जंगल ऊपर झुके हुए हैं। भय और आतङ्कसे हृदयकी धड़कन तेज़ हो गयी है, पसीनेसे कपड़े तर हो गये हैं, मन जैसे डूबता जा रहा है....उसकी दृष्टि-पथपर बड़ी-बड़ी चट्टानोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संकीर्ण पथपर वही कोमल नारी मूर्ति दिखाई देती है, और उल्लाससे मेरे नेत्रोंमें धुँधला-सा अँधेरा छा गया····स्पन्दन बहुत तेज़ हो जाते हैं, एक-एक क्षण मूर्च्छाका क्षण जान पड़ता है।····आगेका मार्ग प्रशस्त हो जाता है, मैं ऊपर चढ़ता जाता हूँ····लेकिन वह मूर्ति कहाँ है, उसका तो कहीं संकेत भी नहीं। निरुपाय होकर उसी पथपर आगे बढ़ता जाता हूँ, बढ़ता ही जाता हूँ। फिर शिखर आ जाता है। वहाँ एकान्त शून्यमें वही नारी बैठी है, मैं उसके पास समीप जाकर बैठता हूँ और कुछ पूछ लेता हूँ—'तुम यहाँ ?'—'कौन ?' वह मृदुल-मृदुल मुसकराती है।

मैं जगा। मुझे अब भी लगता है जैसे रजनीगन्धाकी तेज़ महक आ गयी हो। यह मुगलसराय स्टेशन आ गया है, प्लेटफ़ार्मका हल्का-हल्का प्रकाश जालियोंसे आ रहा है। आभास मिलता है जैसे यात्री कम्पार्टमेण्टके सामनेसे निकल जाते हैं। अवस्थामें छोटी स्त्री एक बार उठती है और अपने बच्चोंको सँभाल देती है, किसी कारण प्रकाश करती है। सारे कम्पार्टमेण्टका स्वप्निल वातावरण ग़ायब हो जाता है। यथार्थका, बिस्तरों और सामानसे भरा कम्पार्टमेण्ट गोचर हो गया। स्त्री बाथ-रूमसे लौटकर पानी पीती है। और फिर प्रकाश बुझाकर सो जाती है। मुझे अब घनी नींद आ रही है—मैं चाहता हूँ कि ट्रेन जल्दी छूट जाय।

एकाएक जब मेरी नींद खुली, ट्रेन डेहरी-आन-सोन स्टेशनपर खड़ी है। कम्पार्टमेण्टके अन्य सभी यात्री गाढ़ी नींदमें सो रहे हैं। इतनी ही देरमें जैसे मेरी नींद पूरी हो चुकी है। अब सो नहीं सकूँगा, अगला स्टॉपेज ही तो रह गया है, कहीं मैं सोता ही रह गया ! स्टेशनोंपर जग तो जाता हूँ, फिर भी ! नहीं, यह भी कोई भयकी बात है, अभी घण्टोंकी देर है। लेकिन नींद नहीं ही आ रही है; मैं लेटा हूँ और जालीके बाहरका किंचित् आकाश मेरी दृष्टिमें आ रहा है।····आदमीके लिए यह सारा जीवन जैसे इसी जालीके अन्दर बन्दी है, उसकी दृष्टिकी सीमामें इससे अधिक आकाश आ ही कहाँ पाता है, और वह है कि इसी संकुचित आकाशको अपनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कल्पनासे कितना बड़ा विस्तार देता रहता है, उसमें कितने रंगों और आकारोंसे सृष्टि किया करता है।....मेरे सामनेके आकाशके टुकड़ेमें तारे चमक रहे हैं। तारे इतने धूमिल जान पड़े कि उनमें मन अटक नहीं सका। कम्पार्टमेण्टमें लैंटरिनके मोटे शीशेसे हलका प्रकाश आ रहा है, उससे धुँधला-सा सब कुछ दिख रहा है। एक बार मनमें ७१, टैगोर टाउनके बँगलेकी याद आ जाती है, उसके खुले और मुक्त आकाशकी लालसा जाग जाती है। इस समय आत्मन् गाढ़ी निद्रामें मग्न होंगे। मेरे मनमें तन्द्राका स्वप्नाभास अभी मिटा नहीं है। उसकी विचित्रतासे मन भर गया है, और आकाशकी वह झाँकी स्वप्निल हो उठती है। मनमें भाव आता है—यह आजकल क्यों मैं भविष्यकी कल्पना और कोमल आश्रयके लिए इतना आग्रही हो उठा हूँ। क्रमशः मन विचारनेका मार्ग खोज निकालता है। केशव, उनको मेरा पत्र तो मिल ही गया होगा, लेकिन न भी मिला हो! देहातका मामला ठहरा, यदि पत्र नहीं ही मिला होगा, तो क्या होगा? ताँगा नहीं आ सकेगा, और ६ मीलकी यात्रा! लेकिन वहाँके लिए रिक्शा तो मिल जाता होगा, एकाएक पहुँचकर केशवको चकित ही करूँगा। इस बार पहली बार उनकी पत्नी पूर्णाजीसे भेंट हो सकेगी, सम्भव है, और सम्भव है न भी हो सके। उनके परिवारमें मेरा जाना यह पहला तो नहीं है, पर मैं उनके परिवारमें माँ, चाची, बहनोंके लिए एक प्रकारसे अपरिचित ही हूँ। उनके परिवारका मुख्य ढाँचा ज़मींदारी वर्गका टिपिकल उदाहरण है, उसमें अभीतक स्त्रियोंकी स्थिति घरकी दीवारोंसे बाहर किसी प्रकार स्वीकार नहीं की गयी है। ऐसा नहीं है कि स्त्रियोंपर यह नियन्त्रण ऊपर-से आरोपित रह गया हो, क्योंकि उनके किञ्चित् आग्रहसे यह प्रतिबन्ध ग़ायब हो सकता है। पुरुषोंके मनमें नियन्त्रणका कोई आग्रह जैसा नहीं जान पड़ता है। लगता है शताब्दियोंकी परतन्त्रताने और युगोंकी परमुखा-पेक्षिताने उनकी मनोवृत्तिको ही संकीर्ण कर दिया है, उनके हृदय अनुदार हो गये हैं। यही कारण है कि यह परम्परा स्त्रियोंकी ओरसे ही अधिक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ढोयी जा रही है। घरके स्नेह और ममताके बीच एक प्रवासी यदि अपने मनको सिक्त कर हरा कर सकता है, तो उसे केवल इस परम्पराके कारण वंचित रहना होगा, यह कैसी आत्मीयता है? कई बार केशवके परिवार-के बीच हो आया हूँ, फिर भी यह प्रश्न इस बार मनमें उठा है। मेरा मन इस बार न जाने क्यों अधिक भावशील हो उठा है। मेरे मनमें इस प्रकार-के परिचय सम्बन्धोंके लिए कभी आग्रह नहीं रहा है। मेरा स्वभाव रहा है कि किसी वस्तुके प्रति आग्रह प्रकट करना अपने-आपको तुच्छ बनाना है, यह ऐसा मेरे स्वाभिमानके विरुद्ध है।

पर इस विषयमें किसी व्यक्तिका दोष हो, ऐसा नहीं लगता। यह हमारे समाज और उसकी परम्परा तथा रूढ़िका दोष है। यह विषय ऐसा भी नहीं है कि हम लोग विद्रोह कर सकें। कोई अपने परिवारके लोगोंको किसी प्रकारके व्यवहारके लिए विवश या प्रेरित भी नहीं कर सकता। परिचय, आत्मीयता, स्नेह भी कहीं आग्रहसे, विवशतासे और विद्रोहसे पैदा किया जा सकेगा! यह स्वयंके विचारने और अनुभव करनेकी बात है! इसके लिए वातावरण बदलना होगा, हृदयोंको उन्मुक्त बनाना होगा, साथ ही अपने दृष्टिकोणको स्वस्थ बनाना होगा। उसी दिन कौशल्या भाभी (श्रीमती अश्कजी) कह रही थीं—'मैं तो यहाँकी स्त्रियोंसे डरती हूँ। मैं देखती हूँ उनकी टीका-टिप्पणीसे बचना बेहद मुश्किल है। किसीके साथ उठते-बैठते बातचीत करते वे क्या कहने लग जायँगी, इसका कोई ठिकाना नहीं।' मैं क्या उत्तर देता उस दिन। जहाँसे आयी हैं वहाँका वातावरण अपेक्षाकृत अधिक उन्मुक्त है। हमारे समाजकी स्त्रियाँ तो अधिक रूढ़ि और परम्परासे बँधी हैं, ऐसी स्थितिमें यदि सहज स्नेह सम्बन्धोंकी स्थितिका वातावरण नहीं बन पाता तो कोई आश्चर्य नहीं।

अपनी गतिसे ट्रेन चली जा रही है, और मैं उसके प्रति सचेष्ट नहीं हूँ। मैं सोच रहा हूँ कि मैं केशवके परिवारमें जा रहा हूँ। कितना अच्छा है, कितना सुखद है! हम दोनों जब अकेले रहते हैं तो सारा समय सुख-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कल्पनाओंमें बीत जाता है। कभी-कभी तो बातचीतमें समय कब कहाँ बह जाता है, इसका पता ही नहीं चलता। फिर इस बार तो परिवारमें जा रहा हूँ—कितने छोटे भाई होंगे, लाल बाबू, सोमा, महेश्वर, आशू (वह शायद अपने ननिहाल मसनोडीह गया है), केशवकी पत्नी पूर्णा, माँ, चाची, बहनें। इतने बड़े परिवारके बीच रहनेका अनुभव कैसा होगा ? मेरा परिवार भी बड़ा है, पर नौकरीपेशा लोगोंका एक साथ रहना कब हो पाता है। फिर माँ तथा पिताजीके बाद हम सब बिखर गये हैं, हमारे बीच-का सूत्र नहीं रहा है। केशवकी पत्नी पूर्णासे मेरी यह पहली भेंट है, मैं विवाहमें नहीं गया था, भीड़भाड़से मुझे अरुचि है। केशवने उनकी तारीफ़ की है—अच्छी, भली तथा स्नेहशील लड़की है। इसलिए भी मैं सन्तुष्ट था कि उनके बीच मेरा स्थान सुरक्षित है। मित्रकी यह चिन्ता सहज है।

मैं विचार-प्रवाहमें बहता जा रहा हूँ, कभी आँखें खोल लेता हूँ और कम्पार्टमेण्टके धूमिल प्रकाशके रहस्यके बीच अपनेको पाता हूँ। मैं अनुभव करता हूँ जैसे मेरा यह सारा प्रवास किसी रहस्यलोकमें बीतेगा और यह उसीकी भूमिका है। विविध गन्धें, विचित्र रूपाकार और गहन संवेद-नाएँ जैसे घेरने लगती हैं। यह सब मोहक है, पर यह मेरे अस्तित्वको भुला देने वाला भी है। एक बार लगता है, कोई सतर्क कर रहा है। इस मोह-में डूबनेके पहले मुझे अपने-आपको उबार लेना ही है।....मैं जालीसे झाँकते हुए आकाशको देखता हूँ, उसमें दो तेज़ तारे चमक रहे हैं। सहस्र-सहस्र तारोंके बीचमें दोनों कितने अकेले जान पड़ते हैं, और ये एक दूसरेके सामने होकर भी एक दूसरेसे कितने दूर हैं। मन उदास हो जाता है, वे जैसे मेरे मनमें व्यक्तित्व ग्रहण करते जान पड़ते हैं। एकाएक मेरे सामने बुल्केजी-की कल्पना आ जाती है। उनका मेरे प्रति सहज प्रेम ! मेरे लिए वह अमूल्य निधि है। पर उनको क्या मिलता होगा, उनको मेरे प्रति ऐसा यह भाव क्या दे सकता है। स्नेहमें ऐसा हिसाब नहीं होता है, पर कोई आधार भी होना ही चाहिए। अनायास ही, अकारण ही यह निधि मुझे मिल सकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है ? कभी मैं स्वयं चकित होता हूँ उनके इस भावसे । ....बुल्के भाई मेरी तरह ही क्या हज़ारीबाग़में मेरे साथ रहनेके लिए उत्सुक हो सकते हैं ? वे संन्यासी हैं, उन्होंने जगत्की ममता छोड़ी है । घर-द्वार छोड़ा है । वे क्या किसी अन्यके लिए, मेरे लिए इस प्रकारका भाव रख सकते हैं ?

ट्रेनने किसी स्टेशनको पार किया है, और मेरे ध्यान-केन्द्रमें पुनः केशव-का घर आ गया है । गया आनेमें एक घण्टेसे कम देर रह गयी है । कुछ ही घण्टोंमें केशवके परिवारके बीच पहुँच जाऊँगा । केशवके चाचाजी, छोटे बाबू हुए तो काफ़ी रोचक प्रसंग रहेंगे । दो-तीन दिन बितानेके लिए वे अकेले ही काफ़ी हैं । उनके ज़मींदारीके संस्कार तथा उनकी आदतें स्वयंमें रोचक हैं, केवल किंचित् सहनशीलतासे काम लेना चाहिए और उनके प्रति निरपेक्ष दृष्टिकोण बनाना आवश्यक है । जो उनके चरित्रके प्रति असहिष्णु रहेगा, वह उनसे रस ग्रहण नहीं कर सकेगा । पर मैं समझ लेता हूँ कि यह वर्ग रहा है और अब मिट रहा है, पर वह अपने युगोंके संस्कारोंको छोड़ सकनेमें असमर्थ है । क्यों न इस वर्गको समीपसे देखकर उसके गुण-दोषका अनुभव प्राप्त किया जाये । इस असम्पृक्त दृष्टिसे रस ग्रहण करना सहज हो जाता है । छोटे बाबूको यदि अपने कचहरी मुकदमोंसे छुट्टी है तो फिर उनसे छुट्टी पाना मेरे लिए कठिन हो जायेगा । केशवको यह अधिक पसन्द नहीं है । वह चाचाजीसे केवल 'हाँ हूँ' में बात कर लेते हैं, और मैं जो उनसे अधिक बात कर लेता हूँ, उसके विषयमें वह आश्चर्य करते हैं । पर मुझे उनकी बातचीतमें, उनके व्यवहारमें एक मिटती हुई परम्पराका आभास मिलता, उसके स्वर सुनाई देते, उसके चरित्रका 'डिकेडेण्ट' रूप गोचर होता । केशवको अपना यह मनोभाव किस प्रकार बता सकता हूँ !

मैं अपने मनके ऊहापोहमें उलझ रहा हूँ कि बाहर प्रकाशका आभास मिलता है, जैसे आकाशकी दिखाई देनेवाली रेखामें प्रकाशकी धारा प्रवाहित होने ही वाली हो, तारे जाने कहाँ लुप्त हो चुके हैं । लालिमाका आभास भी मिलने लगा है । मैं समझ रहा हूँ, प्रभात होनेवाला है और अब गया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी निकट है। उठकर बैठता हूँ, निश्चय ही उजाला हो रहा है। मैं अपना बिस्तर ठीक करता हूँ। होल्डालके स्ट्रेप आत्मन्ने डोलचीमें डाल दिये थे और वह दूसरी ओर रखी हुई है। मैं संकोचमें होल्डाल लपेटकर ही प्रतीक्षा कर रहा हूँ, सोती हुई स्त्रियोंके बीचसे अपनी टोकरी उठानेका साहस नहीं कर पा रहा हूँ। बाहर जालीसे देखकर यह अन्दाज़ लगा रहा हूँ कि गया अब कितनी दूर है····ट्रेन स्टेशनके यार्डसे गुज़र रही है, अब प्लेटफ़ार्मपर धीरे-धीरे रुक रही है। मुझे याद नहीं कि गया स्टेशन कैसा है, मनमें एक बार द्विविधा भी होती है। मैं दरवाज़ा खोलकर बाहर जाना चाहता हूँ, पर खोल नहीं पा रहा हूँ, उसकी निचली सिटकिनी जो बन्द है। मैंने छोटी स्त्रीको जगाकर सिटकिनी खोलनेकी प्रार्थना की। वे सम्भ्रान्त महिला हैं, मुझे लगता है। उन्होंने दरवाज़ा खोला और पूछा भी कि क्या आप यहीं उतरिएगा। मैं धन्यवाद देता हूँ और हाँ कह देता हूँ। मेरे संकोचके कारण शायद उन्होंने मेरा धन्यवाद न भी सुना हो, मैं अपने संकोचके लिए लज्जित हूँ।

मेरी बोगी अन्तमें है, इस कारण कुली भी इधर नहीं दिखाई दे रहे हैं। मैंने आगे बढ़कर सिपाहीसे पूछकर निश्चित किया कि यही गया स्टेशन है, और एक कुली भी बुलाता हूँ मैं। कुली की सहायतासे होल्डाल बँधवा ही रहा हूँ कि एक सज्जन प्रवेश करते हैं और मेरे ऊपरकी बर्थको खोलने लगते हैं; वह बर्थ अब तक खाली होनेके कारण ऊपर टँगी हुई रही है। मैंने उनकी शीघ्रतामें बाधा पहुँचाते हुए उन्हें आश्वासन दिया कि मैं उतर रहा हूँ और वे सुविधापूर्वक मेरी सीटपर ही आराम कर सकेंगे। मेरा पहलेसे निश्चय है कि मैं विश्रामगृहमें ६॥ बजे तक रुककर शौचादिसे निवृत्त होऊँगा, फिर ताँगेकी इन्तज़ार करके चलूँगा। कुलीसे साढ़े छः बजे आनेको कहकर विश्रामगृहमें सामान रखवाया। और अब मैं सोच रहा हूँ कि आगे किस प्रकार बढ़ना है; यात्राकी एक मंजिलपर मैं पहुँच गया हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्राम और विस्मरण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ३ :

गया स्टेशनके वेटिंगरूममें मैं किसकी प्रतीक्षामें हूँ ? मैं अपने मित्र केशवको जानता हूँ, इधर वर्षोंसे उनसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। रातके एक-दो बजे तक वे बिना किसी कष्टके जाग सकते हैं, पर सुबह सात बजे भी जागनेकी बात उनके लिए अत्यन्त कष्टकी हो सकती है। फिर सुबह छः बजे किसीको पाँच-छः मील लेने आनेके लिए तो चार बजेसे ही उठना होगा ! लेकिन मैं उनकी नहीं, अपने लिए भेजी गयी सवारीकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।....मरदाने वेटिंगरूममें एक सज्जन मेरे ही साथ आ गये हैं, शायद मेलसे ही उतरे हों। वे अपने-आपमें व्यस्त हैं, और मेरे पास कोई काम नहीं है। मैं शौचादिसे निवृत्त हो चुका हूँ, और स्नान करनेके बाद पुनः यात्रा करनेका मेरा मन नहीं है। मैं देख रहा हूँ, वे सज्जन ठीक विधिसे सब कुछ कर लेना चाहते हैं। 'शेव' से उन्होंने जो प्रारम्भ किया, तो स्नानके बाद पफ़-पाउडर तक सब यथाविधि चलता रहा है। इस बीच कितनी बार बालोंमें कंघी चलायी गयी, धोती और कुरतेकी मुर्री और चुन्नट ठीक किया गया....अन्तमें जैसे उनकी मुद्रासे लग रहा है कि वे अब तैयार हैं, अब वे किसीपर भी विजय पा सकते हैं। निश्चय ही किसी कुलीन परिवारके ज़मींदार-पुत्र होंगे....पर मेरा मन न जाने कैसे दयाके भावसे भर गया कि यह सब जब नहीं होगा, इस प्रकार जब जीवनकी गति श्लथ नहीं रहेगी....तब क्या होगा, इनका क्या होगा ?

मेरा कुली सात बजे आनेको कह गया है, उसके इस कहनेमें भाव था कि वह आनेवाली अन्य ट्रेनोंको देख सकेगा। और मेरा भाव था कि इस प्रकार मैं पर्याप्त प्रतीक्षा कर चुकूँगा। लेकिन कुली साढ़े छः बजे हाज़िर हो जाता है। उसे शायद कोई अन्य सवारी नहीं मिल सकी है। मैं पहले

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही देख चुका हूँ कि ताँगा नहीं आ सका है, अब मुझे रिक्शेपर ही उतनी दूरकी यात्रा करनी होगी। मेरे मनमें इन रिक्शावालोंके प्रति एक आतंक रहता है, मुझे लगता है कि इनके रेट्सकी कोई सीमा नहीं है, क्योंकि प्रत्येक सीमापर असन्तुष्ट रहनेका इनका विचित्र स्वभाव होता है। और मुझे रिक्शापर सवार होना वैसे ही क्लेशकर लगता है, फिर यदि वह व्यक्ति असन्तुष्ट रह गया तो मुझे न जाने कैसी बेचैनी-सी लगती है। प्रयागमें रिक्शा मेरे आनेके बाद ही प्रारम्भ हुआ था, और कई वर्ष तक मैं सिद्धान्ततः उसपर नहीं बैठा। ऐसा निभ भी गया, क्योंकि प्रारम्भमें वह एक्कासे सस्ता नहीं था। तब तक बनारसमें रिक्शाने एक्केको पदच्युत कर दिया था। मुझे याद है, मैं बनारस केशवके यहाँ पहले-पहल गया हूँ, एक प्रकारसे बनारस आठ-दस वर्ष बाद। स्टेशनके बाहर रिक्शोंके मेलेमें मैं एक्का खोजता रहता हूँ, केशव कहते हैं—"भई, मैं तो सामान लेकर चलता हूँ, तुमको जब एक्का या ताँगा मिल जाय तब आ जाना।" मैं विवश होकर उनके साथ हो लेता हूँ।

मैं कुलीके सिरपर सामान लदवाकर जब बाहर निकला तो भाग्यसे ऐसे रिक्शेवालेके पास कुली ले जाता है जो सहबाजपुर आता-जाता रहता है। उसने तीन रुपयेकी माँग की, और मैंने वहाँ चलकर जो बाबू लोग कहेंगे वही देनेका वादा किया। बात तै हो गयी। वह रास्तेमें कच्चे रास्ते-की कठिनाइयोंकी गाथा प्रस्तुत कर अपने दाम अधिक-से-अधिक निश्चित करवा लेना चाहता है। पर मेरा ध्यान हिन्दुओंके प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान गया नगरीकी ओर है, देखनेकी उत्सुकता है कि यह कैसा है? नगरकी एक ही सड़कको पार करनेके बाद मैं समझ गया कि पितरोंकी पापमोचनी इस नगरीमें पापोंका समस्त कल्मष और गन्दगी एकत्र है जो इस बातका विश्वास दिला सकती है कि पितरोंकी मुक्ति यहाँ आनेके बाद एक प्रकारसे निश्चित है। मैंने यह भी देखा कि यहाँकी पक्की सड़कें हमारे टैगोर टाउनकी उन सड़कोंको मात करती हैं, जिनपर रिक्शावाले आनेमें प्रायः आनाकानी करते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं। फिर मैं इस रिक्शावालेकी बात भी सोचता हूँ कि यह किस कच्ची सड़ककी चर्चा कर रहा है ?

मनमें थकान शहरके चारों ओरकी गन्दगीसे और भी बोझिल हो उठती है और फिर कुछ देखने-सुननेकी इच्छा भी नहीं हो रही है। हम शहरसे बाहर एक पहाड़ीकी ओर बढ़ रहे हैं। सामने कलकत्ता जानेवाली रेलवे-लाइनका फाटक पन्द्रह मिनट तक हमारे रिक्शेको रोक लेता है। एक माल-गाड़ी बहुत मन्द मन्थर गतिसे निकल जाती है और फिर वह फाटक खुलता है। अब हमारा रिक्शा, सामनेकी पहाड़ीको एक ओर छोड़ती हुई सड़कपर आगे बढ़ रहा है। इस पहाड़ीको नगरके पास रहनेका पर्याप्त दण्ड मिल रहा है, यह मैंने अनुभव किया। उसके कितने ही पार्श्व नग्न हो चुके हैं, उसकी सारी चट्टानें नगरके लिए निकाली जा चुकी हैं और रेलवेके पत्थरों-के लिए कंकड़ तोड़े जा चुके हैं।....यही पहाड़ी है जो किसी समय अपनी रमणीय हरियालीसे नगरके विनोदी और ऐश्वर्यप्रिय नागरिकोंको आकर्षित करती होगी, इसके कुञ्जोंमें उनके विहारके स्थल चुने जाते होंगे।....बादमें केशवने बताया, ऐसा नहीं है कि आज उस युगकी भावना बिलकुल मिट गयी हो ! अब भी विशेष प्रकारके प्रेमी-प्रेमिकाओंकी क्रीड़ाभूमि यह पहाड़ी बनी हुई है, हाँ चिन्ता तबकी है जब यह पहाड़ी विलीन हो जायगी।....पर उनका कहना है कि न किसी युगमें जीवनका उल्लास कम हुआ है और न कभी आगे कम होने जा रहा है। शायद उनकी बात ठीक है।

आगे कुछ और बढ़नेके बाद दूसरी अधिक ऊँची पहाड़ी निकट आती जा रही है, रिक्शावाला बतलाता है यही प्रेतशिला है और यहींसे सहबाज-पुरके लिए कच्ची सड़क जाती है जो एक तरहसे बाबूसाहब लोगोंके घर तक ही गयी है। वह अब भी अपने किरायेकी दृष्टिसे सब कुछ देखना चाहता है, पर मेरे मनमें प्रेतशिलासे और कल्पनाएँ दौड़ने लगती हैं। यही स्थल है जहाँ पितरोंको पिण्ड देना अत्यन्त आवश्यक है, यहाँ यदि पिण्ड न दिया गया तो सब कुछ बेकार हो जायेगा। वैसे यह पहाड़ी निकटसे हरी-भरी सुन्दर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिखाई पड़ रही है। आठ-नौ सौ फ़ीट ऊँची यह छोटी-सी पहाड़ी सड़कके बिलकुल सामने खड़ी जान पड़ती है, और लगता है कि आगेका मार्ग अवरुद्ध है। उसपर हरियालीके बीच-बीचमें नंगी चट्टानें व्यक्त हो रही हैं। निकट आनेसे पहाड़ीके नीचेका आश्रम और तालाब दिखाई देता है।....अब रिक्शा पहाड़ीका चक्कर लगाता हुआ मोड़ ले रहा है, पर पक्की सड़क छूट गयी है। अब हम पहाड़ीको बाईं ओर छोड़कर खेतोंके बीचके कच्चे रास्तेसे आगे बढ़ रहे हैं, मैं समझ रहा हूँ कि रिक्शावालेका कहना ग़लत नहीं था। पैरसे खींचना क्रमशः असम्भव हो गया और वह नीचे उतरकर हाथोंसे उसे खींचने लगा। मैंने उसे रोककर उतर जानेको कहा, इसपर उसे आश्चर्य हुआ; उसका कहना है ऐसा तो सदा होता है, बाबू लोगोंको वह सदा ऐसे ही खींचता रहता है। मुझे उसको यह समझानेमें काफ़ी दिक़्क़त हुई कि मैं उन बाबुओंकी जातिसे भिन्न जातिका प्राणी हूँ और मेरे लिए इस प्रकार सामान-सहित रिक्शापर बैठे रहना और एक मानव प्राणीके द्वारा खींचे जाना सह्य नहीं हो सकता।

उसकी मुद्रासे लगा कि यदि तुम नहीं ही मानते तो हमारा क्या दोष है? और उसने बातोंको घुमा-फिराकर यह भी प्रकट कर दिया कि इस प्रकार पैदल चलनेपर भी उसके श्रममें, समयमें कोई फ़रक नहीं पड़ता, इस बातका ख्याल भाड़ा देते समय रखा जाये। अब तक मैं उसके भाव-केन्द्रको समझ सका हूँ, वह केवल अपने किरायेको किसी प्रकार सिद्ध करनेके प्रयत्नमें है। मैंने उससे यह कहकर छुट्टी पा ली—सचमुच इधरका रास्ता तो बेहद खराब है और तुमको बहुत मेहनत पड़ेगी। इस इतनेसे आश्वासनके बाद फिर वह मौजी जीव हो गया। प्रेतशिलाके पीछेवाले पुलको पारकर रिक्शा आगे धानके कटे हुए खेतोंके बीच ऊबड़-खाबड़ कच्ची सड़कपर खींचा जा रहा है और मैं ऊपरकी मेड़ोंके सहारे आगे बढ़ रहा हूँ। रिक्शावाला तरंगमें आ गया है, वह इधरके क़िस्से सुना रहा है, वह अपनेको पछाँहका बताता है, और यह जानकर कि मैं सुलतानपुर रहा हूँ,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुझसे सन्निकटताका अनुभव कर रहा है।—'बेला और कम्पू कौउन अन्तर, सब एक्कई समुझौ। ओहरकै बातइ औउर हैं भइया। हियन वालेन कै न पुछउ, कहइ क तौ सबै बाबूसाहबै हैं, पै पइसा निकासइमाँ अबे-तबे होइ लागत हैइ। पहिनइ ओढ़इ म तौ सौखीनी बहुत है, पै जो खाइ पियइ म कहउ तो हाँ मास दारु मा इनकर जिउ बसत हैइ।' पर मेरा मन उसकी बातमें नहीं लग रहा है, यह वह अनुभव करता है। वह समझता है कि उसकी बात हलकी जा रही है। तब वह कांग्रेस राज-की चर्चा करना शुरू करता है, शायद यह समझकर कि पढ़े-लिखे लोगोंमें इसका प्रचार है, मैं स्वयं खद्दर जो पहनता हूँ। 'भइया ई कांगरेसी राजके आयेका काउनउ फायदा भवा। हम पंचन माँ तौ अस अकिल नहिन हैइ, पै कछु जानि तौ परति नाहिन। तू सबै पढ़ा-लिखा मनई आउ, कौनउ फाइदा तौ समुझतिइ हुइ हौउ।....पै हम पंचनका तौ औरिउ बेइमानी कय बढ़ती जानि परति हैइ।'

मेरे हारे थके मनमें इस प्रकारकी राजनीतिक चर्चाका भी कोई आकर्षण नहीं जाग सका। मैं अपने-आपमें डूबकर विश्राम कर लेना चाहता हूँ, फिर भी इस अपने देशके आत्मीय व्यक्तिको मैंने निराश नहीं किया और समझानेका प्रयत्न करता हूँ कि सभी काम धीरे-धीरे ही होते हैं। वह मेरे अन्यमनस्क उत्तरसे बहुत सन्तुष्ट तो नहीं लगा, पर मुझे अपने-आपमें व्यस्त रहनेकी छूट उसने अवश्य दे दी। अब मैं देख रहा हूँ कि हलके उतार-चढ़ावके साथ यह मैदान चला गया है जिसको एक छोटी-सी नदी बीचसे कई स्थलोंपर मोड़ लेते हुए काटती है। लगभग सारे खेत कटे हुए पड़े हैं जिनमें लगी हुई पयालकी जड़ोंसे लगता है कि अधिकांश धानके ही खेत हैं। बीच-बीचमें कहीं-कहीं गेहूँके विरले खेत दिखाई दे जाते हैं। इस समय हरियाली कहीं-कहीं ही दिखाई देती है, शायद ऊखका रिवाज़ इधर नहीं है। इस सपाट और ऊजड़ लैण्डस्केपमें खजूर और ताड़के ऊँचे-ऊँचे पेड़ बहुत सुन्दर जान पड़ते हैं। पता नहीं क्यों इस भागमें अन्य भारी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पेड़ोंका प्रायः अभाव लग रहा है। इस क्षेत्रके विस्तारमें आँखोंके लिए आधार केवल ये ताड़ और खजूरके पेड़ हैं।

मील-डेढ़ मील सीधे चलनेके बाद हम दाहिनी ओर मुड़ गये, वास्तवमें यह कच्ची सड़क स्वतः ही हमको इस ओर मोड़ती है। अब एक मीलके अन्दर ही सहबाजपुर है, उसका आभास मिलने भी लगा है। इधर कुछ गाँवके आदमियोंको नगरकी ओर जाते भी देखा और कुछ किसानोंको खेतोंमें पानी देते भी देखता हूँ। शायद ककड़ीके खेत हों या सब्ज़ी आदिके खेत भी हो सकते हैं, नगर यहाँसे दूर नहीं है। हम घरके पास पहुँच रहे हैं और इसी समय सामनेसे ताँगा दिखाई देता है, निश्चय ही केशवका ताँगा है। उसपर चाचाजी (छोटे बाबू), केशव और सोमा (केशवका चचाज़ाद छोटा भाई) शहर जा रहे हैं। केशव मुझे देखकर विवशताके भावसे भर जाते हैं, जैसे फँस गया हूँ, माफ़ करना। छोटे बाबू ताँगेसे ही कहते हैं—'हम ज़रूरी कामसे गया जाते हैं, लेकिन रघुवंशजी, बस तुरत ही लौटते हैं। लाल बाबू घरपर हैं।' मैं छोटे बाबूके तुरतका अर्थ समझता हूँ, उनसे और इस सारे घरसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। पर क्या चिन्ता है, इस घरमें लड़के और नौकर मुझे पहचानते हैं और मेरा आदर-सम्मान भी करनेमें कसर नहीं रखते। मैं बनारसके अतिरिक्त यहाँ भी तो आ चुका हूँ।

घर पहुँच ही गया। घर छोटी-मोटी कोठी ज़रूर लगता है। विशेषकर फाटक आदिसे। फाटक खोला गया और मेरे रिक्शेने प्रवेश किया। लाल बाबू (केशवका चचाज़ाद भाई) मेरे स्वागत-सत्कारके लिए प्रस्तुत मिले। पोर्टिकोमें सामान उतारा गया और लाल बाबूने आग्रहपूर्वक रिक्शेके पैसे भी मुझे नहीं देने दिये। मुझे केवल इस बातका संकोच रहा कि मैं रिक्शेवालेको रुपया-आठ आना जो ज़्यादा दे सकता, वह उसे नहीं मिल सका, फिर भी वह प्रसन्न ही जाता है। लाल बाबू मेरा सारा प्रबन्ध कर रहे हैं, इस बातसे मुझे प्रसन्नता और आश्चर्य दोनों ही है। बाबू साहबोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नयी शिक्षा प्राप्त करनेवाले लड़कोंमें एक विचित्र प्रकारका संस्कार विकसित हुआ है, उनमें न पुराने अभिजात संस्कार ही पूरी तरह हैं और न नये युगके अनुकूल संस्कार पड़ सके हैं। उनमें अहंमन्यता और अशालीनताका अद्भुत संस्कार जन्मा है। केशव स्वयं इसके अपवाद तो हैं ही, साथ ही अपने वर्गके इन विद्यार्थियोंका कैरीकेचर उतारनेमें भी सिद्धहस्त रहे हैं। वह सुनाते—'हमारे बाबू साहब लोगोंके कई सुपुत्र यहाँ इलाहाबाद विश्वविद्यालयमें पढ़ने आये हुए हैं। रघुवंशजी, उनकी हालत ग़ैर है। साथमें एक बिहारी नौकर होस्टलमें रहता है। वह पाखानेका लोटा साथ लेकर चलता है, और बाबू साहबके बाहर निकलते ही आगे बढ़कर हाथसे ले लेता है। तुमको विश्वास नहीं होगा, बाबू साहब कुरसीपर बैठ जाते हैं और नौकर उनके हाथमें मिट्टी लगाता है, हाथ धुलाता है। यही नहीं, नौकर ही धोती चुनकर हाथोंमें पकड़ा देता है, वह केवल बाँध भर लेते हैं····रघुवंशजी, एक दिन मैं मिलने गया। पानी माँगा तो बाबू साहब नौकरको आवाज़-पर-आवाज़ देते रहे। नौकरने आकर कमरेके कोनेसे सुराही निकालकर पानी दिया। मैंने बादमें कहा आपने पुकारनेका कष्ट व्यर्थ ही किया, मुझसे कह देते, मैं पानी स्वयं पी लेता। लेकिन इन बाबू लोगोंको यदि तुम शामको सिविल लाइन्समें देखो तो इनकी सूट-टाई देखकर पहचान भी न पाओगे····।'

लाल बाबूके उत्साह और उनकी शिष्टताको देखकर मुझे विशेष सन्तोष हो रहा है। लेकिन बादमें ज्ञात हुआ कि हालमें किसी घटनाके फलस्वरूप इनको केशव भाई और छोटे बाबू दोनोंकी ओरसे काफ़ी भर्त्सना मिली है। साथ ही केशवने उन्हें विशेष रूपसे सहेज भी दिया है। एक घण्टेके अन्दर मैं नहा-धोकर स्वस्थ हो गया और फिर मैं चारपाईपर पड़ते ही सो जाता हूँ।

रातकी यात्रामें यदि मेरी सीट निश्चित हो तब भी ठीक तरहसे मुझे नींद नहीं आती। कुछ लोगोंका कहना है कि ट्रेनके हिलनेसे उनको झूला-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में झूलते हुए सोनेका सुख मिलता है। पर मुझे लगता है जैसे कोई हिला-हिलाकर जगाता रहता है। जब तक नीरव शान्ति न हो मुझे गहरी नींद कभी नहीं आती, और इस स्वभावका अभिशाप मुझे यात्राओंमें झेलना ही पड़ता है। मैं पिछली रात यात्रामें ठीक सो नहीं सका हूँ, इसी कारण गहरी नींदमें सो गया। बीचमें आभास मिलता है, कुछ खटर-पटर हो रही है। लगता है जैसे कोई आया है, पोर्टिकोमें उतरा है। फिर कोई कुछ कह-सुन रहा है। मैं पूरी तरह जगा नहीं हूँ, मुझे कोई पुकारकर जगाता है। बाहर छोटे बाबूकी आवाज़ आ रही है। मैं प्रकृतिस्थ होकर कमरेके बाहर आता हूँ, और उनको नमस्कार करता हूँ। वह कह रहे हैं—'आइए रघुवंशजी, मैं तो बराबर जल्दी कर रहा था, लेकिन शहर जाकर देर हो ही जाती है। हम बराबर सोच रहे थे कि आप आये हैं और हम लोग शहर चले आये हैं। लेकिन काम ऐसा ही ज़रूरी आ पड़ा, जिसको करना ही था। जब कचहरी पहुँचे तो मालूम हुआ आज 'किंग्स वर्थ डे' है, रुपया जमा नहीं हो सकता। बच्चा (केशव) के साले जयाजी आनेवाले थे, सो मैं बच्चाको छोड़ आया कि तुम टैक्सी करके चले आना। और हम स्वयं सीधे चले आये कि देखें रघुवंशजी घरपर अकेले होंगे।'

मैं देख रहा हूँ, चाचाजी (छोटे बाबू) मेरी ओर इस बार अधिक आकर्षित हैं, कारण समझ नहीं पा रहा हूँ। मैं उनके ध्यान-केन्द्रमें हूँ, वरना वे मुझको लेकर इस प्रकार उत्सुक नहीं होते। वे इस वर्गकी मिटती हुई परम्पराके एक विशिष्ट और रोचक व्यक्ति हैं। उनमें अपने वर्गके गुणों और दुर्गुणोंका समन्वय है। अपने कमरेकी ओर ले जाते हुए मुझसे वे कह रहे हैं—'हम चाहते हैं कि आपका परिचय घरकी स्त्रियोंसे हो जाये, जिससे यह तो न हो कि आप आयें और बाहर प्रतीक्षा करते रहें।' मैंने संकोचवश कहना चाहा—'चाचाजी, मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ, लाल बाबू तो थे ही।' पर वे जब कुछ कहने लगते हैं, उस समय जैसे अपने-आपसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही कहते जाते हों। वे कह रहे हैं—'आप तो घरके ही हो, जैसे बच्चा वैसे आप। घरके लोगोंको जानना ही चाहिए। मैं तो आपको रघुवंश-जी, याद ही कर रहा था।' मैं कमरेमें बैठ जाता हूँ, और वह टहल रहे हैं। उनका स्वभाव है जब वह किसी उत्तेजनामें होते हैं, टहलते हुए, सोचने हुए-से बात करते हैं, इसी बीच बच्चोंसे मौसी (माँ) को बुला लानेके लिए भी कह देते हैं। फिर वह चिन्तनकी तरंगमें अपने-आपसे जैसे कहते जा रहे हों—'इधर रघुवंशजी, मैंने 'बाणभट्टकी आत्मकथा' पढ़ी, और मान गया कि पण्डित हजारीप्रसाद बहुत बड़े विद्वान् हैं। आपने उसके बारेमें कहा था, सो हमने उसे बच्चासे मँगवाकर अभी पढ़ा। पहले तो, सच बात है, पढ़कर बहुत क्रोध आया कि यह कैसी कथा है, जिसमें आगे सबके बारेमें अन्धकार है। लेकिन बादमें जब ध्यान दिया तो लगा कि पण्डितजीने जो लिखा है—बाण बण्ड कहलाते थे—सो बण्डका अर्थ लिखा है कि जिसका अंग बीचसे भंग हो, न पूरा हो, न पूरा भंग ही हो। और उसी प्रकार उन्होंने बाणकी कथाको भी बण्ड ही रखा है। पर और चरित्रोंको भी बण्ड क्यों रखा है, यह उनसे मुझे पूछना है। कभी उनसे मिलना हुआ तो अवश्य पूछूँगा।'

इसी प्रकार वह अपने-आपमें तन्मय उसी बातपर एकाग्र होकर 'बाण-की आत्मकथा'की आलोचना करते जा रहे हैं। मैं अपने-आपमें चकित हूँ, वह इतनी गम्भीर-पुस्तकसे किस प्रकार इतने प्रभावित हैं, निश्चय ही इनकी संवेदन शक्ति अधिक तीव्र है। यह कथा बराबर चलती रही, और मैं बीचमें 'हाँ' 'ना'के अतिरिक्त कह कुछ नहीं पा रहा हूँ। बीच-बीच-में कालिदास, भवभूति, भर्तृहरिके काव्यकी चर्चा भी चल रही है। छोटे बाबू भावविभोर मनःस्थितिमें संस्कृतके कवियोंकी कल्पना और कोमल भावशीलताकी चर्चा करते रहते हैं—'रघुवंशजी, कालिदासकी कल्पनाके सामने आजके कवि क्या ठहरेंगे। मेघदूतकी सारी कथा कितनी कोमलता-के साथ कविने उठायी है। रामगिरि पर्वतपर विरही यक्षकी कल्पना ही यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सिद्ध करती है—**'प्रीतः प्रीतप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार'**। क्या कल्पित अर्घ्यके साथ यक्ष प्रस्तुत किया गया है, और कविने वाह कैसा स्वागत करवाया है। और उसके प्रशंसात्मक वचन भी क्या हैं—**'जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः'** बादलको कामरूप कहकर क्या व्यंजना की हैं। बादलके साथ कविने कैसी सहृदयताका परिचय दिया है—**'त्वां कस्यांचिद्भवनवलभौ····सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्यः'** बिजलीको पत्नीके रूपमें कहना महाकवि कालिदासके अतिरिक्त अन्यके लिए सम्भव नहीं था। फिर यह कहना कि मित्रके कार्यके लिए बिना विलम्ब चल पड़ना, कितनी चतुराईकी युक्ति है।····और रघुवंशजी, आपने तो प्रकृतिपर रिसर्च की है, आप जैसे विद्वान्के सामने हमारे जैसे अनपढ़ोंकी राय ही क्या? लेकिन हमारी समझमें भवभूतिके 'उत्तररामचरित'में जैसा प्रकृतिका वर्णन है, वैसा अन्यत्र नहीं मिलता। जनस्थानके वर्णनमें दण्डकवनका कैसा चित्रण है। शब्दोंके द्वारा कैसा चित्र सामने आ जाता है—**'कण्डूलद्विपगण्डपिण्डकषणोत्कम्पेन····कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः'** फूलोंकी वर्षासे गोदावरीकी अर्चा करनेवाले वृक्षोंका कैसा चित्र कविने उपस्थित किया है, और उन वृक्षोंके साथ कबूतरों तथा कुक्कुटोंके कूजनका, उनकी छायामें छालसे आहार खोजते हुए पक्षियोंका चोंचसे कीड़ोंके खींचनेका, और तनोंपर अपने गण्डस्थलको खुजाते हुए हाथियोंका कैसा यथार्थ वर्णन है। आजके कवि कूड़ेको ही यथार्थ मानते हैं। रघुवंशजी, पण्डित हजारीप्रसादने सच पूछो तो इन कवियोंकी कल्पना पायी है। और बाण, बाणके वर्णन तो अद्भुत ही हैं।····'

छोटे बाबू धाराप्रवाह कहते जाते हैं, संस्कृतमें उनकी गति अप्रतिहत जान पड़ती है। एकके बाद दूसरी कविता वह रागके साथ सुनाते हैं, फिर उसकी व्याख्या करते हुए अर्थ कह देते हैं; कालिदास, भवभूति, भर्तृहरिको विशेष रूपसे उद्धृत कर रहे हैं। भर्तृहरिके वैराग्य और शृंगारके संयोगकी व्याख्यामें उनको अधिक रस आता है। फिर वह जयदेवके गीत-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोविन्दसे उल्लसित होकर गा उठते हैं—**'ललितलवंगलतापरिशीलनकोमल-मलयसमीरे···।'** मैं चकित भावसे उनकी चर्चा सुन रहा हूँ। इसी बीच वह उठकर अन्दर जाते हैं और तब चाचीजी और माताजी (केशवजीकी) कमरेमें प्रवेश करती हैं। मैं अब तक काव्यलोकमें आत्मविस्मृत-सा विचरण कर रहा था, अब वस्तुस्थितिकी ओर ध्यान जाता है। मैं चाचीजीको पहचान जाता हूँ, वह अपने भाई माण्डवी बाबूसे बहुत अधिक मिलती हैं। माताजीको फिर अन्दाज़से समझ जाता हूँ। चाचीजी संकोचके साथ मुसकरा रही हैं। लगता है, अपने पतिके विचित्र व्यवहारपर उनको हँसी आ रही है। माताजी अपने स्वभावके अनुसार गम्भीर हैं, केशवने अपनी विमाताके विषयमें कई बार उल्लेख किया है। मैं दोनोंको प्रणाम करता हूँ। वे क़मरेके फ़र्शपर ही बैठ जाती हैं, उन्होंने संकोचवश उत्तरमें केवल हाथ जोड़ लिये हैं। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि क्या बात करूँ। हम लोगोंमें क्या बात शुरू हो सकती है, यही मैं सोचता हूँ। चाचाजी इस बीच फिर वापस आ गये और आ कर उन्होंने कहा—'आपका क्या परिचय इन लोगोंको दूँ, घरमें आपकी चर्चा होती रहती है।' मैं कुछ बात कहनेके भावसे कह देता हूँ—'चाचीजीको मैं पहिचान भी गया, ये तो माण्डवी बाबूसे ख़ूब मिलती हैं।' इस पर वह पुनः मुसकरा दीं। और चाचाजी कह देते हैं—'ये हमारी भौजी हैं। हम चाहते थे कि आपसे इन सबका परिचय हो जाये जिससे आगे कभी आप आयें तो कष्ट न हो। अब तो आप घरके लड़के ही हैं।' मैं बातको दूसरी ओर मोड़नेके लिए कहता हूँ—'मैं घरके सभी बच्चोंसे तो ख़ूब परिचित हूँ।'

छोटे बाबूके मनपर जैसे कोई धक्का-सा लगा हो, उनके मनकी दिशा बदल गई और अब वह कहते जा रहे हैं—'रघुवंशजी, मैं बच्चोंकी तरफ़से बड़ा निराश हूँ। इनको अच्छा खानेको चाहिए और पहिननेके लिए फ़ैशनके कपड़े भी चाहिए। सब नालायक हैं, पढ़ने-लिखनेमें इनका मन लगता नहीं। और जबतक उनकी माता लोगकी मन्त्रणा है, तब तक वे ठीक हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं सकते। मैं तो मानता हूँ, जो जिस लायक़ हो, उसको उसी अनुसार पढ़ाया जाय। ज़मींदारी जायगी, रुक नहीं सकती। फिर ये निकम्मे लड़के क्या करेंगे। अब तक ऐसे सब लोगोंका गुज़र-बसर परिवारके साथ चल जाता था। ज़मींदारी गयी और इनके पैरके नीचेकी ज़मीन खिसक जायेगी, फिर ये कहाँ ठहरेंगे, बहे-बहे फिरनेके अलावा कोई चारा नहीं होगा।....मैं आपसे शान्तिनिकेतनके बारेमें पूछनेवाला था।....आप इनकी देख-रेख कीजिए और समझाइए, डाँटिए, आप इनके बड़े हैं। कल आप इनकी परीक्षा लीजिए कि कौन किस योग्य है।' इसी प्रकार लड़कोंके भविष्यकी बात, ज़मींदारी समाप्त होनेके सन्दर्भमें उनके मनमें घूम रही है। मैं उनके सोचनेकी पद्धतिसे प्रभावित हूँ। कई नशे एक साथ लेते रहनेवाले छोटे बाबूकी दृष्टि इतनी पैनी हो सकती है, उनके सामने भविष्य इतने अनाविल रूपमें हो सकता है, यह मैं कभी नहीं समझ सकता था। उनकी बातोंके प्रवाहमें चाचीजी और माताजी क्या ग्रहण कर पा रही हैं, कह सकना सरल नहीं है। लगता है वे गम्भीरतासे आतंकित मात्र हैं; कुछ देर बाद वे अन्दर चली गयीं और तब मैंने भी चाचाजीसे आज्ञा ली।

मैं अपने कमरेमें आ गया हूँ, पर सो नहीं सकूँगा। लेटे-लेटे ही सोच रहा हूँ—इस ज़मींदार नामक वर्गके पास काफ़ी ऊँची प्रतिभा रही है, अपने ढंगके इनके आदर्श भी रहे हैं। पर युगोंकी उच्छृङ्खलता और ऐश्वर्य-प्रियताने इनको निकम्मा बना रखा है, ऐसा नहीं कि इस वर्गमें जागरणके क्षण कभी आते ही न हों, पर सुविधा और आरामकी अजगरी वृत्तिसे बच निकलना आसान नहीं है। इस अधिकार और विलासने इनका कम अपकार नहीं किया है, पर इसकी रक्षाके लिए वे जानबूझ कर अन्यायका आश्रय लेते रहे हैं। यह चेतना इस वर्गमें जाग गयी है कि स्वतन्त्रताके बाद अब उनका यह अस्तित्व अक्षुण्ण नहीं रह सकता, और इनमें यह भाव भी स्पष्ट ही परिलक्षित हो रहा है कि इस उत्ताल तरंगसे टकरानेसे कोई लाभ नहीं है। जन-जागरणके ध्रुव सत्यके सामने यह आत्मसमर्पण क्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इनके लिए शुभ नहीं है ? इनका इस प्रकार अपने-आपको मिटा कर सबके साथ मिल जाना देशके लिए उपयोगी होगा; पर क्या अपने-आपको, अपने युगोंके संस्कारको छोड़ पाना आसान है ? यह वर्ग भी बड़ा है, इसमें भी स्तर-भेद हैं । सम्भावना यही है कि इसका एक अंश पूँजीपति हो जायेगा, जैसा कि प्रयत्न भी हो रहे हैं, और शेष मध्यवर्गमें खप जाएगा । फ़िलहाल देशको दोनों स्थितियोंमें लाभ ही है । पूँजीके प्रयोगके साथ इनकी बुद्धि और प्रतिभा विकसित होगी, धीरे-धीरे अकर्मण्यताके मोहपाशसे मुक्त हो सकेंगे । दूसरी ओर इनके साथ आ जानेसे मध्यमवर्गको भी बल मिलेगा, और उसकी चक्कीमें पड़कर ये भी संघर्षमें आ जायेंगे ।

मैं हल्के अन्धकारमें आँख बन्द किये-किये सोच रहा हूँ—उच्च-वर्ग और निम्न-वर्गका संघर्ष तो अनिवार्य है, पर इसमें यह मध्य-वर्ग क्या रोल प्ले करेगा ! सबसे अधिक शिक्षित और संवेदनशील होकर भी क्या सच-मुच जैसा कहा जाता है, यह निराशाकी अकर्मण्यतासे ही घिरा रहेगा ! इसकी सारी क्रियाशीलता, इसकी बुद्धि और प्रतिभा सदा दूसरोंका बोझा ढोनेके ही काम आयेगी । उच्च-वर्गकी स्पर्धाके लिए आकुल रहनेवाला यह वर्ग उसके थोड़ेसे अनुकरणमें तुष्टि ढूँढ़ता हुआ विद्रोहके लिए तत्पर भी नहीं होगा !····मेरा मन अपने वर्गके लिए संवेदित होता है—क्या इस वर्गका कोई महत्त्वपूर्ण रोल नहीं हो सकता ? क्या वह इतिहाससे कुछ भी सीखनेमें असमर्थ है ? एक बार जब उसके सामने उसकी अपनी कमज़ोरी स्पष्ट हो गयी है, तो फिर वह उससे अपनेको मुक्त क्यों नहीं कर सकता है ? मुझे लगता है कि इसका आगेके इतिहासमें भिन्न प्रकारका महत्त्व भी सिद्ध हो सकता है । ऐसा हो सकता है कि वह अपनी सांस्कृतिक अभिरुचि और गहरी संवेदनाओंके लिए उच्च-वर्गके सामने समर्पण न करे, उनकी दया-मयापर अपनेको निर्भर न होने दे । ऐसा भी हो सकता है कि वह अशिक्षित और असंस्कृत निम्नवर्गके प्रति घृणा न करके सहानुभूतिका भाव अपने मनमें विकसित करे और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनको अपने साथ लेकर विद्रोहका संगठन तथा नेतृत्व अधिक ऊँचे स्तरपर कर सके और स्वतन्त्रताके नवीन मूल्योंका अन्वेषण करे। सम्प्रति तो वह अपनी प्रतिभाका समर्पण उच्च-वर्गके प्रति करता है, एवज़में कुछ सुविधाएँ मिलती हैं, जिनसे वह असन्तुष्ट रहता है। पर वह विवश होकर जीवन-भर उच्च वर्गका बोझा ढोता है। लेकिन अपनी स्थितिसे उसे निकलना ही चाहिए!

मैं कमरेके धुँधले प्रकाशमें अपने मनके इसी ऊहापोहको देख रहा हूँ—यह मध्य-वर्ग क्यों न दोनों वर्गोंका नेतृत्व ग्रहण करे? पर यह संभव कैसे हो सकेगा? वह उच्च-वर्गका नेतृत्व किस प्रकार कर सकता है! निम्न-वर्ग अपना नेतृत्व उसे क्यों देने लगा! लेकिन अपनी सांस्कृतिक चेतना और जागरूकताके कारण वह उच्च-वर्गका नेतृत्व कर सकेगा, उसे मानव मूल्योंके अधिक निकट ला सकेगा। इसके लिए उसे अधिक आत्म-संयमसे काम लेना होगा, अनेक क्षुद्र आकर्षणों और प्रलोभनोंसे ऊपर उठना होगा। नहीं तो उच्च-वर्ग अपनी भौतिक गरिमासे उसे अपने पैर-की धूलसे अधिक कभी नहीं समझ सकेगा। इसी प्रकार निम्न-वर्गका नेतृत्व करनेके लिए भी उसे उसके समान स्तरपर खड़ा होना होगा, निम्न-वर्ग तभी इसका विश्वास कर सकेगा। शायद इस प्रकार वर्ग-संघर्ष का रूप भी बदल सकेगा, परिष्कृत हो सकेगा। वह शृंखलाके रूपमें दोनोंको थाम सकेगा और एक समान स्तरपर लानेमें भी सहायक हो सकेगा।

इसी तर्क-वितर्कमें मैं पड़ा हूँ, उसी समय टैक्सीमें केशव भाई अपने साले जयाजी, उनके चचाज़ाद छोटे भाई (जिसे मैं बादमें सिलबिल कहता हूँ) और गनेश बाबू (छोटे बाबूके सौतेले भाई जो अलग हो चुके हैं) के साथ आ जाते हैं। आहट पाकर मैं बाहर आता हूँ, नमस्ते आदिके बाद सब बरामदेमें जम जाते हैं। केशवसे ज्ञात हुआ कि मेरा पत्र उनको मिल गया था, ताँगा छोटे बाबूके कामके कारण नहीं जा सका। फिर आज ही ये लोग भी आनेवाले थे। मैं अन्दाज़से जयाजीको समझ रहा हूँ, केशवने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनके विषयमें जो चर्चाकी थी उसके अनुकूल समझकर। वह संकोची और लज्जालु स्वभावके हैं। पहले परिचयमें वह मुझे अच्छे लगते हैं। हमलोग इधर-उधरकी बातोंमें व्यस्त हैं और इसी बीच नाश्ता आता है। बीचमें छोटे बाबू भी आकर शामिल हो जाते हैं, फिर उनकी बात ही प्रधान हो गयी है। उनकी बात जयाजी और गनेश बाबूसे अधिक चल रही है, जयाजी बीचमें एक-दो शब्द कह देते हैं। हम अन्य लोग श्रोताके रूपमें अधिक हैं, यद्यपि वह मुझे सम्बोधन करते भी चलते हैं। ज़मींदारीसे बात शुरू होकर साहित्यकी ओर मुड़ जाती है, मैं उनके ध्यान-केन्द्रसे उतरा नहीं हूँ। बात बरामदेसे उतरकर सामनेके लॉन तक पहुँच गयी है। इस साहित्यचर्चामें रीतिकालीन कवियोंको और उन्होंने जोड़ लिया है। मतिराम, देव, बिहारी और दासके सवैया, कवित्त और दोहोंको उद्धृत करके, उनकी सुन्दर कल्पनाकी व्याख्या और दाद वह देते जा रहे हैं। उनकी आलोचनाका मुख्य अभिप्राय यही जान पड़ता है कि रीतिकालीन साहित्यकी भावनाको शृङ्गारिक कहकर उसे अश्लील बताना अनुचित है। उसके विषयमें इधर लोगोंकी धारणा ग़लत बन गयी है। जो सत्य है उसे छिपानेसे क्या लाभ ? उसे तो सुन्दर रूपमें प्रस्तुत करनेमें ही कल्याण है। और इसको सिद्ध करनेके लिए वह मतिराम, देव और पद्माकरके सौन्दर्य-वर्णनके सवैया कहते हैं। कैसी विचित्र बात है ! आज रीतिकालको एक उसी युगकी मनोवृत्तिका व्यक्ति युक्तिके साथ अपना समर्थन दे रहा है, और ऐसा नहीं कि युक्तिमें कोई तथ्य हो ही नहीं।

धीरे-धीरे रात भीगती जा रही है, हमारी (अतिथियोंकी) खाटें बाहर लॉनपर बिछ चुकी हैं। अभी तक बातोंके विस्तारमें इस ओर ध्यान ही नहीं जा सका है कि हम चार फ़ीट ऊँची चहारदीवारीके भीतर बैठे रहकर भी एक प्रकारसे मुक्त आकाश और मुक्त पृथ्वीका अनुभव कर सकते हैं। चारों ओर कोठीके पेड़ोंसे घिरे होनेके कारण पृथ्वीकी मुक्तिका तो केवल अन्दाज़ मिलता है, पर आकाशमें तारोंके बीच निर्द्वन्द्व विचरण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किया जा सकता है। सप्ततारकमण्डल ध्रुवकी ओर इंगित करता हुआ एकदम सामने चमक रहा है, मङ्गल और बुधको उनके स्थानोंपर बैठे ही बैठे देखा जा सकता है।....भोजन वहीं आता है, केशवने हम मेहमानोंका साथ दिया, और छोटे बाबू तथा गनेश बाबूको बादमें घरके अन्दर भोजन करना है। उसका कारण स्पष्ट होता है, चाचाजी अपने उखड़ते हुए नशेको जमाकर ही खाना चाहते हैं और उसमें उनका साथ गनेश बाबूके अलावा हममेंसे कोई नहीं दे सकेगा। जयाजीको खानेके लिए उनका नौकर पैर दबाकर जगा रहा है, मैं सोचता हूँ आगे यह सब नहीं चलेगा और तब उनको कैसा लगेगा? भोजनके बाद छोटे बाबू खानेके लिए अन्दर जाते हैं और फिर हमारी सभा जम नहीं पाती। थकानके कारण नींद मुझे भी गहरी आ रही है, और यह मन्द बयार उसे अधिक उत्तेजित कर रही है।

दूसरे दिन जब नींद खुलती है तो प्रकाश हो चुका है। आकाशके तारे विलीन हो चुके हैं। मेरे चारो ओर सभी लोग सो रहे हैं। मेरी दृष्टिसे देर हो चुकी है, पर इनको सोता देखकर तो नहीं लगता कि अभी कोई जगनेवाला हो। अभी तक बिलकुल सुनसान है। मनकी सहज प्रेरणा होती है कि शौचादिसे निवृत्त होना चाहिए। पर घरमें अभी जगा ही कौन है? यह ज़मींदारोंका घर है, मैं मनमें सोच लेता हूँ। मैं प्रतीक्षामें टहल रहा हूँ। यह सहबाजपुर गाँव सुन्दर ही जगह बसा हुआ कहा जायेगा। एक ओर दो मीलकी दूरीपर पहाड़ी श्रेणी दिखाई देती है, दूसरी ओर एक छोटी नदीका बहुत फैला हुआ पेटा है। लगता है, बरसातमें इसका विस्तार बढ़ता है। कोठीके चारो ओर पेड़ोंकी सघनता है, पर और सारे क्षेत्रमें खजूर और ताड़के असंख्य पेड़ोंके अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं देता। नदीके उस पार कुछ दूरीपर पहाड़ियाँ गोचर होती हैं। मुझे तो लगता है कि किसी युगमें यहाँ ताड़ और खजूरके जंगल होंगे। चारो ओर धानके बिना जुते खेत पानीकी प्रतीक्षामें जैसे फैले हुए हैं। थोड़ा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पानी जो बरस गया है वह उनकी प्यास बुझाने भरको भी काफ़ी नहीं जान पड़ता।

धीरे-धीरे सूरज निकल आया है और ऊपर चढ़ता आ रहा है। घरमें पहले नौकर, फिर मालिक जागते जा रहे हैं। अन्दरसे छोटे बाबू निकल आये हैं और लॉनपर टहलते हुए बाणभट्टकी कथामें अब भी उलझे हुए हैं, इस समय भट्टिनीके चारो ओर उनकी चर्चा घूम रही है। मेरा मन नहीं लग रहा है, मेरी आदत अति प्रातः शौचादिसे निवृत्त होनेकी है, और यह विलम्ब मुझे कष्टकर लग रहा है। उसके लिए घरके अन्दर जाना है, संकोचमें कह भी नहीं पा रहा हूँ। अन्तमें मुझे अवसर मिलता है। पर वहाँ जाना मेरे लिए व्यर्थ सिद्ध हुआ, गन्दगीके उस अनुभवसे वहाँ कुछ क्षण रुकना भी मेरे लिए असम्भव है। बादमें ज्ञात होता है कि छोटा गाँव है, यहाँ सफ़ाईका कोई प्रबन्ध नहीं है, मेहतर किसी अन्य गाँवसे सप्ताहमें एक बार आता है। इतनी सुख-सुविधाके बीच इस सफ़ाईके प्रति उन सबकी यह विरक्ति मेरे मनको वितृष्णासे भरती रही। ऊपर-ऊपरका इन सबका यह ऐश्वर्य-विलास भी क्या अन्दरसे ऐसा ही गँदला हो चुका है और इस वर्गको उस कुत्सित और गर्हितका अब अनुभव भी नहीं होता। इसका सामान्य दृष्टिसे क्या महत्त्व माना जा सकता है, पर यह इनकी मनोवृत्तिका प्रतीक है। कितनी सुविधापूर्वक सोकपिट, सेनीटरी लैट्रिन आदि बनायी जा सकती हैं, पर उस ओर ध्यान ही नहीं है जो। मैंने चुपचाप निश्चित कर लिया कि शौचके लिए प्रातः सायं गिरधारीको लेकर मैदानमें सुविधाके साथ जाया जा सकता है। गिरधारी अपनी ओरका छोटा-सा नौकर है जो मेरे प्रति स्नेह और आदरके भावसे आकर्षित है। मेरे मनके इस प्रस्तावसे मेरा लाभ ही हुआ, छोटा-सा गिरधारी मेरे अधिक निकट आनेकी सुविधा पा सका और मैं पासकी छोटी नदीके चक्कर काटते हुए तटप्रदेशपर घूमकर उससे भी सौहार्द स्थापित कर सका।

कल तै हुआ था कि छोटे बाबू और जयाजी बच्चीकी (केशवकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बहन) शादी ठीक करने औरंगाबाद आज जायेंगे। परन्तु केशवने प्रातः मुझे बता दिया कि छोटे बाबूके जानेकी बातका कोई ठीक नहीं, मनकी तरंगपर निर्भर है। मुझे लगता है कि छोटे बाबू उस वर्गके प्रतिनिधि हैं जो किसी ऐसे सामन्ती युगमें आज भी जीता है जिसमें उनकी इच्छा ही प्रधान थी। दोपहर तक जब वह शहरसे लौटते हैं, उनके मनमें पुनः कोई आवेश छाया हुआ है और घोषणा कर देते हैं कि अब वह कल दोपहरकी गाड़ीसे ही जा सकेंगे। खाना-पीना हो जानेके बाद मैं केशवके कमरेमें उनसे बातें करता हूँ; मेरे पूर्वनिर्दिष्ट कमरेमें जयाजी और उनके भाई सिलबिल सो रहे हैं। मुझे नींद नहीं आ रही है, केशवसे बातचीतमें उलझा हूँ। केशव अपना राम-काव्य सम्बन्धी काम दिखाते हैं, मैं कुछ परामर्श देता हूँ। फिर अनेक नयी-पुरानी बातें चल निकलती हैं। केशवकी व्यथा मैं समझता हूँ। उनका मन यहाँ इस वातावरणमें नहीं लग रहा है, उनमें अध्ययनकी सच्ची लगन है। साथ ही अपने वर्ग-संस्कारोंसे उनका पूरा सामंजस्य भी नहीं हो पाता। उनको यहाँ रुकना है, यद्यपि कोई प्रत्यक्ष काम हो ऐसा नहीं है। ज़मींदारीका प्रायः सारा काम छोटे बाबू देख लेते हैं, दूसरोंसे सहायता लेना उन्हें पसन्द भी नहीं है। केशवके लिए गाँवको उसकी आन्तरिक प्रकृतिमें जानना-पहिचानना तथा उसके जीवनसे व्यापक सहानुभूति स्थापित करना भी सम्भव नहीं है। गाँवके लोगोंसे उस स्तरपर मिलना उनके लिए अपने संस्कारोंकी विवशताके कारण सम्भव नहीं है, यद्यपि वह तर्क यही देते हैं कि इस प्रकारके व्यवहारके लिए जनता तैयार नहीं है। फिर इस साथी-संगीविहीन स्थानपर उनका मन बिना किसी कामके किस प्रकार लग सकता है!

सन्ध्या होते-होते बरामदेमें फिर बैठक जम गयी है, और छोटे बाबूकी धारा-प्रवाह काव्य-व्याख्याके साथ हम लोग फिर लॉनपर आ गये हैं। उनकी काव्य-व्याख्याका चमत्कार मेरे लिए अब कम होने लगा है। केशवने मुझे उसका रहस्य बता दिया है। छोटे बाबूने अपने पिताके अनेक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रयत्नोंके बावजूद भी कभी पढ़ाई-लिखाईमें मन नहीं लगाया था। स्कूलमें वह कुछ दर्जोंके बाद रुके तो रुके ही रहे, आगे बढ़नेका नाम नहीं लिया। माँसे रो-धो कर नाम कटवा लिया। पर घरपर उनके लिए संस्कृत पढ़ानेके लिए जो पण्डितजी रखे गये थे, वह अधिक व्यवहार-कुशल सिद्ध हुए। उन्होंने छोटे बाबूको केवल काव्य पढ़ाया, विशेषकर शृंगार काव्यमें उनका मन लगा। पढ़नेके नामपर इस प्रकार छोटे बाबूने सौ-डेढ़-सौ छन्द कण्ठस्थ कर लिये और पण्डितजीने व्याख्या भी याद करा दी। इनमें प्रतिभाकी कमी तो है नहीं, व्याख्याओंका विस्तार वह स्वयं अपने-आप करते रहे हैं। पर यह भी कम कौशलकी बात नहीं है कि इतनी पूँजीसे पूर्वापर सम्बन्धका निर्वाह करते हुए वह अपनी विद्वत्ताकी धाक कुछ घंटे तक जमा सकनेमें समर्थ हैं। बार-बार सुननेका न सबको अवसर ही है, और बहुत दिनों बाद सुननेपर स्मरण-शक्ति काम ही दे यह भी सदा सम्भव नहीं है। पर केशवके विश्वास-घातसे मैं उनके कौशलका रहस्य जान सका हूँ।

बैठे-बैठे हम सभी ऊब चुके हैं। जयाजी का घूमनेका प्रस्ताव इसी कारण सहर्ष स्वीकार किया जाता है। मुझे जैसे प्राण मिले, यही मैं चाहता था। छोटे बाबूको गनेश बाबूके साथ छोड़कर हम लोग चल पड़ते हैं। बाग़के रास्ते हम नदीके किनारे पहुँचते हैं। नदीकी धारने इस गाँवके सिवानपर कई मोड़ लिये हैं, और उसकी तटभूमि हल्की-हल्की घाससे आच्छादित है। नदी इस समय काफ़ी नीचे पतली धारमें बह रही है। कटे हुए धानके खेतोंके सपाट मैदान चारो ओर फैले हुए हैं, जिनमें दृष्टिको कहीं कोई रोक नहीं है। केवल बीच-बीचमें खजूर और ताड़के वृक्ष बिखरे हुए हैं जो अपने अकेलेपनमें सुन्दर जान पड़ते हैं। नदीके उस पार भी लगभग समान दृश्य थोड़ा उठता हुआ चला गया है। नदीके किनारे मुड़ते-घूमते हुए सैर करना अच्छा लग रहा है। फिर किसी ऊँचे कगारपर खड़े-खड़े बात-चीत करनेमें भी सुख है। वातावरण मुक्त है और हवाके ठण्डे झोंके मन-प्राणको तृप्त कर रहे हैं। इस स्थानसे शहरकी ओर प्रेतशिलाकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहाड़ी दिखाई दे रही है, और दूसरी ओर दूर-दूरकी अन्य पहाड़ियाँ सिमटी-सी खड़ी हुई हैं। पश्चिममें लालीका प्रवाह-सा बह रहा है, फिर थोड़े ही समयमें अन्धकार घिरनेवाला है; पर आकाश मुक्त है और इतने खुले मैदानमें वह गहरा नहीं हो रहा है।

इस प्रकृतिके मुक्त और सुन्दर वातावरणका प्रभाव हम सभीपर पड़ा है। जयाजी कह रहे हैं कि यदि छोटे बाबू किसी प्रकार उनको औरंगाबाद न ले जायँ तो आनन्द रहे—'रघुवंशजीका साथ हो गया है तो एक-दो दिन और साथ रह लिया जाए। हमारा जाना तो साथ देनेके लिए है भी।' केशवजीको भी किसी बरातमें भेजनेकी बात थी, पर वह इन मामलोंमें कुशल हैं। उन्होंने अपनी साधारण फुंसियोंका घरमें ऐसा प्रचार किया कि उन्हें वहाँ जानेसे छुट्टी मिल गयी है और लाल बाबू तथा महेश्वर बाबू (केशवका भाई) को उनके स्थानपर जानेकी आज्ञा मिल चुकी है। वे इससे प्रसन्न हैं। जयाजीका प्रस्ताव है कि यदि उनको छुट्टी मिल गयी तो हमलोग कल प्रेतशिलाका प्रोग्राम बना सकते हैं। अब सन्ध्या घिर रही है, और आकाशकी लाली डूबती जा रही है। पर धुँधलापन गहरा होते-होते साफ़ होने लगता है और थोड़ी ही देरमें आकाशके तारोंके नीचे हल्का-सा प्रकाश हो गया है। अब हमको चेतना होती है कि विलम्ब हो रहा है। कुछ देरसे हम मौन हैं। तारोंके प्रकाशमें सारा चतुर्दिक्का विस्तार धूमिल होकर भी अजब आकर्षणसे भर गया है। दूरकी पहाड़ियाँ काली छायाओंमें व्यक्त हैं, खजूर और ताड़के वृक्ष अब भी खड़े है, पर केवल अपने छाया-कारमें; नदीका वक्र तथा वृत्त-रेखाओंमें चला गया कगार गोचर-सा है।.... हम दूसरे रास्तेसे घर लौट रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपरिचितोंकी ममताके बीच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ४ :

दूसरे दिनसे प्रातःकालका मेरा कार्यक्रम निश्चित है। लगभग पाँच बजे गिरधारीको जगाना और उसको साथ लेकर शौचके लिए मैदान जाना। उसे इतने प्रातः जगानेमें मुझे संकोच होता है, वह बहुत छोटा है और ग्यारह बजे राततक 'आइत हैं सरकार' कहकर सभीकी सेवामें प्रस्तुत रहता है। मेरे प्रति अनायास स्नेह-शील हो गया है, और मेरी एक आवाज़पर वह तुरन्त 'हाँ भइयाजी, अबै उठित हैं' कहकर तैयार हो जाता है। उसकी भंगिमासे लगता है, काम लेकर मैं उसपर उपकार ही कर रहा हूँ। यहाँ इस घरमें उसकी स्थिति अत्यन्त निरीह हो उठी है, न केवल स्वामी, वरन् अन्य सभी नौकर-नौकरानियाँ भी उसपर अपना हुक्म चलानेके लिए स्वतन्त्र हैं, क्योंकि वह आयुमें सबसे छोटा है और शायद उसने यहाँ अनाथके रूपमें प्रवेश पाया है। केशवके अतिरिक्त उसका कोई ध्यान रखनेवाला है, ऐसा नहीं लगा। और केशवका सारा कार्यक्रम ऐसे सामन्ती विस्तारसे चलता है कि घरके प्रबन्धके विषयमें किसी प्रकारकी रुचि प्रकट करना सम्भव नहीं है। यह निरीह बालक मुझे पाकर जैसे कोई सहारा पा गया हो। सुबहका समय उसका मेरे साथ बीतता है। नदीके किनारे-किनारे वह मेरे साथ घूमता रहता और बीच-बीचमें संकोचके साथ कुछ कह देता है। संक्षेपमें उसने जो कुछ कहा उससे मैं यही समझ सका हूँ कि वह अपने सौतेले पिताके साथ नहीं रह सका, कारण उसको स्वयं ज्ञात नहीं, क्योंकि उसका सौतेला पिता उसका विशेष ध्यान रखता था।—'भइयाजी, हमार जियरा उचाट भवा तौ माई-बप्पाके समझाये सन कौनउ हालतसे लाग नाहिन सका।' वह अपने मनके किसी भावको समझानेमें असमर्थ है, पर वह चाहता है कि मैं किसी प्रकार उसे समझ भी जाऊँ। मैं सहानुभूतिके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साथ समझनेका जो प्रयत्न करता हूँ उसीसे वह मेरे प्रति जैसे अत्यन्त कृतज्ञ भी है।

दोपहरके भोजनके समय यह तै हुआ कि केशव छोटे बाबू और बच्चों-को स्टेशनपर पहुँचाने जाएँगे। चार बजे मैं और जया जी प्रेतशिला चलें और केशव उधरसे मिल जाएँगे। फिर हमलोग पहाड़ीपर चढ़ेंगे और बंसरी बाबाके यहाँ चाय पीनेका कार्यक्रम रहेगा। लेकिन भोजनके बाद हमलोग जो पोर्टिकोमें सोये तो देरतक सोते ही रहते हैं। मैं कुछ पहले जगा भी, पर जोलाके 'नाना' में तल्लीन हो गया। जया जी लगभग पाँच बजे जगते हैं, देर हो चुकी है। पर हमलोग टहलनेके लिए निकले। बादल छाये हुए हैं और झींसी पड़ रही है। ऐसेमें प्रेतशिलाकी ओर जानेका विचार नहीं है। पर चल उसी दिशामें रहे हैं। मार्गमें विचार हुआ कि सड़क छोड़कर सीधे क्यों न चला जाए। सीधे चलनेपर एक पतला-सा नाला पड़ता है, जिसके चार-छह इञ्च पानीको किसी स्थलपर पार किया जा सकता है। पर जूते कौन निकाले, इस ख्यालसे आगे बढ़ते गये और फिर सड़कपर पुलके पास निकलते हैं। आधा रास्ता पार कर चुके हैं, पुलसे प्रेतशिला बस सामने ही तो है। तै हुआ कि आज ही प्रेतशिला चला जाएगा, लौटते समय ताँगा मिल जाएगा। कुछ आगे बढ़े ही कि पानी अधिक पड़ने लगा है। अब हम धीरे-धीरे भीगते हुए आगे बढ़ रहे हैं। पीछे लौटनेसे क्या लाभ होगा, आगे बढ़नेसे प्रेतशिलापर ताँगेके मिलनेकी आशा है।

अन्ततः हम धर्मशाला (जो केवल एक लम्बा-सा बरामदामात्र है) पहुँचते हैं, हमारे कपड़े नम हो गये हैं। बाबासे हममें किसीका परिचय नहीं है, सोमा अभी छोटा है। बाबा मन्दिरके बरामदेमें तख्तपर लेटे पैर दबवा रहे हैं। हम दूसरी ओरके बरामदेमें खड़े होकर ताँगेका इन्तजार कर रहे हैं। शहरकी सड़क इधरसे ही गयी है। पानी धीरे-धीरे बरस रहा है, प्रेतशिलापर चढ़नेका उत्साह तो ठण्डा पड़ चुका है। केवल वापस जानेकी बात मनमें उठ रही है। जयाजीका कहना है कि ताँगेका क्या ठीक नौ बजे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रातमें भी वापस लौट सकता है या हो सकता है, गयामें अधिक पानी बरस रहा हो और केशव बाबू वहीं रुकनेका निश्चय कर लें। मेरा कहना है कि केशव वहाँ नहीं रुक सकते, देर भले ही हो जाये। अब धीरे-धीरे अन्धकार हो चला, बादलोंके कारण साँझ जल्दी झुक आयी है। अँधेरेकी कल्पनासे हम अधिक चिन्तित हैं। यहाँ इस प्रकार खड़े रहनेमें हमको कम कष्ट नहीं है। सोमा बरामदेके बाहर निकलकर बतलाता है कि इस समय पानी बन्द है। हमने चलनेका निश्चय कर लिया है। हम लोग खूब तेज़ चल पड़े हैं, एक तो पानीका भय है और दूसरे यह देखनेके लिए कि कितना समय लगता है। जयाजीका भाई सिलबिल थक रहा है, वह शरीर और मस्तिष्क दोनोंसे शिथिल है। आयुमें काफ़ी बड़ा होकर भी उसका विकास अवरुद्ध रह गया है और उसे देखकर ज़मींदार वर्गकी एक परिणति प्रत्यक्ष हो जाती है। शरीरसे कमज़ोर तथा मस्तिष्कसे जन्मजात मूर्ख होकर भी उसको विवाह तथा गृहस्थी आदिके सभी अधिकार मिल चुके हैं। निर्वाह करनेका प्रश्न अलग है और उसपर अब तक इस वर्गने अपनी स्थितिके कारण कभी सोचा नहीं है। लेकिन आगे अब इसे भी सब कुछ सोचना-समझना पड़ेगा, ऐसा ही लग रहा है।

हम पैंतीस मिनटमें घर पहुँच गये। न पानी ही बरसा और न अन्धकार ही घिरा। रास्तेमें हम सलाह करते रहे कि घरमें सबको बतलायेंगे कि हम प्रेतशिलापर चढ़कर ऊँचाईसे गाँवमें सबको देख रहे थे। सबको विश्वास दिला देंगे कि हम ऐसे ही नहीं लौट आये हैं, नहीं तो हँसी होगी। घर पहुँचकर हम लौट आनेकी अपनी बुद्धिमानीपर प्रसन्न हैं, क्योंकि हम भीगे भी नहीं और अब आरामसे कुर्सियोंपर बैठे चाय पी रहे हैं। सामने आकाशमें घटाएँ घिरी हैं और उसके नीचे खजूर तथा ताड़के पेड़ोंके शिखर हिल रहे हैं। बरामदेमें बैठकर धीरे-धीरे चाय 'सिप' करनेमें विचित्र तृप्तिका अनुभव कर रहा हूँ, और मन जैसे सारे वातावरणमें हल्के-हल्के तैर रहा है। कुछ देरमें केशव आ गये, उनसे हम अपनी साहसिक यात्राका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सविस्तार वर्णन करते हैं। केशवजी हम लोगोंकी जल्दबाज़ीपर हँसी-मज़ाक करते हैं। अब निश्चित हुआ कि हमलोग कल प्रेतशिला ज़रूर चलेंगे। रातमें भोजनके पूर्व केशव और मुझमें अपने भविष्यके कार्यक्रमके बारेमें बातचीत होती रहती है।

दूसरे दिन रविवार है। खा-पी कर हम लोग तीन बजेके लगभग प्रेतशिलाके लिए चलते हैं। आज ताँगेपर हम रवाना हुए, वह प्रेतशिला-पर हमको छोड़कर शहर जायेगा। बादमें मालूम हुआ कि केशवकी पत्नी बीमार हैं और शहरसे दवा मँगानी है। ताँगेपर हम पाँच व्यक्ति हैं : जया जी, उनका भाई, सोमा, केशव और मैं। लगभग चार बजे हम प्रेतशिलाके नीचे उतर गये। केशव और उनके साथ हम सब बंसरी बाबाको प्रणाम करते हैं। आशीर्वाद देते हुए बाबा स्वागतके स्वरमें केशवसे कहते हैं—'आओ बच्चा, क्या हाल-चाल है। बहुत विलम्ब (बाबाजीका मतलब है बहुत समय बाद) से दिखाई दिये, रहे तो यहीं। चाय-वाय कुछ किया जाये। अरे है कोई, सुन····।' केशवने विनम्रतासे कहा—'बाबाजी, हम ऊपर चढ़कर अभी तुरत लौटते हैं, तब चाय रहेगी।' बाबाने भी प्रस्ताव-का अनुमोदन किया, 'हाँ बच्चा, ठीक है। तुम लौट आओ····तैयार रहेगी।' हमलोग चढ़ाई प्रारम्भ करते हैं, इस चढ़ाईपर सारे रास्ते सीढ़ियाँ ही हैं। इस कारण यदि एक ओर चढ़नेमें किसी प्रकारका भय नहीं है, तो दूसरी ओर दस-बीस सीढ़ियोंके बाद ही पैर भारी होने लगते हैं। सत्तर-अस्सी सीढ़ियोंके बाद रानें भर आती हैं और पैर जवाब देने लगते हैं। कैसी भी सपाट चढ़ाईपर मुझे ऐसा अनुभव नहीं हुआ है। फिर भी हमारे जैसे हल्के शरीरवाले लोगोंको विशेष कष्ट नहीं है, पर केशव और जयाजीको खल रहा है।

ज्यों-ज्यों ऊपर चढ़ता जाता हूँ, दृश्यका विस्तार फैलता जाता है। मैं रुककर दूरतक फैला सीमान्त देखता हूँ, पर रास्तेके घने पेड़ोंके कारण तथा कभी कटे और उभरे हुए पाषाणोंके कारण दृश्य साफ़ नहीं हैं। फिर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पसीना और गरमीके कारण मनमें जल्दी ऊपर पहुँचनेकी बात उठ रही है। ऊपर पहुँचते-पहुँचते यह अनुभव हो गया कि इस सात-आठ सौ फ़ीट ऊँची पहाड़ीपर चढ़नेमें जितनी थकान आ गयी है, उतनी सामान्य चढ़ाईके डेढ़ हज़ार फ़ीटमें भी नहीं आती। ऊपर पहुँचनेके कुछ ही पहले बाबाकी कुटी दिखाई दी जो लगता है किसी ओरसे पहुँचमें नहीं आ सकती। बाबाका अपना कोई रास्ता होगा ही, और कुटी ऐसे स्थलपर यात्रियोंको प्रभावित करनेके भावसे ही बनायी गयी है। कुछ मिनटोंमें हम चोटीपर पहुँच जाते हैं। यहाँ प्रेतशिलाका छोटा-सा मन्दिर है, जहाँ गया आनेवालेके लिए पिण्डदान देना आवश्यक माना जाता है। मैं सैंडिल उतारकर सुस्तानेके लिए एक शिलाकी शरण लेता हूँ। और लोग भी इसी प्रकार इधर-उधर सुस्ता रहे हैं। सोमाने बताया कि मन्दिरके पीछेकी ओर अच्छी हवा आ रही है। सँभल-सँभलकर हम सब उस ओर पहुँच जाते हैं, सचमुच इधर झर-झर हवा बह रही है। सब लोग बैठकर सुस्ता रहे हैं।

ठण्डी हवा लगते ही हम स्वस्थ हो गये हैं, फिर खड़े होकर चारों ओर के दृश्यका आनन्द लेना चाहते हैं। दूर-दूर तक समतल मैदान फैला है, जिसके बीच-बीचमें जैसे कान फैलाये छोटे-छोटे आकारमें ताड़ और खजूरके पेड़ खड़े हैं। इन पेड़ोंसे प्रायः सटे हुए कहीं-कहीं गाँव भी दिखाई दे रहे हैं। दूरतक रेखाके रूपमें फैली पतली सड़क है और उसके किनारेकी वृक्ष-पंक्तियाँ ऐसी जान पड़ती हैं, मानो चौड़ी रेखाके दो ओर किनार बना दिये गये हों। सामने छोटी-सी पहाड़ीके पेटेमें फैला हुआ गयाका नगर दिखाई दे रहा है और नगरके उस ओरके पार्श्वको स्पर्श करती हुई अपने विस्तृत बालूके पेटेमें फैली हुई फल्गू नदी है। कहीं-कहीं छोटे-छोटेसे पेड़ोंके बाग़ सुन्दर खिलौने जैसे जान पड़ते हैं। बाईं ओर कुछ दूरीपर एक और पहाड़ी दिखाई दे रही है, पर पीछेकी ओर दृष्टि रुक जाती है। इस ओर प्रेतशिलाकी पहाड़ीकी ही एक दूसरी चोटी उभर आयी है, जिसकी ओटमें सहबाजपुर भी आ गया है। इसी बीच पटना जानेवाली एक सवारी गाड़ी मैदानमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पेड़ोंके बीचमें सर्प जैसी रेंगती दिखाई दे रही है। लगभग पन्द्रह मिनटतक वह मैदानके चारो ओर चक्कर लगाती रहती है, कभी किसी गाँवमें कुछ देरके लिए छिप जाती, और कभी किसी बाग़में दो क्षणके लिए अदृश्य हो जाती और फिर मैदानमें भागती-रेंगती दिखाई देती। इस सुन्दर खेलसे हम सबका इतनी देरतक मनोरंजन हुआ।

पौन घण्टेतक इस प्रकार मगन रहनेके बाद हमारा ध्यान प्रेतशिलाके मन्दिरकी ओर जाता है। वास्तवमें हम सबमें पिण्ड जैसे कृत्यके प्रति किसीको आस्था नहीं है, और शायद इसी कारण उस स्थानसे हमारा मन विक्षुब्ध ही हुआ। पिण्डके आटे आदिकी सडाँधसे वह स्थान खड़े होने योग्य भी नहीं है। अपने धार्मिक कृत्योंकी कृत्रिमतापर मन खिन्न और उदास होता है, कभी किसी भावसे यह सब योजित किया गया होगा, परन्तु आज इसके पीछे एक वर्ग-विशेषकी व्यावसायिक भावनासे अधिक कुछ भाव शेष नहीं जान पड़ता। सोचता हूँ, यदि शुद्ध व्यवसाय भी होता, तो यहाँ सफ़ाई आदिका प्रबन्ध तो समुचित होता। साथके लोग उतरनेके लिए उत्सुक हैं, और हम सब उतरना प्रारम्भ करते हैं। उतरना आसान है, हम एक बार में नीचे पहुँच जाते हैं। इस पहाड़ीपर कुछ बड़े पेड़ हैं और चारो ओर झाड़ियाँ हैं, पर सब मिलाकर उतना घनापन नहीं है, जितना दूरसे लगता है। अबतक बंसरी बाबाने अपने तख़तके सामने हमारे लिए बिछौना लगवा दिया है।

बाबा हम सबको आदरके साथ बिठाते हैं। बाबामें खास बात है कि वह अपनेको बहुत आदरणीय मानकर व्यवहार नहीं करते। उन्होंने हमारे लिए चायका हुक्म दे दिया और साथमें मेवा-किसमिस भी लानेको कहा। मैंने कुछ किसमिस खाकर केवल पानी पिया। दूसरी ओर बाबाजीकी शिष्य-मण्डली जम गयी है, जिसमें केशवने बतलाया एक-दो सेठ भी हैं। आस-पासके गाँवोंमें बाबाजीका प्रभाव है। जयाजीके दोनों नौकर उसी शिष्य-मण्डलीमें सम्मिलित हैं। कुछ देरमें रहस्य समझमें आ गया : चिलमकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तैयारी हो रही है। बाबाजी व्यावहारिक और स्पष्ट आदमी जान पड़ते हैं। कम-से-कम हमारे सामने किसी प्रकारका रंग जमानेका प्रयत्न वह नहीं कर रहे हैं। वह स्वयं व्यक्त करते हैं कि वह सांसारिक ही अधिक हैं, बड़े प्रेम-से पारिवारिक हाल-चाल लेते रहते हैं और खाने-पीनेकी चर्चा करते हैं, जैसे आध्यात्मिकता जैसी चीज़से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। बाबाकी स्पष्टवादिता मुझे रुची। वह अपनी चाय लेते हुए कहते हैं—'हमारे लिए तो एक गिलास ही दिन भरको काफ़ी है, एक तो यह चिलम ही रक्त सुखा देती हैं, यह तो और ठसका लाती है।' बाबामें कम-से-कम ढोंग नहीं है। बाबा स्वीकार कर लेते हैं, यह चिलम बिना हमारा चलेगा नहीं, यह ऐसा ही चल रहा है। चिलमका दौर चल रहा है, चिलम पहले बाबाको समर्पित की जाती है। बाबा अपने किसी शिष्यको लक्ष्य करके कहते हैं—'सुल-गाओ, सुलगाओ, हम ले लेंगे।' भक्तकी ओर ध्यान जाता है, एकदम सूखा हुआ शरीर, आँखें लाल-सी। लगता है, किसी चीज़में डूबा हुआ है। चिलम हाथमें लेते ही उसमें अदृश्य-सा कोई उत्साह कौंध गया, आँखोंमें बुझते हुए अंगारे जैसी चमक दिखाई दी। फिर हाथकी चुग्गीमें चिलमको विशेष प्रकारसे थामकर वह धीरे-धीरे खींचना शुरू करता है, इसी प्रकार खींचनेमें गति आती-जाती है और अन्ततः इतनी तेज़ीसे हवा खींची जाती है कि चिलम जल उठती है। उसके आवेगसे जैसे भक्त आवेशमें उत्फुल्ल हो जाता है और त्रिभोरावस्थामें चिलम बाबाकी ओर बढ़ा देता है। हम देखनेवालोंको लगता है कि चिलमका सारा कस तो भक्तने ग्रहण किया है, अब बाबा क्या पा सकेंगे। पर यह ऐसा नहीं है। बाबाने सधे ढंगसे जब दम लगाना शुरू किया तो जान पड़ा वह ऐसे खेलाड़ी हैं जिनके इशारेपर चिलम दपक-दपककर नाच उठती है। कुछ क्षण खेल करके बाबाने चिलम बढ़ा दी और अब अन्य भक्त अपनी श्रद्धानुसार दम लगाने लगे।

केशवने बताया, चिलम सुलगानेका अधिकार खास शिष्योंको ही प्राप्त होता है, अच्छी जमी चिलम देरतक चलती है। एक दौर समाप्त होनेके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाद भक्तोंने कहा—'आज्ञा हो।' उनके कहनेमें लग रहा है जैसे हमारे आ जानेसे उन्हें संकोच है। पर बाबाके मनमें कहीं जैसे दुराव है ही नहीं। उन्होंने डिब्बी सँभालते हुए कहा—"और चलने दो; जाना, अभी जल्दी क्या है।' फिर हम लोगोंसे कहते हैं—'अब खा-पीकर जाना, पराठे बन जाते हैं। सब्ज़ी कोहड़ाकी है, पर अचार होगा।' केशव विनयके साथ उनके आमन्त्रणको अस्वीकार करते हैं, 'नहीं बाबा, ताँगा शहर भेज दिया है, पैदल ही जाना है।' बाबा ठीक समझ लेते हैं—"हाँ बच्चा, देर तो होगी और तुम्हारे मेहमान भी साथ हैं।' हमने बंसरी बाबासे बिदा ली और आपसमें बाबाके सम्बन्धमें बातें करते हुए वापस लौटते हैं। केशव बतलाते हैं कि बाबा मौजी प्रकृतिके हैं, आस-पासके लोगोंको खिला-पिला भी देते हैं और इस कारण लोकप्रिय हैं।

अगले दिन (सोमवार) जयाजी बनारस जानेवाले हैं, और मैंने केशवके साथ उन्हें पहुँचाने गया जानेका निश्चय किया। चाचाजी कल रातको गणेशजीके साथ वापस आ गये हैं। विवाहकी बात तै नहीं हो सकी है, इस कारण वह असन्तुष्ट वापस लौटे हैं। आनेके बादसे ही मैंने अनुभव किया है कि छोटे बाबूके मनसे 'बाणभट्टकी आत्मकथा' तथा काव्यचर्चा बिलकुल विलीन हो चुकी है। अब किसी पत्रकी सूचनाकी बात उनके मनमें घूम रही है। कहीं उन्होंने पढ़ा है कि शरणार्थी जवाहरलाल आदि कांग्रेसके नेताओं-पर विभाजनके विरुद्ध मोक़दमा चलायेंगे, और प्रातःसे वह उसी प्रश्नको लेकर व्यस्त हैं। घूम-फिरकर उनको यह बात बहुत तर्क-संगत लग रही है और वह स्वयं उसके पक्षमें दलील पेश कर रहे हैं—'यह इन कांग्रेसके नेताओंको देशका विभाजन स्वीकार करनेका क्या अधिकार था। उन्होंने पिछला चुनाव तो विभाजनके विरुद्ध लड़ा था, फिर इसे स्वीकार करनेमें उन्होंने किसका प्रतिनिधित्व किया। सचमुच उनपर मोक़दमा चलना चाहिए, इसमें सभीको साथ देना चाहिए।' उनकी उत्तेजनाके सामने कोई क्या कह सकता है कि आखिर यह मोक़दमा किस कोर्टमें चलेगा? ऐसा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लग रहा है, उन्होंने इस समस्यापर काफ़ी गम्भीरतासे विचार किया है। पर केशवने इस सम्बन्धमें छोटे बाबूका एक और रहस्य बताया। वह बराबर गयामें (या जब बनारस रहते हैं तो वहाँ) हिन्दीके दो-तीन दैनिक खरीदते हैं और सबका गहरा अध्ययन करते हैं। फिर हम सबसे केवल उन बातोंकी चर्चा करते हैं जो सामान्यतः अंग्रेज़ी पत्रोंमें महत्त्वपूर्ण नहीं मानी जातीं, हम सब आश्चर्यमें रहते हैं कि यह छोटे बाबूकी मौलिक सूझ है।

उनके इस मानसिक उलझावसे यह लाभ हम सबका हुआ कि वह गया साथ चलना चाहकर भी रुक गये। इसका हम सबको सन्तोष है। जयाजीको गया पहुँचानेके लिए मैं, केशव तथा गणेशजी रवाना होते हैं। जयाजीका स्वभाव मुझे अच्छा लगा, इस वर्गमें आत्मीयताका ऐसा रूप कम मिलता है। केशवके अनेक पढ़े तथा कम पढ़े सम्बन्धियोंसे मेरा परिचय हुआ है, पर प्रायः सभीमें दृष्टिकोणका बासीपन और कभी हल्कापन ही मिला है। जयाजीमें सरलताके साथ एक ताज़गी है जो अपनी आत्मीयता की सीमामें उत्फुल्ल करती है। उनको ट्रेनपर विदा देते समय लग रहा है जैसे किसी अपने मित्रको विदा दे रहा हूँ। गाड़ीमें बहुत भीड़ है, उनको केवल खड़े होनेकी जगह इण्टरमें मिल सकी है, आशा है बादमें जगह मिल जायगी। ट्रेन चलती है और जयाजी उस भीड़-भाड़के क्लेशमें भी हाथ जोड़कर मुसकरा देते हैं। स्टेशनपर किलनरके यहाँ एक-एक ग्लास लैमन-स्क्वाश पीनेके बाद हम शहरकी ओर चल पड़ते हैं। हज़ारीबाग़ जानेके लिए लारीका समय पूछना है; पता चलता है एक ६॥ बजे सुबह, फिर दूसरी १० बजे और अन्तिम शामको ४ बजे यहाँसे चलती है। मैं चाहता हूँ कि बुल्केजीको १६ ता० को वहाँ पहुँचनेका तार दे दिया जाये। कल खत लिख चुका हूँ कि मैं १६ को किसी लारीसे रवाना होऊँगा। अब निश्चय करता हूँ कि १० बजे वाली लारी ठीक रहेगी। केशवने तार लिखा तो १७ ता० कर दी, मुझे उनका यह आग्रह अच्छा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लगता है। तार मिलने पर बुल्केजी उसे ही मानेंगे, इसलिए पत्रकी चिन्ता नहीं है। शहरमें केशव दवा बनवानेके लिए रुके और तब मुझे ज्ञात होता है, उनकी पत्नी पूर्णाको कई दिनोंसे बुखार आ रहा है। तेज़ ज्वर रहने-पर भी उन्होंने कल तक नहाना-धोना, खाना-पीना चलाया है, और इसी भयसे अपनी ठीक हालत नहीं बतायी कि फिर सब कुछ बन्द कर दिया जायेगा। मुझे अपने कपड़े धोबीको देना है और उसी ओर गणेशजीको भी उतरना है, वह कई दिनोंसे छोटे बाबूके साथ थे। लौटते समय मैं अगली सीटपर पैर फैलाकर आरामसे बैठा हूँ, और केशवसे उनकी पत्नीके विषयमें चर्चा हो रही है। उन (पत्नी)का कहना है कि बीमारीमें खाना खाते रहनेसे उनको कोई हानि नहीं होती, वरन् न खानेसे ही तबियत बिगड़ सकती है। इसी तर्कके आधारपर कई दिनसे ज्वर आते रहनेपर भी उन्होंने भोजन करना नहीं छोड़ा और ज्वर बढ़ता गया है। आज ही उनको इस बातके लिए राज़ी किया जा सका है कि वह नहाना और खाना छोड़कर भी देख लें। हम दोनों उनकी इस बातपर हँसते रहे।

दूसरे दिन चाचाजीके बनारस चले जानेके बाद पता चला, पूर्णाका ज्वर तेज़ हो गया है, बढ़ता जा रहा है। केशवको मैंने राय दी कि डाक्टर बुलाना चाहिए। पर यहाँ यह सब आसान नहीं है। ताँगा रात होनेपर लौटा है, अब उसे फिर भेजना सम्भव नहीं है। लेकिन क्या किया जाय, ज्वर तो बढ़ता ही जा रहा है, १०५ तक पहुँच चुका है। हम लोगोंकी राय होती है कि अपने आश्वासनके लिए डाक्टरको बुलाना आवश्यक है। ४८ घंटे हो गये हैं और ज्वर उतरा ही नहीं। केशर महतो (ताँगा हाँकने वाला) को घोड़ीपर शहर जाना पड़ता है, घोड़ी भी आजकल लँगड़ी है। हम दोनों बाहर लानपर डाक्टरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। केशव कुछ उद्विग्न हैं, इस शहरसे दूर स्थानपर बीमारीके विषयमें चिन्तित हो उठना सहज है। पूर्णा इस परिवारके लिए अभी नयी है, इस कारण उनके संकोचसे केशवको कुछ उलझन है। शहरसे लौटनेके बाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केशवने कपड़े नहीं बदले हैं, मैं उनसे कपड़े बदलकर स्नान आदि कर लेनेके लिए आग्रह करता हूँ।

मैं लॉनपर अकेला हूँ, आजकल छोटा गिरधारी व्यस्त और चिन्तित जान पड़ता है। शायद केशवके कारण पूर्णाका भी उसे विशेष संरक्षण प्राप्त हो। मैंने पुकारा, 'गिरधारी !' गिरधारी आ जाता है; ऐसा कम ही होता है, जब एक पुकारपर गिरधारी उपस्थित न हो जाय। 'जी भइया जी, कुछ चाही।' मैं अन्यमनस्क भावसे कहता हूँ—'नहीं गिरधारी, क्या तुम पासमें ही थे ?'—'अबहीं बहूजीके पास रहेन।' मैंने पूछा, 'क्या तुम बहूजीकी सेवामें हो ?' गिरधारी इस बातसे जैसे संकुचित हुआ हो—'बहू जीकी तबीयत बहुतै खराब हैइ, मारे बुखारके चेहरा भँभरि गवा हैइ।' लगता है जैसे उसे कष्ट है। वह संकुचित-सा खड़ा रहता है, मैं फिर कहता हूँ—'गिरधारी, अब मैं परसों जाने वाला हूँ।' 'परसवें जायक हैइ आपक।' इससे अधिक वह कुछ कह नहीं पाया, पर उसके इन शब्दोंसे उसके मनकी आकुलता व्यक्त है। कुछ समय वह मौन खड़ा रहा और फिर कहता है—'अब फिनि कब आवै क होई भइया।' उसकी वाणीसे लगता है, जैसे वह मेरे जैसे अनिश्चित व्यक्तिकी प्रतीक्षाके आसरे आश्वासन ग्रहण करनेका उपक्रम कर रहा है। इतनेमें अन्दरसे आवाज़ आती है और गिरधारी—'आयेन सरकार' कहकर तत्परताके साथ अन्दर चला जाता है। मैं विस्तृत आकाशके स्पष्ट चमकते हुए तारोंके नीचे दूरके ताड़ और खजूरके हिलते हुए शिखरोंके पत्तोंकी छायाओंको देखता हुआ सोचता हूँ कि छोटेसे गिरधारीके ममत्वका आधार क्या है ? कौन है इसका ? क्या यह केवल दूसरोंकी पुकारपर सेवाके लिए हाज़िर होनेवाला प्राणीमात्र है ? मानवोचित ममता कौन देगा उसे, क्या मैं दे सकूँगा ? उसकी आँखोंमें तो ऐसा ही विश्वास झाँकता है।

ग्यारह बजेके लगभग बंगाली डाक्टर मोटरपर आते हैं। डाक्टरजी ज़रा स्थूल शरीरके हैं, फिर भी उनमें आलस्य नहीं है। वह पन्द्रह मिनटके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्दर भीतर रोगीकी जाँच करके वापस आ गये, उन्होंने परीक्षणके लिए रक्त ले लिया है। उनको फ़ीसके ३६ रुपये दिये गये और वह फिर अपनी मोटरपर रवाना हो जाते हैं। इतनी फ़ीस देकर भी हम कृतज्ञ हैं, क्योंकि इस जंगलमें इतनी रातको कोई अच्छा डाक्टर क्यों आना पसन्द करेगा। केशवका कहना है कि ये डाक्टर एक प्रकारसे उनके फ़ैमिली फ़िज़ीशियन हैं, इसी कारण समय-असमय भी चले आते हैं। हमारे देशमें जीवनकी दो निश्चित कोटियाँ हों जैसे, एक शहरके लोगोंकी और दूसरी गाँवके रहने-वालोंकी। जैसे गाँवमें जीवनका मूल्य बहुत सस्ता हो गया है, उनके जीवन-मरण दोनोंकी चिन्ता ईश्वरके भरोसे ही चलती है। इतना देकर भी कृतज्ञ होनेवाले हमारे गाँवोंमें कितने लोग हैं, और वे भी नगरकी ओर सिमटते आ रहे हैं। मेरे मनमें उठता है, यह सब क्या अनावश्यक नहीं हुआ? पर सोचता हूँ, स्थितिके अनुरूप किये विना व्यक्तिको इस विषयमें सन्तोष कहाँ हो सकता है!

दूसरे दिन पूर्णाकी तबीयत ठीक है, ज्वर १०० डिग्रीके आगे नहीं चढ़ा। मनमें दो बातें आती हैं, मलेरिया हो सकता है या टायफ़ायड। कई टिनोंसे ज्वर रहनेके कारण यह सन्देह होता है। पर अब परेशानी नहीं है। केशव कहीं बाहर नहीं निकले और हम दोनोंमें जमकर बातें होती हैं। हमारी बातें इतने विषय बदलती हैं, इतनी पुरानी बातोंकी पुनरावृत्ति होती है कि उनको हम कभी पकड़ नहीं सकते। दो बिछुड़े हुए मित्र प्रायः तो अपनी सुखद स्मृतियोंमें विचरते रहते हैं। हम हिन्दू-होस्टल, हिन्दी-विभाग, सिविललाइन्सके अपने पिछले जीवनमें आनन्द-मग्न हैं, साथ ही कितने ही पात्रोंकी आलोचना-प्रत्यालोचना भी होती रहती है। कुछ देर डाक्टर (रसायन-विभागके एक रिसर्च स्कालर, रामकुमार) को लेकर हँसी-मज़ाक़ चलता रहा। कैसे वह सज्जन 'वो' लगाकर नुमाइश घूमनेके लिए इतने व्याकुल थे कि केशवको अंग्रेज़ी पिक्चरका प्रलोभन देकर अपने साथ नुमाइश ले गये थे। केशवका कहना है कि मुझे क्या, मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तो उस सबको भी एक तमाशा समझता रहा, लोग हमारी तरफ़ कौतूहलसे देखते रहे और हम घूमते रहे। ये डाक्टर हम दोनोंको ही प्रायः 'बोर' करते थे। मैं जब देखता, डाक्टर आ रहे हैं तो पहली कोशिश यही करता कि कमरेसे कहीं खिसक जाया जाय। लेकिन यदि फँस ही जाता तो उनकी बातें सुननेकी विवशता झेलनी पड़ती। उनके विषय इतने सीमित थे कि हम बीस बार उन्हीं बातोंको सुन चुके थे, पर वह हर बार नये उत्साहसे लाहौर विद्यालय तथा इलाहाबाद विद्यालयकी तुलना करते, बाबा (करतारसिंह, अपने विभागके प्रोफ़ेसर) की चर्चा करते, प्रशंसा तथा निन्दाके विचित्र परिपाकके रूपमें और साथ ही न जाने कितने 'गदहेकी दुममें लगाम' लगानेवालोंकी चर्चा करते। हमने उनसे 'डील' करनेका एक खास टेकनीक अख़्तियार किया था। वह आते और बातें करते रहते और हम अपने काममें चुपचाप संलग्न रहते या कुछ सोचने लगते, बस बीच-बीचमें उनकी हाँमें-हाँ मिलाते रहते—'ऐसा तो है ही।....यह बाबा भी ख़ूब हैं....अरे लाहौरकी बात ही क्या है....वाह क्या गदहेकी दुममें लगाम लगाते हैं' आदि-आदि कुछ हम भी कहते जाते, बिना किसी अन्दाज़के ही, और वह अपने आप हो-हो करके हँसते रहते और बात करते रहते। वह इस प्रकार अपने-आपसे बात करके बहुत सन्तुष्ट होकर वापस लौटते—'अच्छा चलते हैं, रघुवंशजी।' और हम कमरेके बाहर उनको करके सन्तोषकी साँस लेते। इस बीच वह इतनी सिगरेटें पी चुके होते कि उनकी राख और टुकड़ोंसे सारा कमरा गन्दा हो जाता और मुझे साफ़ करवाना ही पड़ता।

इस मनोरंजक प्रसंगके बाद हमारी बात-चीत मथुरासिंहकी ओर मुड़ जाती है। केशव उनके स्वभावसे परिचित हैं, उनकी आकस्मिक मृत्युपर उनको भी दुःख है। कितनी विडम्बना है। हमारा बहुत गहरा सम्बन्ध था, पर उनके परिवारसे मेरा कोई परिचय नहीं और आज मैं उनकी पत्नी और पुत्रकी खोज-ख़बर भी नहीं ले सकता। मथुरा भाईका मेरे विद्यालयके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीवनपर गहरा प्रभाव है। उनकी स्मृति मेरे जीवनकी गहरी स्मृतियोंमें है। मैं केशवको बतलाता हूँ कि किस प्रकार जब रिसर्चके प्रारम्भमें मेरे पास इतना पैसा भी नहीं रह गया था कि मैं मेसका एडवांस दे सकूँ, मथुरा भाई चुपचाप महराजको एडवांस रुपया देकर चले गये थे। मैं उन विद्यार्थियोंमें सदा रहा हूँ जो मेसका एडवांस सबसे पहले जमा करा देते हैं। और मुझे ही जब रुपया जमा करनेमें पन्द्रह दिनकी देर हो चुकी तो मन संकोच और ग्लानिसे भर गया। मैं सोचने लगा था कि इस प्रकार तो रिसर्च चल नहीं सकेगी। मथुरासिंह पढ़ाई छोड़ चुके थे और क़स्बेके किसी हाई स्कूलके हेडमास्टर हो गये थे। वह मुझसे जब मिलने आये तो केवल यही समझाते रहे कि मुझे रिसर्च कर ही लेनी चाहिए, उसके बिना मेरा काम नहीं चलेगा। 'स्कूलोंकी टीचरी तुम्हारे बसकी नहीं, मेरे जैसे मौज़ी लोगोंकी बात छोड़ो। रही वकालत, सो उसमें भी दो साल पढ़ाईके चाहिए, और फिर तुम्हारा मन उसमें नहीं लगेगा, यह मैं अभीसे कहे देता हूँ।'....लेकिन मैं बहुतेरा चाहूँ, पर यह रिसर्च मुझे लग रहा था कि मेरे बसके बाहर है। मैं बहुत संकोचके साथ एक दिन महाराजसे कहता हूँ—'महाराज, इस बार एडवांस....।' मेरी बात पूरी होनेके पहले महाराजने बताया कि एडवांस तो मथुरा बाबू जमा करा गये हैं, और वह खुद आये नहीं हैं, इसलिए आप-भरका तो दो मासके लिए हो जायेगा। मैं समझ गया। हम लोग पिछले सालों बारी-बारीसे एडवांस मिलकर दे दिया करते थे, कभी मैं, कभी वह। उसी सिलसिलेमें मथुरा भाईने यह ट्रिक दिखाया था।

केशव मेरे भावको समझते हैं, उन्होंने मेरे मनको उस व्यथासे अलग करनेके लिए विषय बदलनेका प्रयत्न किया। मैं समझता हूँ, पर मथुरा भाईकी व्यथा मेरे हृदयकी है, वहाँसे कोई कैसे मुझे मुक्त कर सकता है। लेकिन बातोंका प्रवाह बदलता है, केशव किसी संकोचका अनुभव कर रहे हैं। बात यह है कि इस बार जब मैं उनको प्रयाग स्टेशनपर विदा देने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गया था, तो उन्होंने सहबाजपुर आनेका विशेष आग्रह किया था। वह कह रहे थे कि पूर्णाका कहना है—'आपके मित्र कैसे हैं, जो विवाहमें भी नहीं आये और बादमें भी कभी दर्शन नहीं देते।' इसपर मैंने मज़ाक़ किया—'भाई मेरे जानेसे ही क्या होगा, दर्शन देना तो उनके अधिकारकी बात है।' केशवने पूछा था—'आप ऐसा क्यों विचार करते हैं?' मैंने हल्के भावसे कह दिया—'आपके परिवारके अन्य सभीको देखकर ऐसा अन्दाज़ है।' मैं गम्भीर नहीं था, पर केशवको इस बातका कहीं संकोच था—'ऐसी बात नहीं रघुवंशजी, आपसे कोई परदा नहीं है। केवल कुछ भाषा आदिकी वजहसे बात-चीतमें संकोचका अनुभव करती हैं।' और मैंने चलते समय हँसीमें कह दिया था—'अच्छा तो यही शर्त मेरे आनेकी रही।' उनकी बातोंसे लगा कि पूर्णाकी बीमारीके कारण वह शर्तवाली बात रही जा रही है, और इसका उनको संकोच है। मैं उनकी व्यर्थकी विवशतापर हँसा ही—'मैं फिर तो आऊँगा, यह आना-जाना तो जीवनके साथ लगा है।'

सन्ध्या समय मैं गाँवके चारो ओर घूमना चाहता हूँ। केशवको इसमें अधिक रुचि नहीं है, इस कारण मैंने लाल बाबूको साथ लिया। उनसे पूछा भी नहीं, जिससे वह संकोचमें न पड़ें। हम यमुना (पासकी नदीका नाम) के तट-प्रदेशपर पहुँचते हैं। पहाड़ी श्रेणियोंमें सूर्यास्तका दृश्य घटित हो रहा है और उसको देखकर आज सीतागढ़की उस कल्पनाकी घाटीकी याद फिर तीखी हो जाती है। मुझे परसों जाना है। मेरे मनमें इस स्थलका, केशव और उनके परिवारका मोह घिरकर सघन हो चुका है। पर लगता है, मन इस बन्धनको झटका देकर तोड़ देना चाहता है और उस घाटीकी ओर बढ़ जानेके लिए विकल हो रहा है। यहाँके बन्धनने उसका आकर्षण बढ़ाया ही है। कई दिनकी व्यस्ततासे लगने लगा था कि मैं यहाँ उलझ गया हूँ, और वह घाटी विस्मृत हो सकी है। पर सामनेकी छोटी-छोटी पहाड़ियोंसे कल्पनाको सहारा मिल रहा है, ढालू

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होते ताड़ तथा खजूरसे भरे मैदानसे जैसे घाटी दृश्यमान हो उठनेवाली हो। साथ ही किसी अदृश्य स्नेहकी ममताने उस अज्ञात घाटीकी कोमल कल्पनापर घने आकर्षणका आवरण चढ़ा दिया है। क्रमशः अन्धकारके बादल पच्छिमी पहाड़ियोंके ऊपरकी लालिमाको मिटाते चले आ रहे हैं, और मेरा मन उसी स्निग्ध कोमल कल्पनासे भरता जा रहा है। आज केशवसे जो आत्मीय स्नेहकी बातें होती रही हैं, उनसे इस एकान्तमें मेरा मन अधिक संवेदित हो उठा है।....और इस मनःस्थितिमें मैं सोच रहा हूँ, अपने भविष्यके स्वप्नोंकी बात !

दूसरे दिनका कार्यक्रम नित्यके समान दोपहर तक चलता रहता है। पूर्णाका ज्वर आज ९९ डिग्री आ गया है। दोपहरके खानेके बाद केशवने शहर चलनेका प्रस्ताव किया। मैं तैयार हूँ, धोबीके यहाँसे कपड़े भी लाना है और केशव डाक्टरसे मिल लेना चाहते हैं। गरमीके कारण देरसे निकल पाते हैं। मार्गमें केशवसे बातें चलती रहती हैं, उनका कहना है कि ज़मींदारीके दिन अब गिने रह गये हैं। हम सबको कोई मार्ग निकालना है, पर ये लड़के जैसे कुछ समझते नहीं। छोटे बाबूकी चिन्ता वास्तविक है। अच्छा है, हमारा यह वर्ग मिट जाये, इस प्रकार इसकी जड़ता टूट जायेगी, और कोई उपाय नहीं है। आपरेशनसे कष्ट तो होगा ही, पर उसके बिना अब इस ज़हरबादका कोई उपाय भी नहीं है। रघुवंश जी, मैं बहुत निकटसे इसके सारे संस्कारोंको देख चुका हूँ। भारी दहेज लेकर शादियाँ की जाती हैं, पुत्रके असंतुष्ट होनेपर पिता स्वयं शिक्षा देता रहा है—घरकी स्त्रियाँ तो मर्यादा भर हैं, मन बहलानेके लिए बाहरका रास्ता मुक्त है। इसको हमारे बीच कभी पुरुषार्थ तक माना गया है। पिता-पुत्रके बीच शराब और वेश्याका कोई परदा नहीं रहा है। इसी बीच उनके पहले विवाहका उल्लेख भी आ जाता है। किस प्रकार किसी रियासतके बड़े मोक़दमेके सिलसिलेमें उनके पिताको रुपयेकी आवश्यकता थी और उसके लिए दस वर्षकी अवस्थामें उनकी शादी कर दी गयी। पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केशव अपनेसे बड़ी और असंस्कृत उस लड़कीसे सदा भयभीत रहे और कभी उसे पत्नीके रूपमें समझ नहीं सके। बड़े होकर उन्होंने खुला विद्रोह किया। वर्षों बाद, पिताकी मृत्यु हो जानेके भी कई वर्ष बाद, उन्होंने यह दूसरी शादी की है। इस विषयमें हम लोगोंमें काफ़ी विचार-विमर्श भी हुआ था, अन्ततः मैंने उनके स्टैंडको ठीक मान लिया था।

संयोगकी बात है, उनकी पहली साससे आज ही भेंट हो जाती है। केशव दवा लेने दवाख़ानेके अन्दर गये हैं और मैं ताँगेपर बैठा हूँ। केशर महतो घोड़ेको खड़े जगा रहे हैं। यह केशवका घोड़ा भी ख़ूब ही है। ताँगेसे जुता नहीं कि उसे नींद आने लगी। जब तक भागता रहेगा तब तक तो ठीक है, पर जैसे ही कहीं रुकेगा, उसे नींद आ घेरेगी। उस नीदमें वह गिर भी सकता है। एक बार घरके पोर्टिकोमें मैंने उसे स्वयं इस प्रकार गिरते देखा है। यही कारण है कि जब तक ताँगा खड़ा रखता है, केशर महतोका कर्तव्य हो जाता है कि वह उसे जगाता रहे।....मैं ताँगेपर बैठा गयाका बाज़ार देख रहा हूँ, कितना गन्दा, कितना अव्यवस्थित। उसी समय एक मोटर पास ही रुक जाती है। मैं समझता हूँ होगा कोई। उसपर स्त्रियाँ हैं, इस कारण उधर ग़ौर भी नहीं करता। उसमेंसे एक शराबी-सा व्यक्ति सिल्कका कुरता तथा धोती पहने सिगरेट मुँहमें दबाये दवाख़ानेमें घुस जाता है। वही कार ड्राइव भी कर रहा है। केशरने मेरी ओर मुड़ कर कुछ कहा, मैंने इतना ही समझा कि वह मेरा ध्यान उस कारकी ओर आकर्षित कर रहा है। मोटरकी पीछेकी सीटपर मेरी ओर कोई युवती बैठी है, और दूसरी ओर कोई काली गर्वीली वृद्धा बैठी है। मैं समझता हूँ कि कोई होगा, पर वह स्त्री मेरी ओर या मेरे ताँगेकी ओर ध्यानसे देख रही है। थोड़ी देरमें केशरने बतलाया कि यह बच्चा बाबूकी पहली सास और छोटी साली हैं। केशवने उसी समय आकर केशरसे ताँगा हाँकनेके लिए कहा। और फिर रास्तेमें बतलाते हैं कि उनके साढ़ू महोदय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कह रहे थे कि सासजी मुझसे मिलना चाहती हैं। यह सब उनके चोचले सदासे चलते रहे हैं।

वापसीमें हज़ारीवाग़की बसपर कलके लिए रिज़रवेशनके लिए कह दिया और कपड़े भी ले लिये गये हैं। फिर लम्बे रास्ते-भर केशवकी पहली ससुरालवालोंकी चर्चा तथा उनके दूसरे विवाहकी नैतिकतापर विचार होता रहता है। केशव बतलाते हैं कि उनकी सासने उनके विवाहको रोकनेके बहुत प्रयत्न किये। मजिस्ट्रेट आदिकी सहायता लेनी चाही, मार-पीटकी धमकी भी दी। बादमें मोक़दमेकी बात भी हुई। गयाके कलक्टरने छोटे बाबू और केशवसे बुला कर पूछा कि क्या तुम लोग पहली पत्नीको गुज़ारा भी नहीं देना चाहते। केशवने उन्हें बताया कि यह उन लोगोंका जाल है। वे लेना नहीं चाहते और न उनको आवश्यकता ही है। केवल परेशान करनेके लिए यह सब किया जाता है। कलक्टर साहबने मामला तै करानेका आश्वासन दिया। छोटे बाबूने स्पष्ट कह दिया कि गुज़ारा देना कोर्टसे अधिक सामाजिक न्यायकी बात है और वह तैयार हैं। उन्होंने वहाँ २०० रु० मासिक, एक घर तथा १०० मन वार्षिक गल्लाकी शर्तपर हस्ताक्षर भी कर दिये, लेकिन उन लोगोंने आज तक वह काग़ज़ फिर वापस नहीं किया, जब कि यह गुज़ारा केशवकी हैसियतसे कहीं अधिक था।

वस्तुतः आज हम न जाने कितनी पुरानी परम्पराओंसे चिपके रहना चाहते हैं। किसी ज़मानेमें जो आदर्श और मान्यताएँ स्वीकृत थीं, आज उनसे काम नहीं चल सकेगा। यह ठीक है, विवाह एक पवित्र सामाजिक मान्यता है, उसको यथासम्भव मानकर चलना चाहिए। पर जहाँ वह जीवनकी सारी गतिको कुण्ठित करता हो, जीवनके अन्य सारे उच्चादर्शोंको ठुकराकर चलनेका आग्रह प्रकट करता हो, जिसमें सारा सामंजस्य और सौन्दर्य झूठा पड़ जाता हो, उस विवाहको अस्वीकार कर देना कैसे ग़लत कहा जा सकता है। लिप्सा और वासनाके लिए विवाह करनेवालोंपर प्रतिबन्ध लगानेकी बात कही जा सकती है, पर क्या यह अपमानकी बात

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं है कि प्रेम और त्यागके इस सम्बन्धके विषयमें बाँधकर कोई रखा जाता है। उनके लिए ऐसी रोकोंका बहुत अर्थ ही क्या हो सकता है? जीवनको नष्ट करनेका, उसको कुण्ठित करके पंगु बना देनेका अधिकार किसीको नहीं मिलना चाहिए! जीवनको बाँधकर उसे सड़ानेसे न व्यक्तिका कल्याण हो सकता है और न समाजका ही।

दूसरे दिन मुझे जाना है। यहाँसे मुझे आठ बजे चल देना है। गिरधारी सुबहसे उदास है। मैं उसे प्रसन्न करना चाहता हूँ, वह हँस भी देता है पर उसकी हँसीमें जैसे कहीं खालीपन हो। शौचादि तथा स्नानादिसे सात बजे ही छुट्टी पा ली है। केशवको साथ नहीं ले जाना है, इतने प्रातः उनको असुविधा होगी। मैंने कपड़े ठीक कर लिये, होल्डाल भी लगा लिया, केवल बाँधनाभर शेष है। केशर महतोसे ताँगा जोतनेको कह चुका हूँ। केशव आज जल्दी जग गये हैं, चलनेका आग्रह करते हैं। पर मैं उनको दृढ़तापूर्वक रोक देता हूँ। वह आरामप्रिय हैं, मेरे विरोधसे उन्हें सहारा मिला। हम लोग एक-दूसरेका अधिकसे-अधिक साथ चाहते हैं, पर जब साथ छूटना ही है फिर क्यों मोह बढ़ाया जाये। घड़ीके बन्द हो जानेसे समयका अन्दाज़ ठीक नहीं लग पा रहा है। सबका कहना है, अभी केवल सात बजे हैं और मुझे लगता है आठ बज रहे हैं। सबका आग्रह है, नाश्ता कर लूँ, यह व्यावहारिक भी है। आगे किसी चीज़का आज निश्चय नहीं है। मैं केशवसे माताजी तथा चाचीजीसे विदा लेनेके लिए कहता हूँ। केशर महतो ताँगा जोतनेमें बहुत समय लगा रहा है, शायद उसे समयका ज्ञान मुझसे अधिक है। अन्तमें मैं महिलाओंसे विदा लेने जाता हूँ। माताजी पूजापर बैठी हैं, मैं प्रणाम करता हूँ। वे खड़ी हो गयीं और संकोचमें आशीर्वाद न देकर नमस्कारके लिए हाथ जोड़ती हैं। माताजी केवल इतना कहती हैं—'आप तो अधिक रहे ही नहीं, हम चाहते थे आप और रुकें।' इसी बीच चाचीजी भी आ गयी हैं और वह कहती हैं—'बहूकी बीमारीके कारण हम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बैठकर बात भी न कर सके।' माताजी केशवसे जाकर कुछ पूछती हैं, फिर लौटकर मुझसे कहती हैं—'बहू आपसे मिलना चाहती हैं। वह तो शुरूसे आपसे बात करनेके लिए उत्सुक थीं, पर बीमार ही पड़ गयीं।' मैं अनुभव करता हूँ, इनको सँभालकर बोलना पड़ रहा है, फिर भी मगहीका लहज़ा छिपा नहीं है। इसका इनको क्यों संकोच है, अपनी बोलीमें तो इनकी बातें मुझे अधिक प्रिय लगतीं। पर आभिजात्यका अभिशाप! मैं चलते समय पूर्णासे मिलनेकी बात भूल ही गया हूँ, बीमारीकी बातसे मैं उसकी विवशता समझ गया था। पर आकस्मिक रूपसे अवसर पाकर अधिक प्रसन्न हुआ हूँ। उसके विषयमें केशवसे इतनी चर्चा हुई है कि मनमें ऐसा नहीं लगता है कि किसी अपरिचितसे मिलना है। माताजीके पीछे-पीछे जाकर मैं सहज भावसे पूर्णाके सामने खड़ा हो जाता हूँ। वह बिस्तरपर पैर सिकोड़े बैठी है, दो-चार दिनकी बीमारीने उसे हतप्रभ कर दिया है, यह स्पष्ट है। संकोच और सरलतासे वह आँखें नीचे किये बैठी है। मुझे अब भी लग रहा है जैसे मैं किसी परिचितके सामने हूँ। कोई मेरी ही छोटी बहन, छोटी बहू सामने है। माताजी उसकी तरफ़से कहती हैं—'इधर ज्वर आ गया, आपसे मिलनेको बहुत दिनोंसे उत्सुक थीं, कमज़ोर हो गयी हैं।' माताजीके आदरसूचक प्रयोगोंसे उनकी भाषा-सम्बन्धी कठिनाई समझी जा सकती है। मैं वातावरणको संकोचसे उबारनेके भावसे कहता हूँ—'अरे भाई, कोई ऐसे बीमार पड़ता है, मेहमान बुला कर। मैं सब जानता हूँ, आप बुख़ारमें खाना खाकर और नहाकर ही अधिक बीमार पड़ी हैं और यह इसलिए कि ख़ातिर न करनी पड़े।' वह संकोचमें बहुत प्रयत्नसे मौन तोड़ पाती है—'नहीं भाई साहब, हम ख़ुद लज्जित हैं।' मैं हँसकर कह देता हूँ, 'अब आप जल्दी ही ठीक हो जायेंगी। मैं फिर आता ही रहूँगा।' फिर मैं शीघ्रताके कारण सबसे विदा ले लेता हूँ, बाहर आकर ताँगेपर सवार होते-होते केशवसे विदा ली। विदाके समय केशव केवल इतना कह पाते हैं—'क्या बतायें रघुवंश जी,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारा मन नहीं भरा। इधर तो दौड़-धूप ही रही।' मैं उनके मनका भाव समझता हूँ, हम ऐसे मित्र हैं जो कभी एक दूसरेसे ऊबते नहीं। ताँगा चलता है और फाटक तक केशव तथा उनके भाई पीछे-पीछे आते हैं। मैं सबको नमस्ते करता हूँ। भाइयोंने प्रणाम किया और मेरा ताँगा मुड़ जाता है। सब छूट गये और मेरा मन उदास है। लेकिन इस उदासीके बीचमें भी कहीं उल्लासका उठता हुआ ज्वार आभासित हो रहा है।

केशवकी कोठी दूर होती जा रही है। मुझे लगता है, मैं जिस केन्द्रपर इन कई दिनों टिका हुआ था उससे अलग हो रहा हूँ, हटता जा रहा हूँ। मेरे लिए इस केन्द्रका आकर्षण कम नहीं है, पर लगता है अन्य केन्द्र अधिक सशक्त हैं, और मैं अनायास ही उनकी ओर खिंचता जा रहा हूँ। मैं निरुपाय होकर इन केन्द्रोंपर अपनेको छोड़ देता हूँ, जो भी मुझे अपनी ओर खींच ले! और आकर्षणोंके संघर्षके बीच मैं जो कुछ अनुभव करता हूँ, वह कर्षणका विचित्र-सा सुख ही है। मेरे मनकी उदासीमें कुछ ऐसा आकर मिल गया है जो अनायास ही उल्लसित कर रहा है। मेरे विचार-केन्द्रमें एक ओर केशवका परिवार है और दूसरी ओर बुल्के भाई। मैं सोचता हूँ, एक व्यक्ति उस घाटीमें मेरी प्रतीक्षा कर रहा है और अपने ममता तथा स्नेहके समस्त आकर्षणको फैलाकर अपनी ओर खींच रहा है। मेरा मन भावावेगसे भर आता है—'मैं उत्सुकतासे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ', बुल्के भाईका पत्र मिला था। और इसी व्यक्तिने अपने माँ-बापको, अपने स्वजनोंको सैकड़ों नहीं, हजारों मील सात समुद्र पार बिना हिचकके छोड़ दिया है। केशवके परिवारके सहज स्नेहके बीचसे जाते समय मन उदास है, कहीं वेदना हो जैसे, पर वह घाटीका आकर्षण बरबस मुझे अभिभूत कर रहा है।

मेरा ताँगा धीरे-धीरे गाँवसे दूर बढ़ता हुआ प्रेतशिलाके समीप पहुँच रहा है। घोड़ेकी चाल उबा देनेवाली है। पर केशर महतो निश्चिन्त हैं। केशवका एक गुमाश्ता साथ है, वह रईसोंका नौकर रहा है। वह ऐसे प्रश्न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करता है जिनसे यह ध्वनि निकलती है—तुम कौआ हंसोंके बीच कैसे ? पर केशर महतोने अपनी बातोंमें उसे समझा लिया, उसने झूठ-सचका मेरा रंग उसपर जमा दिया। अब वह भिन्न दृष्टिसे मुझे देखता है। महतोका झूठ भी मुझे अच्छा लगता है, ऐसेसे कैसे किया जाय ! मिल मज़दूरोंने बताया, अभी आठ बजे हैं, पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा है। केशर मुझे पूरा आश्वासन देता है कि भइयाजी, आपकी बस नहीं छूटेगी, इसकी गारण्टी उसकी है। ताँगा जब 'लाल' बस तक पहुँचता है, तब वह बिलकुल खाली है। उसपर केवल एक बड़ी मूँछवाला क्लीनर है जिससे मालूम होता है गाड़ीके जानेमें अभी देर है। केशर महतोने सामान लदवा दिया और मैं उसको विदा करना ही उचित समझता हूँ। वह स्नेहशील व्यक्ति है, इनाम लेना नहीं चाहता। पर मेरे आग्रहसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लेता है। विदा होते समय वह कृतज्ञ है, शायद इसलिए कि मैंने उससे भी आत्मीयता निभायी है। अब सामने गयाका स्टेशन है, और मैं 'लाल' बसके समीप खड़ा हूँ बिलकुल अकेला—वस्तुस्थितिमें भी, और मनसे भी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आत्मीय जनसे भेंट

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ५ :

इसी मनःस्थितिमें मैं सोच लेता हूँ कि जब लाल बसको १० बजेकी पटनावाली ट्रेन देखकर ही रवाना होना है, तब क्यों न स्टेशनपर 'क्लिनर' के यहाँ पंखेके नीचे बैठकर आरामसे समय बिताया जाये। मैं एक प्लेटफार्म-का टिकट लेकर 'क्लिनर' में प्रवेश करता हूँ और एक पंखेके नीचेकी मेज़-पर शिथिल भावसे बैठ जाता हूँ। मैं बैठा हूँ इस भावसे कि मन जैसे बिल-कुल खाली हो, उसमें विचारकी कोई तरंग उठती ही नहीं है। मेरी भंगिमामें न जाने क्या पढ़कर एक अधेड़ बैरा अपनी सफ़ेद पोशाक तथा चमकदार पेटीमें तपाकके साथ मेरे सामने आकर खड़ा हो जाता है। मैं बोलना भी नहीं चाहता, किसी भी क्रियासे अजब-सी विरक्ति हो रही है, और मेरी इस मानसिक निष्क्रियतामें बैरा जैसे कुछ अर्थ ग्रहण कर उत्सुक होकर पूछता है—'सा'ब ड्रिंक्स माँगता है।' मेरे जीवनकी गतिहीन धारामें फ़्लोट करते हुए मनसे यह प्रश्न टकराया, पर कोई तरंग नहीं पैदा कर सका। मेज़के नीचे पैर कुछ अधिक फैलाते हुए मैंने लापरवाहीसे कह दिया—'एक बाटल सोडा और लेमन स्क्वॉश।' वह आश्चर्य-मिश्रित विरक्तिसे चला जाता है। उस अन्यमनस्कतामें भी मैं समझ रहा हूँ कि मैंने कहीं उसकी आशाको विफल किया है, और उसे मेरे विचित्र आर्डरपर विचित्रता तथा खीजका मिश्रित अनुभव हो रहा है। पर मेरे मनके ख़ाली-पनसे यदि उसने कुछ अर्थ ग्रहण किया तो इसका दायित्व उसका है, जहाँतक आर्डरके औचित्यका सवाल है मेरे लिए सोडा लाभकी दृष्टिसे और लेमन स्क्वॉश उसका स्वाद बदलनेकी दृष्टिसे है। मैं देख रहा हूँ, मेरी मेज़पर बोतलें और गिलास लगाये जा रहे हैं, फिर भव-भवकी आवाज़के साथ बोतलें खोली जाती हैं। मनके ढीलेपनमें मुझे यह सब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अच्छा लगता है, सुखद लगता है। अकारण ही मैंने दोनों बोतलोंको एक साथ खोलनेको कहा है, शायद अपने मनकी निष्क्रियताके कारण, या यह भी हो सकता है कि बैराने भ्रमसे जो मेरी भंगिमासे अर्थ ग्रहण किया था, मेरे अन्तर्मनने उसीसे संकेत पाकर ऐसा किया है। अर्धनिमीलित नेत्रोंसे अपने चारों ओरको ग्रहण करता हुआ मैं 'सिप' कर रहा हूँ, कुछ इस अदा-से कि कोई देखे और समझे। पर हम कहाँ समझते हैं कि हम अपने-आपको जितना समझते हैं, मानते हैं उतनी दूसरोंको कहाँ फ़ुरसत है, हमारी ओर देखनेकी। इसी बीच ऐसा लगता रहा जैसे ट्रेन आयी है, भीड़-भाड़ प्लेट-फ़ार्मपर है, दौड़-धूप चल रही है, फिर धीरे-धीरे सब शान्त हो जाता है। मैंने देखा, २० मिनट बीत चुके हैं, ट्रेन भी आ चुकी है और अब मुझे बस-पर चलना चाहिए। मैंने पाससे निकलते हुए बैराको पुकारा और वह बिल लेकर हाज़िर हो जाता है। मैं पाँचका नोट ट्रेमें रख देता हूँ, कुछ अपनी पूर्व भंगिमाके अनुकूल और कुछ व्यावहारिक बुद्धिसे कि पाँचका नोट रास्ते-में हर जगह नहीं भी भुन सकता है। मेरे सामनेकी ट्रेमें तीन रुपयेके नोट और बाक़ी रेज़गारी है। मैं तीन रुपये और एक अठन्नी उठाकर कह देता हूँ—'ठीक है!' ऐसा नहीं कि मैं समझ नहीं रहा हूँ कि अभी ट्रेमें बारह आनेसे अधिक ही होंगे और बैराकी समझकी दृष्टिसे तो यह साधारण बात है। वह सलाम करता है, उसकी आँखमें फिर वही भाव आ जाता है कि उसने समझनेमें वैसी ग़लती नहीं की थी। और मैंने उसके उसी अर्थको सिद्ध करनेके लिए ही तो शायद यह सब किया है, अतः ढीले और शिथिल मनसे बाहर निकल आया, बैराकी अन्तिम छाया अपनी नेत्रोंकी भंगिमाके साथ कुछ देर मेरे साथ रही।

मैं धीरे-धीरे अपनी लाल बसकी ओर बढ़ता हूँ, मुझे लग रहा है कि आज सब मेरी ही गतिसे और इच्छासे होनेवाला है। परन्तु पास आनेपर देखता हूँ कि तीसरे दर्जेमें यात्री ठसाठस भर चुके हैं। हाँ, दूसरे दर्जेमें अधिक लोग नहीं हैं। मैंने शुक्र मनाया और अपनी किनारेकी जगहपर बैठ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गया। गरमी अधिक है, इधर एक सप्ताहसे अधिकसे पानी फिर बन्द है और गयाका तापमान बढ़ गया है। अच्छा यही हुआ कि बसके स्टार्ट होनेमें अधिक समय नहीं लगता है। बसके चलते ही लूके थपेड़े मुँहमें लगते हैं। खिड़कियाँ सब ढीली हैं और उनकी सहायतासे हवासे बचा नहीं जा सकता। विवश होकर मुझे कानोंमें तौलिया लपेटनी पड़ती है, जैसा करना मुझे सख़्त नापसन्द है और मुझे याद नहीं कि राजस्थानकी गरमीकी यात्राओंमें भी कभी मैंने ऐसा किया हो। मुँहपर सीधे लूके थपेड़े लग रहे हैं, ऐसा लगता है मुँह झुलसा जा रहा हो। पर चुपचाप मन मारकर बैठनेके सिवाय क्या चारा है। शहरसे किस रास्तेसे हम पार हो गये, इसकी ओर ध्यान नहीं गया। शहरके बाहर पहुँचकर हम जिस सड़कपर चल रहे हैं, उसपर धचके बहुत लग रहे हैं, यद्यपि सड़क तारकोलकी है और गर्द कम उड़ रही है। कुछ मील बाद ही सड़क अच्छी काली तारकोलकी सामने फैली हुई है और हमारी बस उसपर तीस मीलसे अधिक की रफ़्तारसे दौड़ रही है। गरमी बढ़ती जा रही है, लू सीधे मुँहपर जैसे थप्पड़ मार रही हो। ऐसा लगता है मानो अन्दरसे रक्तको कोई जला रहा हो और सारे शरीरमें जलन फैलती जा रही हो। गयासे हमारे साथ एक व्यापारी भी दूसरे दर्जेमें चल रहे हैं, वह केवल पाँच रुपये देकर राँचीतक इसी क्लासमें जाना चाहते हैं और बहुत देरसे यही तर्क दे रहे हैं कि उन्हें सभी इसी प्रकार ले जाते हैं और उनका इस ओर तो आना-जाना रहता ही है। निश्चय ही उनका मतलब ब्लैकसे होगा, मुझे उनकी निर्लज्जतापर आश्चर्य हो रहा है। पहले तो ड्राइवर तथा कण्डक्टर ऐंठते हैं और कहते हैं कि यह ऐसा नहीं हो सकता, इन महाशय (अर्थात् मुझ) से पाँच रुपया तो केवल हज़ारीबाग़का ही लिया गया है। एक-दो स्टापेज तक मामला चलता रहा और पता नहीं किस प्रकार अन्ततः तै भी हो गया····कितना किसके हाथ लगा यह कह सकना कठिन है। निश्चय ही मेरे बगलके व्यापारी सज्जन हर जगह व्यवसाय कर लेते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस बातका विश्वास मुझे हो गया। कुछ दूर जानेके बाद मैंने देखा इस दूसरे दर्जेसे भी उनकी तरक्की हो गयी है, और अब वह ड्राइवरकी लाइनकी अगली सीटपर जम गये हैं, जिसपर प्रथम श्रेणीका नाम पड़ा हुआ है।

कोई चौदह मीलके स्टापेजपर मेरे साथके दो मुसलमान यात्री भी उतर गये और मैं अपने क्लासमें अकेला रह गया हूँ। मैं उतरकर देखता हूँ, बस एक उजाड़-से स्थानपर खड़ी है, शायद पासमें कहीं आबादी होगी। मुझे प्यास लग रही है, पर पीनेका कोई उपाय नहीं है। गयासे मैं नयी सुराही लेकर नहीं चला हूँ, इसका पश्चात्ताप हो रहा है, इतनी गरमीमें बिना पानीके कैसे चलेगा! मुझे यह भी लगता है, जैसे मैं लघुशंकामुक्त भी होना चाहता हूँ। कुछ हटकर एक पेड़की ओटमें बैठता हूँ। अभी बैठा ही हूँ, और निवृत्त होनेकी स्थितिमें ही हूँ कि बसका हार्न सुनाई दे जाता है और लगता है अब नहीं हो रही है। विवश होकर जल्दीसे बस-पर आ जाता हूँ। मुझे इस घबराहटमें सान्त्वना होती है कि मेरा क्लास खाली है और मैं प्यास और घबराहटकी व्याकुलतामें आरामसे बैठ सकूँगा। मैं निश्चिन्त होकर सोचता हूँ कि क्या बस मुझे इस एकान्तमें छोड़कर चली जा सकती थी? शायद वे लोग ऐसा नहीं कर सकते! पर यदि वे चले ही जाते तो मैं इस बिलकुल अपरिचित स्थानमें केवल पाजामा-कुरता-में, द्रव्यहीन क्या करता? यहाँसे गया वापस लौट जाने लायक़ क्या मेरी मनःस्थिति अथवा मेरा शारीरिक सामर्थ्य इस लू-धूपमें है? यहाँ कौन आश्रय देता, कौन सान्त्वना देता? मन अज्ञात भय और आतंकसे अभि-भूत हो जाता है। पर सोचता हूँ यह कैसी बचकानी बात है।

प्यास मेरी बढ़ रही है, मेरी टोकरीमें गिलास है। सुराही-कैरियरमें सुराही भी है, पर वह सहबाजपुरसे आते समय ही फूट चुकी है, पानी उसमें एक बूँद शेष नहीं है। उसको देखकर मेरी प्यासमें जैसे ज्वार आता हो और सारे शरीरमें उमड़ता हुआ फैल जाता हो। आज ही समझ सका हूँ, पानी हीमें ज्वार नहीं आता है, प्यासमें भी आता है। ऐसा लग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहा है, लूकी झारसे रक्त धमनियोंमें झुलसा जा रहा है। 'क्लिनर'के सोडा और लैमनकी याद आती है, लगता है वही है जो मुझे लपटोंसे बचा रहा है। अभी गयासे २३–२४ मील आगे बढ़े होंगे कि बस फिर एक स्थानपर रुकती है, और वहाँ अच्छी भीड़ खड़ी है—साथमें एक पालकी भी है जिसपर एक बृद्धा है। इस भीड़को देखकर मेरा जी और सूख गया। मैं सोचता हूँ यहाँ सामान आदि चढ़नेमें देर लगेगी, क्यों न पेड़ोंके नीचे ठंडा लिया जाय, कुछ नहीं तो पेट्रोलकी गन्धसे ही उतनी देर मुक्ति मिलेगी। मैं नीमके घने वृक्षके नीचे खड़ा हूँ, लग रहा है मूर्च्छा उतर रही है। पर प्यास! उसका क्या हो? देखता हूँ, तीसरा दर्ज़ा अपनी पूरी कैपेसिटी तक भर चुका है, मेरा मतलब निर्धारित संख्यासे नहीं है, क्योंकि संख्याका तो अब सवाल रह ही नहीं गया है, केवल स्पेस (स्थान) की सीमा है। बसमें सवारी और उनके बैठनेकी कल्पना करना व्यर्थ है, वहाँ तो बोरे और उनके भरे जानेकी बात अधिक प्रत्यक्ष लगती है। तीसरे दर्ज़ेमें जब इतनेपर भी जगह नहीं रही तो फिर दूसरे दर्ज़ेपर धावा हुआ। हमारे गाँवके लोग प्राण और पैसामें प्राणोंके संकटको कम महत्त्व-पूर्ण मानते हैं, कुछ इसलिए कि पैसा उनके पास कम है और कुछ इसलिए कि सहनशक्ति उनके पास अनन्त है। पर यात्रा स्थगित करनेकी बात हो तो फिर वे पैसेका मोह भी छोड़ सकते हैं। मैं इस धावेसे आतंकित हुआ और अपनी सीटपर आ गया। यात्रामें किनारेकी सीट हर दृष्टिसे सुविधाकी होती है, यह साधारण यात्रा-नियम मैं बचपनसे भली प्रकार जानता हूँ। अपनी सीटपर बैठा ही हूँ कि मुझसे कहा जाता है कि आप उतरें, उस ओर कुछ स्त्रियाँ बैठेंगी। मैं क्या कर सकता हूँ, बसमें कोई नियम नहीं चलता, यह मैं जानता हूँ। फिर देखता हूँ स्त्रियाँ तो बैठीं ही, साथके सारे पुरुष भी उसी ओर बैठ गये। अब मेरे लिए कोई जगह नहीं है। मैंने पूछा क्या बात है, इसपर कहा गया कि आपके लिए काफ़ी जगह है। अब मैं क्या कर सकता हूँ, मेरी टोकरी निकाल दी गयी। फूटी सुराही फेंक दी गयी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और सुराही-कैरियर ऊपर पहुँचा दिया गया। मैं अपना गिलास ज़रूर निकाल लेता हूँ, शायद पानी पीनेका सुयोग मिल ही जाये ! अब मेरे गलेमें तौलिया पड़ी है, वह कानोंसे नीचे खिसक आयी है और एक हाथमें गिलास तथा दूसरेमें ज़ोलाकी 'नाना' है, जिसे पढ़नेके लिए ऊपर ले लिया था। मन मारकर किसी प्रकार दब-सिकुड़कर बैठा, तो पासके बूढ़े मियाँजीने तेरह-चौदह बरसका एक लड़का मेरे और अपने बीचमें इस प्रकार बैठा लिया कि जैसे उसे तो गोदमें ही बैठाया जा सकता है। सभी सहयात्री एक प्रकारसे सन्तुष्ट हैं और उनके मुखपर भंगिमा है, चलो अच्छी जगह मिल गयी, हाँ पैसे ज़रूर अधिक पड़ गये। लेकिन मेरे लिए यह अत्यन्त यातनाकी स्थिति है। सभीने इस स्थितिको इतने सहज रूपमें ले लिया है कि मैं क्या कहूँ, क्या आपत्ति करूँ, किससे करूँ, सुनेगा भी कौन !

तारकोलकी काली सड़कपर बस भाग रही है, लूके सीधे झोंके मुँह-पर लग रहे हैं। स्थानके संकोच और कसावसे दम अलग घुट रहा है। तन जला जा रहा है और प्यास क्रमशः तेज़ होती जा रही है। मैं आँखें बन्द करके सोचता हूँ कि क्या जीवनमें पानीकी भी इतनी तीव्र इच्छा होती है ? पानी पीनेकी इच्छाके विषयमें सोचनेसे वह कम नहीं होती, उलटे बढ़ती जा रही है। शायद आगे कहीं पानी पीनेकी सुविधा मिल ही जाये। पर क्या मुझे पानी खूब जी-भरकर पीना चाहिए ? पता नहीं लघुशंका-निवारणके लिए अवसर मिल सके या न मिले। फिर तो कष्ट बढ़ेगा ही। लेकिन बिना पानीके नहीं चलेगा, इस प्रकार लगता है मेरे रग-रगमें ज्वाला प्रवेश कर रही है। कुछ मील बाद बस एक स्थानपर रुकती है और यहाँ भाग्यसे पानी पिलानेवाला है। किसकी कृपासे यहाँ पानी मिल रहा है, यह कह सकना तो कठिन है। वास्तवमें इस बातको सोचने जैसी मनःस्थिति यहाँ किसकी है ! प्यासेके लिए यही बहुत है कि पानी मिलनेकी सुविधा है। फिर मनमें यह संशय भी तो लोगोंके बना है कि न जाने किसको पानी न मिल सके, कब पानीवाला कह दे पानी चुक-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गया है। मेरी सीटसे कोई नीचे नहीं उतरा, सभीके साथियोंने पानी पिला दिया : और उस कसावके बीचसे बाहर निकलना आसान नहीं है, फिर यह डर ऊपरसे है कि इस बार बाहर जानेपर बैठनेकी यह सुविधा भी मिल सकेगी या नहीं। मैंने अपनी सीटपर बैठे-ही-बैठे परिवारवाले दलसे पानीकी याचना की, ऐसी उत्कट इच्छाकी कामना या तो आज्ञा हो सकती है या याचना, और मैं यहाँ केवल याचनाकी स्थितिमें हूँ। सब अपनी-अपनी चिन्तामें इस प्रकार व्यस्त हैं कि किसी बातको सुननेकी ओर उनका ध्यान नहीं है। एक स्त्री अपने भरे हुए लोटेसे मुझे न एक गिलास पानी देना चाहती है—क्योंकि वह इतना पानी साथ रखना चाहती है—और न मेरे पानी पी लेनेके बाद अपने आदमीको पानी लेने जाने देना चाहती है, क्योंकि उसे सन्देह है कि हो सकता है बस चल दे और वह पानी तब तक न ला सके। आदमी आदमीकी तरह कहता है कि वह लपककर ले लेगा तुम इन बाबू बेचारेको पानी पिला दो। जिस बेचारे-पनको मैंने कभी सहा नहीं है, उसको मैंने सह लिया, पर उस नारीकी व्यवहार-बुद्धि किंचित् डिगी नहीं। बस सचमुच चलने-चलनेको है और अब मुझे पानी नहीं मिलेगा। अब सुबहसे अजब-सी निष्क्रियतासे विजड़ित और लूके झोंकोंसे झुलसा हुआ मेरा अहंकार जागा, उसने अँगड़ाई ली, मैंने संयत आक्रोशमें कहा 'तुम लोग उठकर रास्ता दो, मुझे पानी पीने जाना है, बस तभी जायेगी।' बसके ड्राइवरने निर्मम निस्पृहता-से कहा—'समय हो गया, अब बस छूटनेवाली है।' मैंने तीखेपनसे कह दिया—'मैं तो पानी पी कर ही चलूँगा और तभी गाड़ी छूटेगी। क्या मानी हैं ? यह जो बोरों-जैसा ठूँस रखा है, यह सब····।' मुझे अधिक कुछ कहना नहीं पड़ा। प्रथम श्रेणीमें प्रोमोशन प्राप्त सेठजीने समस्याका समा-धान किया, उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि मैं अपनी सीटपर निश्चिन्त बैठा रहूँ और ड्राइवरसे कहकर वे मेरे लिए स्वयं पानी लेने चले जाते हैं। हाथका गिलास जो अब तक मुझे बोझा लग रहा था, बहुत काम आता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। पानी मिलनेपर भी बिना गिलासके पीना मेरे लिए सम्भव कैसे होता। सेठके लोटेसे लेकर मैंने दो गिलास पानी पिया, पेट भर गया पर मन नहीं भरा। अब मन शान्त होता है, शरीरका ताप भी जैसे कम हो गया हो। मैं सोचता हूँ सेठकी बात। सेठने यह उपकार धर्मादेमें किया है अथवा धर्मशास्त्रके वचनोंसे प्रेरित होकर····प्यासेको पानी पिलानेसे····। क्या यह सम्भव नहीं है कि सेठने शुद्ध मानवीय भावनासे प्रेरित होकर ऐसा किया हो। कुछ भी हो मेरा मन उसके प्रति कृतज्ञताके भावसे भर गया, यद्यपि कुछ ही पहले उसकी व्यावसायिक नीतिसे मेरा मन बहुत उद्विग्न हुआ था। शायद कृतज्ञता मानवीय प्रकृति हो।

बस आगे बढ़ी। गरमी, लू, तापने यह सिद्ध कर दिया कि पानी पीनेका सन्तोष बहुत क्षणिक है। असली जीवन ज्वाला ही है। अब सोचता हूँ कि आँख बन्द करके कुछ और सोचने अथवा कल्पना करनेसे कष्ट कम होगा तथा समय भी कट सकेगा। केशव और केशवके परिवारकी बात मनमें लाता हूँ, पर कुछ ठहर नहीं पाता है। शरीरमें, रग-रगमें जैसे तापकी लहरें दौड़ रही हों। फिर आत्मनकी याद आती है, उनका एक पत्र सहबाजपुरमें आया था। वह प्रयागमें एक प्रकारसे अकेले हैं, जोशीजीसे उनका मिलना अधिक नहीं होता, बृजमोहनजी भी बाहर हैं। लेकिन वह हैं कि अकेले भी रह पाते हैं, अपने काममें ही नहीं, अपने-आपमें भी व्यस्त रह लेते हैं। ध्यान फिर बँटता है, मेरे पासका लड़का औंधाकर मेरे ही ऊपर आ रहा है, किसी ओर किंचित् भी दबनेकी जगह नहीं है। दूसरी ओरके पहलवान-से लगनेवाले व्यक्ति भी आपेमें नहीं हैं। मैं दोनोंके बीच और सबसे अधिक अपने संकोचवश दब रहा हूँ और मेरा दम जैसे घुटा जा रहा है। लेकिन सहनेके अतिरिक्त उपाय क्या है? सड़क अच्छी है, काली तारकोलकी आगें सरकती हुई चली गयी है। बसकी गति भी साधारणतः अच्छी है। कुछ ही घण्टोंमें हज़ारीबाग़ पहुँच जाऊँगा और फिर मैं अपनी चिर प्रतीक्षित घाटीमें होऊँगा, रहूँगा। कामिल दादा (बुल्केजी) के स्नेह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और ममतामें पहुँचते ही यह ताप और ज्वाला सब अपने आप ही विलीन हो जायेगी। यह भावना मनमें आते ही हरी घाटी एक रूप भरने लगी, उसकी हरियाली, उसकी श्रेणियाँ, उसके शिखर सामने आविर्भूत होकर बिखरने-फैलने लगते हैं। कुछ समयके लिए सचमुच मैं अपनेको भूल जाता हूँ।

हमारी बस वास्तवमें प्रसिद्ध ग्रैंड ट्रंक रोडपर दौड़ रही है, यह मुझे बादमें मालूम हुआ। मैं हरी घाटीकी कल्पनासे कुछ देरके लिए वस्तुस्थितिसे अलग हटा रहा हूँ। इस बीच हम गयासे ३२-३३ मील पार कर चुके हैं। एकाएक मेरा ध्यान सामनेकी ओर जाता है। यह क्या है? सामने हरे-भरे जंगलोंसे ढकी हुई पहाड़ियाँ गोचर हो रही हैं और क्रमशः पास आती जा रही हैं। लगता है, हम कुछ ही मिनटोंमें उनपर चढ़ते रहे होंगे। हज़ारीबाग़ ढाई-तीन हज़ार फ़ीटकी ऊँचाईपर है, और लगता है अब हम पठारी रेंजोंके पास हैं। इन श्रेणियोंको देखकर जैसे दृष्टिके माध्यमसे मन शीतल हो रहा है और झुलसते हुए शरीरपर ठण्डी हवाका झोंका निकल गया हो।....बस पहाड़ी ढालोंपर चढ़ रही है, दोनों ओरके जंगल भी ऊपर उठते जाते हैं। यहाँ हालमें ही पानी बरसा है, एकाएक हवा शीतल हो गयी है और उसके झोंके तन-मन-प्राणको पुलकित कर रहे हैं। कुछ ऊँचाईके बाद बस समतलपर आ जाती है और सीधी सड़कपर दौड़ने लगती है। मैं समझ रहा था कि शायद हम इतने ऊँचे चढ़ जायँ कि अपने-आप ठण्डक हो जाय। पर कुछ ही देरमें यह मेरा भ्रम स्पष्ट हो जाता है। यह ठण्डक पानी बरसने तथा हरियालीके कारण है और इधर पानी चारो ओर खूब बरस चुका है। समतलपर कुछ देर भागते रहनेके बाद फिर हल्की-सी चढ़ाई आ जाती है। घाटियाँ फैलते-फैलते विस्तृत पठारी समतलमें खो जाती हैं और दूर तक भागते रहनेके बाद फिर किसी पहाड़ीके रूपमें प्रकट हो जाती हैं....यह क्रम चल रहा है। मनकी परेशानी और शरीरका ताप अब कम हो चला है और सीतागढ़ पहुँचनेकी कल्पना प्रत्यक्ष हो रही है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम आधेसे अधिक मार्ग पार कर चुके हैं, तभी एक क़स्बा पड़ता है, जहाँ कई बसें पहलेसे रुकी हुई हैं। सम्भवतः यहाँ विश्राम लेकर आगे बढ़ना है। ड्राइवरसे एक सिक्खजीने पूछा कि कितनी देर रुकेंगे। उसने कह दिया कि यही पन्द्रह मिनट, इंजनके ठण्डा होने तक, आप चाय पी लें। सन्तुष्ट होकर वह एक टूटी-सी दूकानपर डट जाते हैं। मैं भी सोचता हूँ, यहाँ पानी और पी लेना चाहिए, मैं अपना गिलास लेकर एक हलवाईकी दूकान-की ओर बढ़ जाता हूँ। शायद बिना कुछ ख़रीदे वह पानी न दे, मन स्वस्थ होता तो खानेकी इच्छा होती ही, पर इस समय कुछ भी खानेका मन नहीं है। पर हलवाईके लड़केने मेरी ओर कौतुककी दृष्टिसे देखते हुए पानी दे दिया, मैं समझ रहा हूँ वह मेरे हाथोंकी ओर आकर्षित है। उसी समय उसकी माँ कहींसे आ जाती है और मुझे ग़ौरसे देखकर प्रश्न करती है—'भइया, हाथ गिरहनी है? खात-पियत कैसे हो।' कोई नयी बात नहीं, सहज प्रश्न है। मैंने बता दिया—'हाँ, माई, सब चल जाता है।' उत्तरसे जैसे कोई सन्तुष्ट नहीं होता, वैसे ही वह भी नहीं होती है। पर मेरी गम्भीरतासे आगे कुछ कहनेका साहस भी नहीं करती। गम्भीर बनकर आत्मरक्षा करनेका उपाय मेरी बहुत सहायता करता है। पानी पी लेनेके बाद लघुशंकाका स्मरण भी आ जाता है, लेकिन यहाँ बाज़ारमें स्थान कहाँ है? कहीं भी किनारे सुविधा निकाल लेनेका मेरा संस्कार नहीं है। सड़क-के दोनों ओर मकानोंकी पंक्ति है, मकान प्रायः खपड़ेसे छाये हुए हैं। कुछ दूर आगे बढ़नेपर मुझे एक मकान बनता हुआ दिखाई देता है, उधरसे मैं पीछेकी ओर जाता हूँ। पर जैसे ही वहाँ बैठना चाहता हूँ कि सामनेसे एक स्त्री दो बच्चोंके साथ चली आ रही है। सोचता हूँ वह निकल जाय, पर वह निकट आकर मुझे ही देखते हुए खड़ी रह जाती है। मैं झुँझलाता हूँ वह क्यों मुझे देख रही है, क्यों नहीं रास्ते जाती? पर वह मुझे ही देख रही है, मेरे हाथोंके प्रति उसकी भी उत्सुकता जाग गयी है। विवश और निराश होकर मैं वापस लौटता हूँ, अब मेरी बसके छूटनेका समय भी आ गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बस पुनः चली। सड़क वैसी ही सुन्दर वृक्षोंसे आच्छादित है। कभी घाटियोंका विस्तार, कभी पहाड़ी-श्रेणियोंका चढ़ाव और कभी उतार सामने फैलता हुआ, घिरता हुआ, सिमटता हुआ आ जाता है। मेरा ध्यान समय-पर है और जल्दीसे-जल्दी हज़ारीबाग़ पहुँचना चाहता हूँ। पर मीलोंकी लम्बाई स्वतः सिद्ध है और बसकी रफ़्तारपर मेरा कोई वश नहीं है। इस समय मेरे क्लान्त-श्रान्त मनके लिए एकमात्र आश्रय है सामने मार्गका उठता-गिरता हुआ सौन्दर्य। कई स्थलोंपर सड़क नदीके पेटोंमें होकर गुज़रती है, इन पहाड़ी नालोंमें बरसातका पानी कुछ घण्टोंके लिए उमड़ पड़ता है, पर शीघ्र ही उतर जाता है। फिर भी कभी-कभी पार करनेके लिए घण्टों रुक जाना पड़ता है। काफ़ी आगे बढ़ चुकनेके बाद एकाएक एक स्थानपर हमारी बस दूसरी कम चौड़ी तारकोलकी काली सड़कपर मोड़ लेती है। उसी स्थलपर लिखा है : राँची ८६ मील। लोग बतलाते हैं अब हम ग्रैण्ड-ट्रंकको छोड़कर राँची-रोडपर आ गये हैं और यहाँसे हज़ारीबाग़ २६ मील रह गया है। मेरे मनको आश्वासनके लिए एक आधार और मिल गया। मैं मील-मील आगे बढ़ता हुआ हिसाब लगाता हूँ कि कितना चलना शेष रह गया है। सड़क वैसी ही अच्छी है। दोनों ओर पेड़ोंकी सघनता है, सड़क कभी नीचे और कभी ऊपर उतरती-चढ़ती फैलती-सिमटती जाती है। हर चढ़ावके प्रारम्भ होनेके सबसे नीचेके बिन्दुसे लगता है आगे सड़क चढ़ती-चढ़ती आकाशमें खो गयी है, आगे संसारका अन्त है और हम एक आकाशी शून्यमें कूदने जा रहे हैं। ज्यों-ज्यों उतार शुरू होनेका बिन्दु निकट आता-जाता है, यह शून्यमें सड़कके प्रसरित होनेकी भावना दृढ़ होती जाती है। पर जैसे ही उस बिन्दुपर पहुँचते हैं, आकस्मिक रूपसे उतारका सारा विस्तार जादूके समान सामने फैल जाता है। कहीं समतलपर दौड़ते-दौड़ते लगता अब सड़क समाप्त हो गयी है, चारों ओरकी प्रकृति भी समाप्त हो गयी है, नीचे लटकता हुआ आकाश झूलता लगता। पर जब उस स्थलपर पहुँचते हैं, तब विस्तृत ढाल-प्रदेश और दूर परकी पहाड़ी-श्रेणियाँ गोचर हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाती हैं। कभी ऐसे ही स्थलपर बस उतरनेके बजाय किंचित् मोड़ लेकर समतल पर ही दौड़ती हुई आगे बढ़ जाती है। इसी प्रकार १६, १७, १८,....२०, २१ मीलके पत्थर गुज़रते जा रहे हैं। मैं सोचने लगा हूँ कि बुल्के भाई बस-स्टापपर न मिले तो क्या होगा? हज़ारों मील यात्रा कर चुकनेके बाद भी मुझे अपरिचित स्थानपर पहुँचनेसे रोमाञ्च होता है, मन-पर भयका आतंक-सा छाता है। ऐसा भी लगता है कि यह मेरे मनके उल्लासका ही अंग है। बुल्केजी न भी मिले तो क्या, मैं रिक्शा करके स्वयं सीतागढ़ पहुँच जाऊँगा। अब वातावरण ठण्डा है, हवा भी ठण्डी है। प्यास बिलकुल शान्त हो चुकी है। लेकिन पानी अत्यधिक पी चुका हूँ और उसका दबाव बढ़ जानेसे कष्टमें हूँ, अब बसके रुकनेका सवाल भी नहीं है।

इसी ऊहापोहमें मैं नगरके बाहरकी बिखरी हुई बस्तीको बससे गुज़रते हुए देखता हूँ। हज़ारीबाग़ आ गया, मेरे मनको सन्तोष होता है। अब कुछ ही देरका कष्ट और है। बँगलोंके क्षेत्रसे बस बाज़ारमें पहुँची और चौराहेपर रुक गयी। सवारियाँ यहीं उतरने लगीं, मैं भी उतरनेका उपक्रम करता हूँ। कम्पनीमें बस राँची जानेके पहले देर तक रुकेगी, पर शहरके लोग तो सभी यहीं उतर रहे हैं। उतरकर इधर-उधर दृष्टि दौड़ायी, पर बुल्केजी-का कहीं पता नहीं है। यहाँ प्रतीक्षा करनेसे क्या लाभ है! इतनेमें रिक्शे-वालेकी सहायतासे सामान भी उतर आया। साइकिल-रिक्शे यहाँ कम ही हैं, आदमी द्वारा खींचे जानेवाले रिक्शेपर चलना मुझे सह्य नहीं है। सोचता हूँ, सामान रिक्शेपर ले चलूँ और स्वयं पैदल चलूँ, पर रिक्शेवालेकी दौड़का मैं कहाँ तक साथ दे सकता हूँ और वह धीमे चलनेको तैयार क्यों होने लगा। मैं समझता हूँ चलना ही उचित है, लेकिन बुल्केजी मुझे लेने आये होंगे अथवा आ रहे होंगे, इसलिए सीधे रास्तेसे होकर चलनेको कहता हूँ। बससे उतरनेके बादसे ही मेरा मन बहुत खराब हो रहा है, मतली-सी आ रही है, घण्टोंसे पेशाब करनेका मौक़ा न पा सकनेके कारण तकलीफ़

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अलग है। मैं चाहता हूँ कहीं एकान्तमें ठण्डी हवामें बैठकर आराम कर लूँ, तब आगे बढ़ूँ। पन्द्रह मिनट बाद हम शहरके बाहर पहुँच गये, सीतागढ़ यहाँसे तीन मील दूर है। एक पेड़के नीचे पड़े हुए पत्थरको देखकर मेरा मन रुक जानेके लिए उत्सुक हो उठता है। मैंने रिक्शेवालेसे कुछ देर रुकनेके लिए कहा और वह मान भी जाता है। पेड़की ओट लघुशंकासे निवृत्त हुआ, लगता है बहुत शान्ति मिल गयी है। फिर पत्थरपर बैठा ठण्डी हवाके झोंके खा रहा हूँ, मतली भी शान्त होती है और अब जाकर लगता है कि शरीरका ताप और नस-नसमें परिव्याप्त दाह उतर गया है। मैंने अनुभव किया कि वहाँ पहुँच गया हूँ, जहाँ आनेकी कल्पनासे मैं महीनों-से उल्लसित और उमंगित होता रहा हूँ। इधर कई घण्टोंके क्लेश और पीड़नने मेरे अस्तित्वको बिलकुल छा लिया था, अब वह सारा कोहासा अपने आप छट रहा है और उल्लासका रंजित क्षितिज उभर रहा है। मैं रिक्शेवालेसे सामानके साथ चलनेके लिए कहता हूँ और स्वयं पैदल टहलता हुआ चलना चाहता हूँ। पर रिक्शावाला बैठ जानेके लिए आग्रह करता है। आगे चलकर एक उतारमें बीचसे छोटी-सी पानीकी धार (नाला) बह रही है, उसके अन्दरसे रिक्शाको निकलना पड़ता है। आगे चढ़ाई है और मैं पैदल चला, इस बार रिक्शावालेने मना नहीं किया। समतल आने-पर फिर सवार हो गया, पर कुछ दूर बाद ही सामने ढालके विस्तारके सीमान्तपर एक पहाड़ी दिखाई देती है। और उसीके पार्श्वमें हरियालीकी सघनताके बीच लाल छतकी एक बड़ी-सी इमारत दिखाई दी। अनुमान करता हूँ कि यही कॉलेज होगा। यहींसे एक सड़क फूटती है जो ढालमें उतरती हुई कॉलेजकी ओर गयी जान पड़ती है। रिक्शावाला भी बतलाता है कि यह रास्ता कॉलेजका है। ढाल समाप्त होनेपर एक नालेका पुल मिला और सामने चढ़ाई आ गयी। चढ़ाई अधिक है, अतः मैंने फिर उतर जाना उचित समझा। कुछ दूर चढ़ाई पार करनेके बाद कॉलेजके कम्पाउण्डके गेरुआ खम्भे दिखाई दिये। उसके बाद सामने कॉलेज और उसके बायें कुछ अन्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इमारतें दिखाई देती हैं। कम्पाउण्डके अन्दर तक आते-आते रिक्शावाला हाँफने लगा, वह सुस्तानेके लिए रुक जाता है। मैं समझता हूँ, पहले यह जान लेना चाहिए, बुल्केजी किधर रहते हैं। इसलिए मैं कॉलेजकी ओर घूमी हुई सड़कपर जाता हूँ और रिक्शावाला सीधी सड़कपर आगे बढ़ा। मैंने सामने पोर्टिकामें जाकर देखा, दूसरी ओर सफेद लम्बी फ़ादर्सकी ड्रेस पहने कुछ व्यक्ति सफ़ाईमें व्यस्त हैं। मैंने उनमेंसे एकसे पूछा कि बुल्के भाई किधर हैं। उसने तो वैसे ही बतला दिया कि उधरके बँगलेमें, पर एक दूसरा व्यक्ति सफ़ाईका बहुत बड़ा झाड़ू रखकर मेरे साथ हो लेता है। मालूम हुआ ये सब यहाँके जूनियरेटके विद्यार्थी हैं। वह मुझे हॉस्टल-जैसी कमरोंकी पंक्तिके सामनेसे पीले रंगके पुते हुए बँगलेकी ओर ले गया और एक कमरेके सामने पहुँचकर बताता है कि यह बुल्केजीका कमरा है। फिर उसने कमरेमें लगे हुए तालेको हिला-डुलाकर कहा कि वे कहीं बाहर गये हैं। इस बीच मेरा रिक्शावाला घूमकर आ गया है, मैं सोचकर प्रस्ताव करता हूँ कि तब तक मैं इसी बरामदेमें सामान रखकर प्रतीक्षा करूँगा।

उसी समय एक सौम्य तथा मृदुलसे फ़ादर अपनी प्रश्नमयी तथा आकर्षक मुसकानके साथ आ गये। उन्होंने आकर कहा कि आप शायद इलाहाबादसे आये हैं। मैं 'हाँ' कर लेता हूँ। फिर वे याद करते हुए कहते हैं—'आपका नाम रघु····रघुवंश है।' हिन्दी बोलनेका अभ्यास उनका कम है, अलग-अलग शब्द बोलते हैं, पर बहुत अच्छा लगता है। वे कहते हैं—'बुल्केजी आपको लेने बस-स्टेशनपर गये हैं। शायद आप दूसरे रास्ते-से आये हैं। आपका कमरा दूसरी ओर बिलकुल ठीक है।' उनकी अंग्रेजी भी कॉण्टीनेण्टकी है, उच्चारणसे वे बेल्जियन ही लगते हैं। वे मुझे मेरे कमरेकी ओर ले जाते हैं, यह कमरा बँगलेकी दूसरी ओरका बिल्कुल बुल्के-जी जैसा ही कमरा है। फ़ादर स्वयं कमरा खोलकर मेरा सामान लगाते हैं। कमरा साफ़-सुथरा है, जैसे मेरी प्रतीक्षामें ही हो। सब सामान यथा-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्थान ठीक है। मैं प्रकृतिस्थ होता हूँ। वे कुछ देर और बातचीत करते हैं। पूछते हैं—'कहाँ होकर आप आये हैं। हम लोग आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं हिन्दी कम जानता हूँ, अभी-अभी सीखना शुरू किया है।' रिक्शावाला रास्तेमें ही पाँच रुपया सुना चुका था, और मैंने तीनतक देनेका निश्चय किया था। फ़ादरने दो रुपया देनेको कहा। मैंने तीन रुपया ही दिया, पर पाँच रुपयेका नोट निकालनेपर वह दयनीय भावसे और माँगता है। मैं और कुछ नहीं देता, यह दयनीय भाव मुझे बहुत खलता है। उचित आत्म-सम्मानकी भावना हम सबमें कब आ सकेगी! न हमारा न्यायके प्रति आग्रह है और न अधिकारकी उचित चेतना ही हममें है। दो-चार आना ज़्यादा मिलनेके लिए गिड़गिड़ा भी सकते हैं, कम मिलनेपर सह भी सकते हैं; और अधिक मिल जानेपर भी कमज़ोरको पाकर उसे दाब सकते हैं!

फ़ादर (नोविस मास्टर) मुझसे चाय पीनेका आग्रह करते हैं। मैं एकदम थक चुका हूँ, चाहता हूँ कुछ विश्राम करूँ, उसके बाद खूब जी भर-कर स्नान करूँ और तब कहीं खानेका नाम लिया जाय। मैं उनसे स्नानकी आज्ञा ले लेता हूँ, और वह कुछ समयके लिए चले गये। मैं थक गया हूँ, अभी कुछ भी मन नहीं हो रहा है। देखता हूँ कमरेमें सभी आवश्यक वस्तुएँ लगी हुई हैं—स्प्रिंगका गद्दावाला पलंग, मेज़-कुर्सी, लिखनेके लिए कम्बल-सहित एक तख़्त, आरामकुरसी, स्टैण्डपर एक तसला पानी, पानीसे भरा हुआ एक तामलोट, साबुन, तौलिया····मैं मन-ही-मन कह उठा 'ह्वाट नाट'। संलग्न बाथरूममें पानीसे भरे हुए टबको देखकर मन बहुत प्रसन्न होता है। मैं प्रसन्न होकर आराम-कुरसीपर लेट जाता हूँ, आधा घण्टासे अधिक बीत चुका है और मेरी थकानकी तन्द्रा भंग ही नहीं होती। चाहता हूँ, उठकर नहाने जाऊँ, पर उठ नहीं पाता। मनमें न कोई कल्पना है, न कोई विचार, बस शून्यमें तैर-सा रहा हूँ। इतनेमें दरवाज़ेपर कोई हल्की-सी थाप देता है, मैं समझ लेता हूँ नोविस मास्टर फिर मुझे चायके लिए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लेने आ गये हैं। मैंने दरवाज़ा खोल दिया और फ़ादर मुसकराते हुए प्रवेश करते हैं। मैं अब फिर समय लेना उचित नहीं समझता हूँ और फ़ादरके साथ हो लेता हूँ। वे मुझे कॉलेजके गिरजाके पास बड़े-से भोजनालयके समीपके एक छोटे-से कमरेमें ले जाते हैं। वहाँ भोजनकी मेज़पर रोटी-मक्खन, चाय आदि पहलेसे ही मौजूद है। इस सारे प्रबन्धसे मन उत्साहित तो हुआ, पर कुछ खानेकी रुचि नहीं हुई, केवल एक कप चाय पीकर रह गया। जब नोविस मास्टर मुझे वापस पहुँचाने आये, तो रास्तेमें एक खाकी ड्रेसमें फ़ादर साथ हो लेते हैं। उनका परिचय फ़ादर मिनिस्टर करके दिया जाता है, और मैं उनके प्रति अधिक आकर्षित नहीं हो पाता। मुझे वह चतुर और शुष्क स्वभावके लगते हैं। वह कमरेमें आकर मेरी सुविधाओंके विषयमें पूछते हैं। वास्तवमें सारा प्रबन्ध करना फ़ादर मिनिस्टरका ही दायित्व है (बादमें बुल्केजीने बताया) और मेरी सारी व्यवस्था उन्होंने ही की है। नोविस मास्टरके चले जानेके बाद भी वह बातचीत करते रहते हैं, फिर मुझे स्नान करनेकी छुट्टी देकर चले गये।

थके शरीर और मनसे सोचता हूँ पहले सामान ठीक कर लूँ, बादमें स्नान करूँगा। अपना बक्स ठीक प्रकारसे एक ओर लगाता हूँ, बिस्तरपर अपनी चद्दर बिछाकर तकिया लगा देता हूँ, मेरा वहाँकी चद्दर और तकिया इस्तेमाल करनेका जी नहीं होता। मैले कपड़ोंको टोकरीमें भरकर एक ओर धुलनेके लिए रख दिये। अब स्नान-घरमें प्रवेश करता हूँ और टबके ठण्डे पानीमें साबुन लगाकर जी भरकर नहाता रहता हूँ। आध घण्टे बाद बाहर निकलनेपर देखता हूँ अन्धकार धीरे-धीरे बढ़ रहा है, प्रकाश मिटता जा रहा है। साफ़ कुरता-पायजामा पहनने तथा बाल आदि ठीक कर लेनेके बाद ऐसा जान पड़ता है, शरीरसे बहुत बड़ा बोझ हट गया है, अब मैं बहुत हल्का हूँ, मन उत्फुल्ल है। कमरेके दरवाज़े बन्द कर मैं बाहर निकलता हूँ, चहलक़दमी करके चारों ओरका निरीक्षण करनेके विचारसे। बँगलेके बग़लसे एक सड़क गुज़रती है जो शहरसे आनेवाली सड़क ही है

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और इधरसे होकर सामनेकी पहाड़ीकी ओर जाती है। पर यह सड़क इस आश्रमकी अपनी सड़क है, अतः चालू नहीं है। ऐसा लगता है, यह सड़क आगे घने पेड़ोंके बीचसे सीधे बढ़ती हुई जंगलमें खो जाती है। कुछ देर उसी ओर देखता हूँ, मनमें हरी घाटीकी कल्पना आज जैसे प्रत्यक्ष हो रही हो। यही सड़क है जो मेरी उस कल्पनाकी घाटीमें प्रवेश करती है। कलसे मैं इसीसे होकर अपनी स्वप्नोंकी घाटीमें प्रवेश करूँगा। मेरे मनके आह्लाद-ने मुझे रोमांचित कर दिया है। लेकिन उसी समय एक अज्ञात आतंक मन पर छाकर अभिभूत करता है। मैं सोचता हूँ, आज मैं हरी घाटीके प्रवेश-द्वारपर पहुँच ही गया हूँ।

सोच रहा हूँ, बुल्के भाई अबतक आये क्यों नहीं? मोटरपर उनको पता चल सकता था कि मैं आ गया हूँ। सम्भवतः वह रातवाली बस देखकर ही आनेवाले हों। लेकिन पहली बसपर उनको मेरा पता चला क्यों नहीं? शायद मुझे न देखकर ही मेरे न आनेकी कल्पना कर ली हो, पूछनेकी ज़रूरत न समझी हो। पहले विचार उठता है, क्यों न शहरकी ओर चला जाये और सम्भव है रास्तेमें लौटते हुए बुल्केजीसे भेंट हो जाये, यह कैसा अच्छा रहेगा। कुछ दूर कॉलेजके कम्पाउण्डके अन्दर सड़कपर उतरता हुआ आगे बढ़ता हूँ। सड़कके दोनों ओर ऊँचे आम तथा जामुनके पेड़ छाये हुए हैं। हरियाली चारों ओरसे ऐसी उमड़ी हुई है कि जंगल ही लगता है। अब अँधेरा भी हो चुका है। थकानके कारण आगे बढ़नेका मन नहीं होता, पर सामनेकी ऊँचाई-नीचाईमें फैले हुए विस्तार और हरियालीकी सघनता भी मनको कम आतंकित नहीं कर रही है। अपरिचित स्थानपर अकेले बढ़नेका साहस भी नहीं होता। मैं कॉलेजकी सीमासे वापस लौट पड़ता हूँ, उसी समय नौकर पूछता है कि क्या मैं इसी समय खाना खाऊँगा और भोजन कहाँ करूँगा? मैं बिना विचारे ही कह देता हूँ कि अभी भी कर सकता हूँ और जहाँ सुविधा हो वहीं कर लूँगा। मैं कॉलेजके ठीक सामने लॉन और फील्डके पारकी इस सड़कपर घने पेड़ोंके नीचे कुछ देर टहलता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हूँ। चारो ओर दूर-दूरतक केवल काली छायाओंका आभास मिलता है, केवल कॉलेजके बिजलीके बल्ब कहीं-कहीं चमक रहे हैं। आकाश साफ़ है, इस सारे छायालोकको तारोंका हल्का प्रकाश आकृतियाँ प्रदान करता है। मैं केवल अनुभव करता हूँ, देखने और ग्रहण करनेकी मनःस्थिति मेरी नहीं है।

फिर नौकर मुझे बुलाने आया, और वह मुझे मैदानके बीचसे ले चलता है। मैं कॉलेजके फाटकसे प्रवेश कर, बायीं ओरके कुछ कमरोंके सामनेसे गुज़र कर, पुनः दाहिनी ओर मुड़कर चर्चकी बग़लसे होता हुआ भोजनालयके पासके उसी कमरेमें पहुँचता हूँ, जहाँ पहले चाय पीने आ चुका था। यहाँ पूर्वपरिचित फ़ादर मिनिस्टर तथा नोविस मास्टरके अतिरिक्त ब्रदर क्लासन भी हैं (बादमें नाम याद हो सका)। फ़ादर मास्टरने बताया कि ब्रदर भी निरामिष हैं और उन्हींके साथ मुझे भोजन करना है। और उसके बाद वे आज्ञा माँग कर चले गये। फ़ादर मिनिस्टर साथ बैठे रहते हैं, वह भोजन कर चुके हैं, केवल उन्होंने काफ़ीमें साथ दिया। ब्रदर क्लासनका उत्साह आकर्षक लगता है, और उनका व्यक्तित्व मनको स्पर्श करता है। वह दुबले-पतले हैं, पर उनमें स्फूर्ति विशेष है। भारतीय बननेका उत्साह उनका सनककी सीमा तक पहुँचा हुआ सभीको लगता है। वह निरामिष भी इसी कारण हैं। पर यह इतना ही नहीं है। वह भारतीय ढंगसे अँगुलियोंसे खाना खाते हैं और सब चीज़ोंको मिला-जुलाकर खाते हैं। पात्रोंमें थाली, गिलास, लोटेका व्यवहार करते हैं और कठोरताके साथ। नंगे सिर रहते हैं और दूसरोंको टोप लगानेके लिए हँसते हैं। भारतीयता भी ग़रीब ढंगकी उनका आदर्श है, अर्थात् वह दाल-भात तथा साधारण सब्ज़ीसे काम चलाते है। फ़ादर कहते है कि इनके स्वास्थ्यके विषयमें उन सबको चिन्ता है। वह अण्डा भी नहीं लेना चाहते। दूध भी अधिक नहीं ले पाते। साथ ही बहुत अधिक परिश्रम करते हैं, मोटर साइकिलपर दौड़ते रहते हैं। अभी बारह मीलसे वह बाँसके पौधे लगानेके लिए लाये हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनका कहना है कि बाँस लगानेमें बहुत लाभ हो सकता है। सारी मार्केटिंगका भार ब्रदरपर है और साथ ही बीमारोंकी सेवा तथा साधारण उपचारका दायित्व भी उन्हींपर है। खेती-बारीमें भी उनकी सहायता अपेक्षित है।

जब हम उनके विषयमें इस प्रकार चर्चा कर रहे हैं, वह मुसकराते हुए बात टालकर मुझे चावल, दाल और तरकारी आग्रहके साथ परोस रहे हैं। मैं प्लेटमें चम्मचसे खा रहा हूँ और ब्रदर क्लासन अपनी थालीमें ढेर-सा चावल और दाल मिलाकर उसमें थोड़ा पानी और मिलाकर खा रहे हैं। भारतीय बननेका उनका यह विचित्र उत्साह देखकर मैं चकित हूँ। इसी तरह उत्साहसे देहातियोंसे सीखे हुए कुछ शब्दोंको मिला कर टूटी-फूटी हिन्दी बोलते हैं। और अपने इस प्रयत्नसे बहुत प्रसन्न भी हैं। वह समझते हैं, इधर गाँवके लोग जिस प्रकार हिन्दी बोलते हैं, वही वास्तविक हिन्दी है। इसी प्रकार भोजनके बीच खूब बातें होती हैं, वह अत्यन्त आत्मीयताके साथ मुझे भोजन कराते हैं, अपनी सम्पूर्ण विचित्रताओंके बीच भी उनको मेरा पूरा ध्यान है। फ़ादर मिनिस्टर भी बीच-बीचमें उनका मज़ाक कर हँस देते हैं। उनकी (फ़ादर) बातोंमें इधरके प्रदेशकी जानकारीका गहरा परिचय मिलता है। पर वह सतर्क हैं कि मुझे क्या अच्छा लगा है और क्या नहीं रुचा है। उनका विचार था कि मैं भी बिहारी लोगोंकी भाँति भात अधिक खाता हूँ, पर जब उनको मैं बतलाता हूँ कि मैं तो भात महीनेमें एक-दो बार ही खाता हूँ तो उन्हें कुछ आश्चर्य होता है। वह मेरी खानेकी व्यवस्थाके सम्बन्धमें मेरा सुझाव चाहते हैं, पर मैं हूँ कि जहाँ जैसा मिल जाय उसीमें स्वाद ले लेता हूँ। बीच-बीचमें बुल्केजीकी चर्चा भी चलती है। उनका कहना है कि बुल्के व्यावहारिक क्षेत्रमें निरे सीधे हैं। फ़ादर मिनिस्टर कहते हैं कि वह बाज़ारके बिलकुल कामके नहीं हैं और ब्रदर कहते हैं कि बुल्के आज वापस आते समय नालेमें डुबकी खायेंगे। उनकी अव्यावहारिक मूर्खतापर वे दोनों स्नेहभावसे हँसते रहे। मुझे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी इसका अनुभव है। आठ बज रहे हैं और बुल्केजी नहीं आये हैं। ब्रदर उनको देखने जानेके लिए तैयार हैं, और अपनी मोटर साइकिल ठीक करके यह कहते हुए जाते हैं—'वापसीमें उनको नालेमें डुबोकर आऊँगा।'

मैं फ़ादर मिनिस्टरके साथ अपने कमरेमें लौटा। आये अभी कुछ समय ही हुआ है कि ब्रदरके साथ बुल्केजी आ गये। ब्रदर क्लासनने कहा कि वह नालेके पानीमें डुबकी लगा रहे थे। वह मुझे देखकर दूरसे पुकार उठते हैं—'रघुवंश।' वह अत्यधिक प्रसन्न जान पड़ते हैं। समीप आकर उन्होंने मेरे दोनों कन्धोंको पकड़कर हिला दिया और उल्लाससे मुझे गले लगा लिया। वह फ़ादर तथा ब्रदरके प्रति मेरी चिन्ताके लिए कृतज्ञता प्रकट कर धन्यवाद देते हैं और रात्रिके लिए विदा करते हैं, मैं भी उनको नमस्ते करता हूँ। बुल्केजी साइकिल वापस कर फिर आ जाते हैं और फिर हम दोनोंकी बातचीत होती रहती है। मैंने यहाँ पहुँचनेके बादसे सारी घटनाओंका उल्लेख किया। हम लोग अपनी-अपनी ग़लतीपर हँसते हैं। किस प्रकार मैं बिना किसीसे पूछे शहरके स्टॉपेजपर उतर गया, जब कि मुझे कम्पनीमें उतरना चाहिए और बुल्केजीको इस बातका भान भी नहीं हुआ कि मैं वहाँ भी उतर सकता हूँ। वह दूसरी बस देखकर वापस लौटे हैं। वह यहाँकी व्यवस्थाके विषयमें विस्तारसे बताते हैं। वह भोजन पैरिशसे कर आये हैं, अतः निश्चिन्त हैं। इलाहाबादके सभी समाचार वह पूछते हैं। मैं बुल्के भाईको पाकर जैसे अपने आत्मीय बन्धुको पा गया होऊँ, मेरा मन आनन्द और उल्लाससे आलोड़ित हो उठा है। मैं इसी मनःस्थितिमें बहता रहता हूँ। यहाँ कॉलेजके आश्रममें साढ़े नौ बजे रोशनी बन्द कर दी जाती है, अतः तब तक सोने चला जाना चाहिए। बुल्केजीने मेरी मच्छर-दानी ठीक की और मेरे हाथोंको अपने हाथोंमें लेकर बड़े स्नेहसे रातभरके लिए विदा ली।

मैं पानी पीकर तथा अन्य छोटे-मोटे कामोंसे फ़ुरसत पाकर सोनेके लिए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पलँगपर गया। पलँग स्प्रिङ्गदार है और मेरा अभ्यास बानोंकी बुनी खाट-पर सोनेका है, अतः कुछ असुविधा लगती है। यहाँ कमरेमें सभी सोते हैं, ऐसी ठण्डक है भी कि अन्दर ऊब नहीं लगती। कमरेकी खिड़कीसे आकाश दीख रहा है, कुछ हल्के-हल्के बादल आकाशमें आ गये हैं और कोमल भावसे फैल रहे हैं, निकट ही हवामें पेड़ोंकी छायाएँ हिल रही हैं। मैं इस सुखद वातावरणमें एक अत्यन्त स्नेहमयी कोमल गोदमें जैसे सो रहा हूँ। अब मुझे नींद आ रही है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रवेश और अन्वेषण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ६ :

प्रातः आँख खुली, देखता हूँ कमरेमें हल्का प्रकाश है। खिड़कीके बाहर प्रकाशमें उभरती हुई हरियालीके अतिरिक्त कुछ अन्दाज़ लगा पाना सम्भव नहीं है। पलँगपर लेटा हूँ, उठनेका मन नहीं हो रहा है। थकानमें रात नींद अच्छी आयी है, पर मनपर न जाने कैसा आलस है जो तनको घेरे हुए बोझिल होकर फैला है और मैं चाहता हूँ ऐसे ही पड़ा रहूँ। तन-मनका यह आलस किसी तन्द्रिल रहस्यकी सृष्टि करता है, जिससे घिरा हुआ मैं अनुभव करता हूँ।....मैं किसी परी-लोकमें हूँ, मुझे समुद्र पारकी परियाँ रात ही रात अपने बिस्तरसे उठाकर यहाँ ले आयी हैं और यह मैं उनकी ही सेजपर सो रहा हूँ, चारो ओर उनका ही वन-उपवन है, यह कक्ष उनके ही महलका है....पर वह परी कहाँ है? मुझे उठना है, इस आलसको छोड़ना है। यह मैं जिसपर सो रहा हूँ कमल-शय्या नहीं, लोहेकी स्प्रिंगका पलँग है। इसपर मुझे रातमें कुछ कष्ट ही हुआ है, शायद अनभ्यासके कारण। मैं सँभलकर उठ बैठता हूँ। बुल्के भाईने अपनी बातचीतके सिल-सिलेमें यहाँका कार्यक्रम बता दिया है। मैं जानता हूँ कि इस सेमिनरीमें सवा सात बजे तकका सारा समय मौन-साधना-प्रार्थनाका है। फ़ादर्स बिना मिसा (यज्ञ) किये न जल ग्रहण करते हैं और न मौन भंग करते हैं। प्रातःका यह मिसा प्रत्येकके लिए अनिवार्य है, आपद्धर्मकी बात दूसरी है। इस सम्बन्धमें उन्होंने रूससे जेज़ुइट फ़ादरके भागनेका क़िस्सा भी बताया कि अपनी लम्बी यात्रामें उन्होंने किस प्रकार अपनेको छिपाया और दैनिक यज्ञका कर्तव्य भी निभाया। यह मैं पहले निश्चित कर चुका हूँ कि साढ़े सात बजेके ब्रेकफ़ास्टके पूर्व मैं शौचादि तथा स्नानादिसे पूर्णतः निवृत्त हो जाऊँगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जब मैं भरे हुए टबमें जी भरकर स्नान करके तथा अपने जाँघियाँ तथा बनियाइनको धो-छाँटकर बाथरूमसे बाहर निकला, तब देखता हूँ अभी केवल साढ़े छः बजे हैं। अभी एक घण्टेकी देर है, मनमें तय कर लेता हूँ कि इस एक घण्टेका रोज़ घूमनेमें उपयोग करूँगा। मैं खद्दरका सफ़ेद कुरता, पैजामा पहनकर अपने बँगलेके पार्श्वकी सड़कपर आ जाता हूँ। मैं इसी ड्रेसका अभ्यस्त हूँ, मैं सरलतासे इसे अपने-आप पहन सकता हूँ। यहाँ आकर मुझे इसका एक गुण और ज्ञात हुआ है, फ़ादर्सकी सफ़ेद और लम्बी पोशाकके साथ यह खूब खप गयी है। इस सड़कपर आकर मैं कुछ क्षणोंके लिए रुक जाता हूँ, यह विचारता हुआ कि किधर जाना है? बायीं ओर यदि ढालपर जाता हूँ, तो यह शहरका रास्ता है जिसपर होकर कल मैं यहाँ आया था। दाहिनी ओर ऐसा लगता है, अधिकाधिक सघन होते वनमें रास्ता खो गया है। सोचता हूँ टहलनेके लिए मुझे इधर ही जाना चाहिए। एकाएक याद आता है कि निश्चय ही यही रास्ता मुझे घाटीकी ओर ले जायेगा। और यह घाटीका आकर्षण मुझे इतनी दूर अज्ञात रूपसे खींच लाया है। मैं इसी ओर बढ़ता हूँ, मनका भाव है कि यह रास्ता निश्चय ही घाटीमें ले जायेगा। आगे बढ़ते ही लगता है जैसे सड़क आगे जाकर जंगलमें खो जाती हो और यह भाव मनमें आतंकको जन्म देता है। पर यह ज्ञात है, यह सड़क आश्रमकी है, और आगे कई फ़र्लांग बाद शहरसे आनेवाले मार्गसे मिल गयी है। सड़कके दोनों ओर आम, जामुन, बकाइन, सेमर, अमलतास जैसे पेड़ छाये हुए हैं और साथ ही सड़कसे हटकर दोनों ओर बाग़ तथा जंगल (सुरक्षित) के टुकड़े भी आ गये हैं, जिनसे चारों ओरकी सघनता बढ़ती जा रही है। इस कारण दृष्टि दोनों ओरसे सीमित होकर केवल मार्गपर केन्द्रित हो गयी है। हाँ, दूर-दूरपर कुछ पहाड़ी शिखरोंके भाग ज़रूर दिखाई दे जाते हैं।

वृक्षोंकी सघनता और स्थानके सूनेपनके कारण मैं कल्पना करने लगा हूँ कि मैं किसी जंगलसे घिरता जा रहा हूँ। कुछ आगे बढ़नेपर सामनेका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहाड़ साफ़ दिखाई पड़ता है और बायीं ओर दूरीपर काफ़ी विस्तारमें ढालू होकर फैलता चला गया मैदान है, फिर भी इसपर उगी हुई झाड़ियों और बिखरे हुए पेड़ोंके कारण जंगलकी कल्पना मिटती नहीं है। कुछ क़दम आगे बढ़ते ही यह दाहिनी ओर क्या उभरता आ रहा है? यह तो हाथी जैसी पहाड़ी है, जिसपर एक स्तम्भ खड़ा जान पड़ता है। दाहिनी ओर साखूके सघन वृक्ष जंगलके रूपमें फैलते चले गये हैं। यह क्या बात है? बुल्केजीका कहना था कि आश्रमका विस्तार कई सौ एकड़ भूमिमें है, फिर यह यहाँ चारो ओर जंगल कैसा घुमड़ता आ रहा है। एक स्थानपर सड़कके किनारे एक बड़ेसे हौज़ तथा सिंचाईकी कुछ नालियोंसे जान पड़ता है कि यहाँ पास ही खेत होंगे। इस मार्गपर हर सौ क़दमपर लगता है, रास्ता बियावान जंगलमें आगे खो गया है, पर मोड़पर पहुँचकर फिर आगेका रास्ता खुल-कर फैल जाता है। सामनेका पहाड़ बिलकुल सामने पूरबकी ओर पीछे घूमता हुआ फैला है। मैं साखूके वनोंको देखता हूँ, फिर बायीं ओरके विस्तारमें खुले हुए जंगलकी ही कल्पना करता हुआ आगे बढ़ रहा हूँ। मेरे मनमें कोई अपरिचित भय छाया है, लगता है मैं किसी बीहड़ वनमें अकेला घूम रहा हूँ····क्षण भरके लिए मनमें परियोंके क़िस्सेकी माया फैलती है, राजकुमारको परियाँ वनमें अपने राजमहलके शयनकक्षमें ले आती हैं और राजकुमार जंगलमें रास्ता भूलकर भटक गया है, और अब शायद कोई परी आकर उसको सही रास्ता दिखायेगी····।

सामने यह क्या है? यह दीवार कैसे फैलती हुई वृक्षोंकी सघनतामें खो गयी है? इसके एक किनारेपर यह ऊँची-सी लकड़ी क्यों टँगी है? जान पड़ता है पानी भरनेकी, कुएँमें लगी हुई बल्ली है। पर यह जंगलके बीचमें क़िले जैसी दीवार कहाँसे आ गयी। इस वातावरणके रहस्यने मेरे मनको बचपनकी सुधियोंके बीच लाकर खड़ा कर दिया है और मैं अपने बचपनकी, राजकुमारोंकी कहानियोंके वातावरणमें घूम-फिर रहा हूँ।····रास्ता भूले हुए राजकुमारका घोड़ा उसे किसी अज्ञात क़िलेकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दीवार या शहरपनाह तक पहुँचा देता है, वहाँ राजकुमार किसी अपरिचित राजकुमारीसे मिलता है····। मनके आतङ्कपर किशोरावस्थाकी मृदुल स्मृति जैसे जाग गयी हो। फिर अकस्मात् मैंने देखा, दाहिनी ओर जंगलोंके ऊपर मुँह उठाये, एक छोटी-सी पहाड़ी-श्रेणी पीछेकी ओर चली आ रही है और कोई सर्प उसके ढालपर लेटकर शिखरपर अपना फन फैलाये हुए है। अब तक बायीं ओर वन-वृक्षोंकी ओटमें सब कुछ छिप गया है। दाहिनी ओर भी वृक्षों और झाड़ियोंसे घिर रहा हूँ। यह क्या, चारों ओरसे मैं घिर गया हूँ। सामनेकी सड़क समाप्त है, लेकिन नहीं, यहाँपर मोड़ है। मुड़कर देखता हूँ सामने दो खम्भे खड़े हैं, यहीं सेण्ट स्टेनिसलॉस आश्रमका, इस ओरका सीमा-द्वार है। मैं अभी तक अपने कॉलेजकी सीमाओमें ही था। बाहर निकलकर देखता हूँ एक खम्भेपर लिखा है—प्राइवेट। कौतूहल होता है, इस जंगलमें भी इसकी आवश्यकता!

अब देखता हूँ तो पीछे वृक्षोंका घना समूह मात्र है, कुछ दूर तक रामबाँसके दलदार नुक़ीले पत्तोंवाले झुरमुटोंसे आश्रमकी सीमा-रेखा बनी हुई दिखायी दे रही है। बायीं ओरका बहुत बड़ा बाड़ा गोचर हो गया है, उसीकी दीवारसे लगी हुई एक सड़क चली गयी है, शायद यही शहरसे आनेवाली सड़क है। यही सड़क सामने होकर पहाड़ी घाटीमें ऊपर चढ़ गयी है। दूसरी ओर बाड़ेके सूने फाटकके सामनेसे होकर एक लाल बजरी-की सड़क पहाड़ीके बायें पार्श्वकी ओर थोड़ी दूर जाकर मिट जाती है। मेरे पीछेकी कॉलेजकी सड़क अदृश्य है, जैसे किसी जादूगरने राजकुमारके पीछेका रास्ता लपेटकर ग़ायब कर दिया हो। सुबह सात बज चुके हैं, पर चारो ओर बेहद सुनसान है। आगे बढ़नेमें भय लगता है। मैं डर रहा हूँ, यह मुझे अपनेपर ही व्यंग्य लगता है। जीवनकी मेरी परिस्थितियोंने मुझे निर्भीक बनाया है, कभी डरा ही नहीं ऐसा तो नहीं है। पर अकेला रह-कर, एकान्तमें रहकर, रात-बिरात, आधी रात घूम-फिरकर, अँधेरी रातमें नदीके किनारे घण्टों बिताकर, मृत माँ-बहिनके सिरहाने रातभर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जागकर, मैं बचपनसे यदि निडर हो सका तो परिस्थितिको श्रेय देना होगा। पर उन परिस्थितियोंको मैंने प्रायः भावशून्य मनःस्थितिमें झेला है, और आज इस एकान्त और निर्जन प्रदेशमें किसी आतङ्कसे उद्वेलित हो रहा हूँ। शायद तभी भयभीत भी जान पड़ता हूँ। लेकिन यह भय, यह आतङ्क कहीं मनको स्पर्श करता है, उसे रसकी स्थिति तक पहुँचाता है।

अब दाहिनी ओर ऊँचे साखू वृक्षोंका जंगल एकाएक समाप्त हो गया है, केवल ऊपर चढ़ते हुए ढालोंपर छोटे-छोटे करौंदा, ढाक आदि वृक्षों तथा फुटूशकी झाड़ियोंकी हरियाली घनीभूत होकर आगे उठते हुए शाल-वनोंके शिखरोंसे एकाकार छोटी-सी श्रेणीके रूपमें हरी घाटीका एक पार्श्व बन गयी है। और सामनेकी पहाड़ी-श्रेणी स्पष्ट और व्यक्त है, सामने सीध-में पूर्वकी ओर मेरे बायें ओर घूमती हुई फैली है। उसका एक ढाल उतरता हुआ सड़कसे मिल गया है, और उतारके दाहिने पहाड़ीके मुख्य शिखरके ठीक नीचे एक छोटी-सी पहाड़ी पादपीठके समान लेटी है। रास्तेपर आगे बढ़ता हूँ। यह विशाल आमका पेड़, एक बार सन्देह होता है, क्या यह आम ही है? इसके विशालकाय तनेसे साधारण मोटे पेड़के तने जैसी सात शाखाएँ फूटती हैं। इधर आम, जामुन, महुआ आदिके विशाल वृक्ष वैसे भी हैं, पर यह आम वृक्षराज लगता है। इसकी विशालता, मनके आतंकमें एक और सिहरनकी तरङ्ग फैलाती जाती है। इसी वृक्षके नीचेसे रास्ता गया है, जान पड़ता है, यह हरी घाटीका प्रहरी खड़ा है। मैं उद्वे-लित मनसे यहाँ खड़ा हूँ, इस वृक्षराजके नीचे और सोचता हूँ क्या घाटीमें प्रवेश करनेकी मुझे आज्ञा मिल सकेगी?

घाटीमें प्रवेश करनेवाली सड़क कुछ ऊपर चढ़कर अदृश्य हो गयी है। न जाने वह घाटीमें उतर गयी है अथवा पहाड़ीपर विलीन हो गयी है। दाहिनी ओर काफ़ी दूरपर हरियालीसे एकरस ढँकी हुई बहुत कम ऊँची लगनेवाली श्रेणी चली गयी है, जिसके और मेरे दाहिनी ओरसे शुरू होने-वाली चढ़ानके साथ ऊपर उठती हुई सड़कके बीचमें असंख्य वृक्षोंकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हरियाली व्याप्त है। बायीं ओर नीचेकी ओर उतरता हुआ ढाल और उसमें बहुत दूरपर पीछेकी ओर हटकर एक पहाड़ीका टुकड़ा आ गया है। सामनेकी पहाड़ी शृङ्खला बायीं ओर अर्थात् पूरबकी ओर प्रशस्त उन्नत शिखरपर चढ़ती है, किञ्चित् उतरती हुई एकाएक कोनिल शिखरका आकार धारण करती है, उसके पास ही दूसरा समरस शिखर गोचर होता है और फिर उतरती-उतरती कुछ दूर जाकर एक छोटे-से शिखरपर चढ़ जाती है। मैं इस विशाल तरुके नीचे खड़ा हूँ। चारो ओर कई धूपके टुकड़े फैल गये हैं, पर इस घने प्रकाशमें भी मन सूनेपनकी भावनासे अतङ्कित हो जैसे! ढालोंपर, शृङ्खलाकी रेखाओं और वृत्तोंपर, चढ़ावपर, वृक्षराजि-के विस्तारपर, झाड़ियोंसे, वृक्षोंके रन्ध्रोंसे सम्पूर्ण आभासित लगनेवाली घाटीमें सूनापन फैला है, अथवा निकलता जान पड़ता है। यही भाव है, जो कभी भालूके रूपमें मेरी ओर बढ़ता आ रहा है, और कभी बाघके रूपमें झाड़ियोंसे निकला आ रहा है। वैसे मुझे ज्ञात है, इस प्रदेशमें भालू तो कभी भी निकल सकता है, पर बाघ नहीं पाया जाता। ऐसा अनुभव होता है, जैसे कोई हिंस्र पशु घात लगाये बैठा है, कहींसे झपटनेवाला है! हर ओरसे मुझे रेंगते हुए सर्पके निकल आनेका आभास भी होता है।

आज पहली बार अपनी दुर्बलताका ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है। क्या मैं अपनी भाव-स्थितिको किसीको बतानेमें लज्जित न होऊँगा? लेकिन ऐसा भी है कि यह भयका भान हो, वास्तविक डर नहीं। वास्तवमें यह डर नहीं कहा जायेगा, केवल आतङ्क मनको घेरे हुए है। एकाएक आगे बढ़नेमें हिचकता हूँ, पर घाटीमें जाकर विलुप्त होनेवाला रास्ता मुझे बरबस अपनी ओर खींच रहा है। कहते हैं साँपकी आँखोंमें और सिंहकी दृष्टिमें एक मोहक शक्ति, एक विचित्र सम्मोह होता है। यह क्या हिंसाका मोह है, आतङ्कका ही आकर्षण है, जो मानव-प्राणोंको इस प्रकार घेरता है। हरी घाटीके प्रवेश-द्वारपर क्या मैं इसी आकर्षणका अनुभव करता हुआ खड़ा हूँ। पर्वत-श्रेणी अपने अनन्त संकेतोंमें मुझे अपनी ओर बुला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रही है, और वनराजि अपनी छायातपोंकी तरङ्गोंसे आमन्त्रित कर रही है। मैं खड़ा अपने-आपका अनुभव करता हुआ सोच रहा हूँ—क्या यह भयका रूप सुन्दर है और इसीलिए आकर्षक भी ? यह भय जीवनके उल्लासको जन्म देता है, मुक्त कल्पनाको आश्रय देता है, यह भय प्रकृतिके विराट् स्वरूपका एक अंश है, उसके सौन्दर्यका एक रूप है और इसी कारण सुन्दर है, आकर्षक है। मनुष्यके सभी भाव शायद उसके जीवनके प्रवाहके असम्पृक्त क्षणोंमें रसमय होते हैं, आस्वाद्य होते हैं।

इसी अनुभूतिके बीच अपने हाथमें गीताके छोटेसे गुटकाका बोध होता है। प्रातः संध्या (एक प्रकारका निजी ध्यान) के बाद हाथमें गीता लेकर टहलने निकल पड़ा हूँ। सोचा था अवसर पाकर कुछ श्लोकों-का पाठ कर लूँगा। ऐसा नहीं है कि संध्या, ध्यान, पाठ सब नियम-पूर्वक किसी गहरे आस्तिक भावसे करता हूँ। यह तो मेरे विश्वास-अवि-श्वासके प्रयोगोंकी एक मनःस्थिति मात्र है। मैं विराट् वृक्षके नीचे खड़ा आतंक और आकर्षणकी भावनासे उद्वेलित गीता पढ़नेका प्रयत्न करता हूँ—'हे अर्जुन, कर्मसे कोई मुक्त नहीं है, क्योंकि कर्म न करनेपर भी व्यक्ति निष्कर्मताको प्राप्त नहीं होता और न कर्म-संन्याससे समाधिकी अवस्था ही प्राप्त होती है।' पढ़ता जा रहा हूँ—**'न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठ-त्यकर्मकृत्। कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।'** कुछ क्षण बाद ही ध्यान हट जाता है और फिर चारों ओरके आकर्षणमें बिखरना चाहता है। पर अब निर्भीक भावसे श्रेणियोंपर, घाटीमें और जंगलमें विचरता हुआ सोच रहा हूँ। क्षणमें जीनेवाला व्यक्ति कर्मसे अलग हो कैसे सकता है, जीना स्वतः कर्म ही है। यह हमारी प्रकृति है, यही हमारे अस्तित्वकी अभिव्यक्ति है। फिर कर्मकी ऐसी अनिवार्यताके बाद गीताकार निष्काम कर्म किसे कहता है ?

सवा सात बज रहे हैं, और हमको साढ़े सातपर ब्रेकफ़ास्टके लिए पहुँचना है। अब आगे बढ़ना नहीं हो सकेगा, और न रुकनेसे चलेगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हरियाली व्याप्त है। बायीं ओर नीचेकी ओर उतरता हुआ ढाल और उसमें बहुत दूरपर पीछेकी ओर हटकर एक पहाड़ीका टुकड़ा आ गया है। सामनेकी पहाड़ी शृङ्खला बायीं ओर अर्थात् पूरबकी ओर प्रशस्त उन्नत शिखरपर चढ़ती है, किञ्चित् उतरती हुई एकाएक कोनिल शिखरका आकार धारण करती है, उसके पास ही दूसरा समरस शिखर गोचर होता है और फिर उतरती-उतरती कुछ दूर जाकर एक छोटे-से शिखरपर चढ़ जाती है। मैं इस विशाल तरुके नीचे खड़ा हूँ। चारो ओर कई धूपके टुकड़े फैल गये हैं, पर इस घने प्रकाशमें भी मन सूनेपनकी भावनासे अतङ्कित हो जैसे ! ढालोंपर, शृङ्खलाकी रेखाओं और वृत्तोंपर, चढ़ावपर, वृक्षराजि-के विस्तारपर, झाड़ियोंसे, वृक्षोंके रन्ध्रोंसे सम्पूर्ण आभासित लगनेवाली घाटीमें सूनापन फैला है, अथवा निकलता जान पड़ता है। यही भाव है, जो कभी भालूके रूपमें मेरी ओर बढ़ता आ रहा है, और कभी बाघके रूपमें झाड़ियोंसे निकला आ रहा है। वैसे मुझे ज्ञात है, इस प्रदेशमें भालू तो कभी भी निकल सकता है, पर बाघ नहीं पाया जाता। ऐसा अनुभव होता है, जैसे कोई हिंस्र पशु घात लगाये बैठा है, कहींसे झपटनेवाला है ! हर ओरसे मुझे रेंगते हुए सर्पके निकल आनेका आभास भी होता है।

आज पहली बार अपनी दुर्बलताका ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है। क्या मैं अपनी भाव-स्थितिको किसीको बतानेमें लज्जित न होऊँगा ? लेकिन ऐसा भी है कि यह भयका भान हो, वास्तविक डर नहीं। वास्तवमें यह डर नहीं कहा जायेगा, केवल आतङ्क मनको घेरे हुए है। एकाएक आगे बढ़नेमें हिचकता हूँ, पर घाटीमें जाकर विलुप्त होनेवाला रास्ता मुझे बरबस अपनी ओर खींच रहा है। कहते हैं साँपकी आँखोंमें और सिंहकी दृष्टिमें एक मोहक शक्ति, एक विचित्र सम्मोह होता है। यह क्या हिंसाका मोह है, आतङ्कका ही आकर्षण है, जो मानव-प्राणोंको इस प्रकार घेरता है। हरी घाटीके प्रवेश-द्वारपर क्या मैं इसी आकर्षणका अनुभव करता हुआ खड़ा हूँ। पर्वत-श्रेणी अपने अनन्त संकेतोंमें मुझे अपनी ओर बुला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रही है, और वनराजि अपनी छायातपोंकी तरङ्गोंसे आमन्त्रित कर रही है। मैं खड़ा अपने-आपका अनुभव करता हुआ सोच रहा हूँ—क्या यह भयका रूप सुन्दर है और इसीलिए आकर्षक भी ? यह भय जीवनके उल्लासको जन्म देता है, मुक्त कल्पनाको आश्रय देता है, यह भय प्रकृतिके विराट् स्वरूपका एक अंश है, उसके सौन्दर्यका एक रूप है और इसी कारण सुन्दर है, आकर्षक है। मनुष्यके सभी भाव शायद उसके जीवनके प्रवाहके असम्पृक्त क्षणोंमें रसमय होते हैं, आस्वाद्य होते हैं।

इसी अनुभूतिके बीच अपने हाथमें गीताके छोटेसे गुटकाका बोध होता है। प्रातः संध्या (एक प्रकारका निजी ध्यान) के बाद हाथमें गीता लेकर टहलने निकल पड़ा हूँ। सोचा था अवसर पाकर कुछ श्लोकों-का पाठ कर लूँगा। ऐसा नहीं है कि संध्या, ध्यान, पाठ सब नियम-पूर्वक किसी गहरे आस्तिक भावसे करता हूँ। यह तो मेरे विश्वास-अवि-श्वासके प्रयोगोंकी एक मनःस्थिति मात्र है। मैं विराट् वृक्षके नीचे खड़ा आतंक और आकर्षणकी भावनासे उद्वेलित गीता पढ़नेका प्रयत्न करता हूँ—'हे अर्जुन, कर्मसे कोई मुक्त नहीं है, क्योंकि कर्म न करनेपर भी व्यक्ति निष्कर्मताको प्राप्त नहीं होता और न कर्म-संन्याससे समाधिकी अवस्था ही प्राप्त होती है।' पढ़ता जा रहा हूँ—**'न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठ-त्यकर्मकृत्। कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।'** कुछ क्षण बाद ही ध्यान हट जाता है और फिर चारों ओरके आकर्षणमें बिखरना चाहता है। पर अब निर्भीक भावसे श्रेणियोंपर, घाटीमें और जंगलमें विचरता हुआ सोच रहा हूँ। क्षणमें जीनेवाला व्यक्ति कर्मसे अलग हो कैसे सकता है, जीना स्वतः कर्म ही है। यह हमारी प्रकृति है, यही हमारे अस्तित्वकी अभिव्यक्ति है। फिर कर्मकी ऐसी अनिवार्यताके बाद गीताकार निष्काम कर्म किसे कहता है ?

सवा सात बज रहे हैं, और हमको साढ़े सातपर ब्रेकफ़ास्टके लिए पहुँचना है। अब आगे बढ़ना नहीं हो सकेगा, और न रुकनेसे चलेगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आकर्षणको समेटकर घाटीसे कल आनेका वादा कर लौटता हूँ। आगे बढ़ते ही देखता हूँ, बाड़ेके सहारे चलनेवाली सड़क नीचे उतरती हुई विलीन हो गयी है। मैं मुड़कर अपने आश्रमके घेरेमें प्रवेश करता हूँ तो फिर वही गोरखधंधा सामने आ जाता है, सामने कुछ ही दूरपर सड़क विलीन हो गयी है। अब दाहिनी ओर खुलापन लगता है, नीचेकी ओर झुकता हुआ जैसे मैदान ही चला गया हो। लौटते समय परिप्रेक्ष्यके बदल जानेसे इस ओर भी जो जंगलका आभास मिलता था, वह केवल मैदानके विस्तारके बीचमें झाड़ियोंके झुरमुट तथा वृक्ष-समूह जान पड़ते हैं। इस ओरकी पहाड़ी, लगता है, कोई विशाल हाथी पैरोंपर झुककर बैठ गया है। बायीं ओरके साखूके जंगल भी अब उतने सघन नहीं हैं, नीचेकी ओर चले गये ढालपर फैले-बिखरे लगते हैं। बीच-बीचकी खेती साफ़ दिखाई दे रही है। और दूर, बहुत दूर सीमान्तपर पहाड़ी श्रेणियाँ हल्की आभासित हो रही हैं। दूसरी ओर वृक्षोंकी सघनता सीमान्त बना रही है। सामने दूरीपर एक पहाड़ी उतरते हुए ढालके विस्तारके चढ़ते-चढ़ते आकर खड़ी हो गयी है। बायीं ओरकी सर्प-शिखर पहाड़ी फिर झाँकती है, उसका साँप वैसा ही लेटा हुआ फन उठाये है। आगे बढ़ते हुए ये दोनों पहाड़ियाँ बार-बार झलक कर ओझल हो जाती हैं। रास्ता हल्का-सा घुमाव लेता है और इसके साथ ही चारों ओरसे पेड़ोंके बीच घिर गया हूँ। अब सारा उतार समाप्त हो चुका है, केवल वृक्षोंके बीचसे सर्पशिखर तथा हस्तिपीठ पहाड़ियाँ कभी दिख जाती हैं और फिर ओझल हो जाती हैं। कुछ आगे चलकर सिवाय पेड़ोंके कुछ नहीं दिखता, लगता है रास्ता एक स्थलपर पहुँचकर नीचे गिर जायेगा। पर अगले कुछ क़दमोंके बाद देखता हूँ कि अपने बँगलेके बिलकुल पास पहुँच चुका हूँ।

कमरेमें पहुँचकर देखता हूँ साढ़े सात बजे हैं। थोड़ी देरमें बुल्केजी आ गये और हमने अभिवादन किया। स्नेहपूर्वक वह मुझसे नींद तथा प्रातःके कार्यक्रमके विषयमें पूछते हैं। मैं अपनी सुखद नींद तथा प्रातः हरी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घाटीकी खोजकी कथा उनको सुना रहा हूँ और वह हमारी मच्छरदानी उठाते हैं, बिस्तर ठीक करते हैं तथा धुले हुए कपड़ोंको निचोड़कर फैलाते हैं। उनको अपने कार्य करते देखकर मुझे संकोच होता है, पर सहज आत्मीयतासे वह मेरे मनके संकोचको दूर कर देते हैं। नाश्तेके लिए हम उसी भोजनालयके पासके छोटे कमरेमें पहुँचे। आज मेज़पर केवल हम दोनों आमने-सामने बैठे हैं। पहले बड़ी रकावीमें पोरिच लाया जाता है, जो एक प्रकारकी सूजीकी लपसी समझी जा सकती है। आटेकी लाल-लाल सिकी हुई डबल रोटी तथा घरका ताज़ा मक्खन। पोरिचमें दूध मिलाया गया और स्लाइसेज़ काटकर गहरा मक्खन लगाया गया। अच्छी भूख है और उसीके अनुरूप खाता भी हूँ, अन्तमें काफ़ीके स्थानपर मुझे दूध पीना पड़ता है, बुल्केजीका प्रबन्ध है। उनका कहना है कि मैं अण्डा नहीं ले सकूँगा, अतः मेरे लिए दूध अनिवार्य है। बुल्केजी इसी बीच यहाँके आश्रम-की व्यवस्थाके सम्बन्धमें बतलाते हैं—खाने-पीनेकी चीज़ोंके सम्बन्धमें यह आश्रम प्रायः स्वावलम्बी है। यह स्थान किसी अँग्रेज़ने चायबगानके लिए चुना था, यहाँकी पहाड़ियोंपर चायकी खेती की जा सकेगी, ऐसा उसका विश्वास था। कई वर्षके प्रयोगके बाद उसने पराजय स्वीकार कर ली और सारा अहाता मिशनरियोंके हाथ बेंच दिया। यहाँकी पहाड़ियोंपर इधर-उधर अब भी चायके पौधे दिखाई दे जाते हैं। आश्रमकी दृष्टिसे यह स्थान आकर्षक है, इसी कारण चुना भी गया है। यहाँ चारो ओर आश्रमके खेत फैले हैं, जिनमें धानकी विशेष रूपसे खेती होती है। इसी कारण यहाँका प्रमुख भोजन भात ही है। गेहूँ बहुत कम होता है, केवल नाश्ते और पर्वके लिए डबल रोटियाँ अट पाती हैं। आश्रमकी निजी डेरी है जिसमें दूध और मक्खन हो जाता है। वस्तुतः यहाँके फ़ादर मिनिस्टर योग्य प्रबन्धक हैं और उन्होंने आश्रमको यथासम्भव स्वावलम्बी कर दिया है। ब्रदर क्लॉसनके परिश्रमसे और भी अच्छी स्थिति हो गयी है, उनका कहना है कि यहाँ बाँस लगानेसे बहुत लाभ हो सकता है और इसके लिए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह स्वयं पन्द्रह-बीस मील बाँसकी पौध लेने गये हैं। ब्रदर साधारण दवा-दारूका प्रवन्ध रखते हैं, एक प्रकारसे आश्रमकी नर्स हैं। खेती आदिका प्रवन्ध फ़ादर मिनिस्टर तथा क्लॉसन अन्य शिक्षा ग्रहण करनेवाले ब्रदर्सकी सहायतासे करते हैं। परन्तु मज़दूरीका मुख्य काम आदिवासी मज़दूर करते हैं।

लौटकर बुल्केजीके कमरेमें हम अपना यहाँका कार्यक्रम निश्चित करने बैठते हैं। आजका दिन हमने छुट्टीका दिन माना है और अधिक समय बात-चीतमें बीत रहा है। मुझे बुल्केजीकी सहायताकी दृष्टिसे दो काम करने हैं, उनकी थीसिसकी भाषा देखते चलना और 'मुक्तिदाता'के नवीन संस्करणकी दृष्टिसे उसकी भाषा ठीक करना। कलसे इन दोनों कार्योंको कुछ निश्चित समय देना है और शेष समयमें अपनी इच्छानुसार पढ़ना-लिखना। बुल्केजी अपनी थीसिसमें संलग्न हैं, अतः वह मेरी अपेक्षा अधिक व्यस्त हैं। उन्होंने तै किया है कि नाश्ता तथा खानेके अतिरिक्त रातके भोजनके बाद हम लोग डेढ़-घण्टा तक नित्य साथ रहेंगे, टहलें-घूमेंगे। यहाँ खानेका समय सात बजे सन्ध्याका ही है, अतः पौने आठके लगभग हम खाली हो जायेंगे। यहाँ उसके बाद काफ़ी-गोष्ठी जमती है जिसमें फ़ादर लोग बातचीत करते हैं और इस बीच विद्यार्थी टहल-घूमकर बातचीत करते हैं। यह कार्यक्रम साढ़े आठ तकका है, पर हम दोनोंने अपने घूमनेका समय नौ बजे तकका रखा। बुल्केजीके कमरेसे वापस आकर मैं अपने कमरेको इस दृष्टिसे देखता हूँ कि यहाँ कुछ दिन रहना है, इसे अपनत्व देना है, अपनाना है। अपनी सारी चीज़ोंको यथास्थान लगानेके बाद सोचता हूँ अब क्या करूँ? मुझे कई पत्र लिखने हैं, पर अभी लेटकर आराम करनेका जी है। मेज़पर मैंने अपने साथकी पुस्तकें लगा दी हैं। लेटकर कुछ पढ़ा जा सकता है। ज़ोलाका 'नाना' समाप्त करना है, पर वह नहीं चलेगा। टालस्टायकी जीवनी ठीक है। ऐसे गहरे द्वन्द्ववाले तथा प्रयोगोंमें संलग्न चरित्रकी कथा उपन्याससे अधिक रोचक लग रही है। टालस्टाय जैसी प्रतिभा युगोंमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कभी जन्म लेती है, पर ऐसा व्यक्तित्व मिलना और भी कठिन है। अपनी आस्था, अपने विश्वासको उसने कभी किसीसे उधार नहीं लिया, उसने जो भी पाया अपने मनके दुर्धर्ष संघर्षके माध्यमसे ही। जीवनकी सारी दृष्टि उसने अपने-आप विकसित की, इसके लिए उसे चाहे जो मूल्य देना पड़ा हो। और अपनी पत्नीको लेकर उसे कितना मानसिक मन्थन झेलना पड़ा।....फिर बेचारी काउण्टेसको किस प्रकार सारी उस विचित्र गृहस्थीको सँभालना पड़ा और वह भी मानसिक आँधी-तूफ़ानके बीच।

बारह बजे बुल्केजी लञ्चके लिए मुझे लेने आ गये। उसी कमरेमें भोजनकी मेज़पर दाल, सब्ज़ी आदि बड़े-बड़े प्यालोंमें रखे हैं और ट्रे में लाल चावलोंका भात। हमने अपनी-अपनी प्लेट्समें कुछ सामान ले लिया, पर यह मोटा चावल मुझसे चल नहीं रहा है। तला हुआ आलू ज़रूर सहायक हो रहा है, बुल्केजीको भी इस प्रकारके खानेका अभ्यास नहीं है और वह भी आलूकी प्रशंसा करते हैं। हमारी सहायता मीठी डिश और पाइन-ऐपिलने वास्तवमें की, क्योंकि इस प्रकार सुखपूर्वक भोजन हो सका। खानेके बाद कुछ देरका आराम और फिर कुछ लिखनेका कार्य करता हूँ। आज तो चार बजेकी चायपर गया, पर निश्चय यह रहा कि यह चाय मेरे लिए व्यर्थ है, क्योंकि इस समय तक मुझे कुछ भी खाने-पीनेकी इच्छा नहीं होती। छः बजेके लगभग नहा-धोकर बाहर निकलता हूँ। बाहरकी ओरवाली सड़कपर वृक्षोंके नीचे टहलता हुआ सोच रहा हूँ। बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ता हूँ, दूर जाना चाहता भी नहीं हूँ। मनमें इस सेंट स्टेनिसलॉसकी बात उठती है। इस आश्रममें कई बूढ़े फ़ादर अपने संघकी सेवा करनेके बाद अवकाश ग्रहण कर यहाँ अपने अन्तिम दिनकी तैयारी कर रहे हैं। इनमें कई अस्सीके आस-पास पहुँच गये हैं और लगभग अवश हो गये हैं। पर फ़ादर ख़जाञ्ची तथा फ़ादर फ़ोर्डके समान कुछ वृद्ध अपने मनोरञ्जनके लिए कुछ काम भी देखते हैं। फ़ादर फ़ोर्ड इस वृद्धावस्थामें भी फूलोंकी देख-रेख करते हैं और एक छोटे बच्चोंकी पाठशाला चलाते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं। बुल्केजीने बताया है कि वह बहुत ज़िन्दादिल हैं। ख़ाजाञ्ची फ़ादर सदा भाव-विभोर रहते हैं, आज ही बुल्केजीने दिखाया है कि वह लगभग तन्मयावस्थामें मदरके चित्रके सामने खड़े हैं। उनको देखकर कौन कह सकता है कि वह इतनी बड़ी संस्थाका हिसाब-किताब पूरी सतर्कतासे रख लेते होंगे। वृक्षोंके नीचे घिरते हुए अँधेरेमें मैं सोच रहा हूँ कि ये सब फ़ादर जीवनके अन्तिम समय किस भावनाके साथ मृत्युकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे? यह कह सकना बहुत कठिन है। अन्तिम समय जीवनके प्रति असम्पृक्त भाव बना पाना सहज नहीं है, ऐसा वही कर सकते हैं जिन्होंने जीवन भर इस प्रकार जी सकनेका अभ्यास किया हो। आकस्मिक रूपसे कुछ नहीं किया जा सकता है। वृद्धावस्थामें माया-मोह घेरता है, छोड़नेके बजाय। मैंने अनुभव किया कि यह इन फ़ादर्सके विषयमें उतना ही सत्य है।

रातका खाना दोपहरके खानेके समान है, इसमें भी वही दाल भात। पर पहली तरक़ीबसे हमने भोजन भली भाँति किया। इस समय भी मेरे लिए एक प्याला दूधका प्रबन्ध है। खाकर बुल्केजीके साथ सामनेकी सीधी सड़कपर बातचीत करते हुए घूमता रहता हूँ। फिर एक पेड़के नीचे सीमेन्ट-की चौकीपर हम दोनों बैठते हैं। हमारी बातचीतका कोई ओर-छोर नहीं है। काफ़ी दिनोंके बाद हम इतने निकटसे बातचीत कर रहे हैं। आकाशके नीचे केवल तारोंका बहुत हल्का प्रकाश है, बल्कि कहना चाहिए असंख्य तारक-राशिने पृथ्वीके अन्धकारको किंचित् हल्का कर दिया है। परन्तु चारों ओर घिरे हुए तथा श्रेणियोंमें फैले हुए अन्धकारसे वृक्षोंकी सघनताका पता चलता है। हम भी अन्धकारकी छायाके नीचे बैठे हैं। परन्तु यह वृक्षोंकी काली आकृतियोंमें असंख्य ज्योतिपुंज कैसा दपक-दपक जाता है? यह यहाँ इतने जुगुनू हो सकते हैं, मैं चकित हूँ। आस-पास तथा सामने काली छायाओंमें खड़े वृक्षोंपर एक ताल और लयके साथ जुगुनू चमक रहे हैं। कैसा अद्भुत इनका यह प्रकाश-नृत्य है! एक क्षणके लिए सारे वृक्ष

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपनी पूरी आकृतिमें असंख्य दीपमालाओंसे जैसे ज्योतित हो जाते हों और दूसरे ही क्षण कोई उनको बुझा देता है। इसी प्रकार फिर एक क्षणके लिए प्रकाश होकर दूसरे ही क्षण अदृश्य हो जाता है। ऐसा जान पड़ता है कोई अदृश्य हाथ इन असंख्य दीपोंको जलाता है और बुझा देता है, और इस क्रममें एक ताल-लयसे युक्त छन्दकी सृष्टि हो रही है। बुल्केजीका कहना है कि उन्होंने भी इतने जुगुनुओंको एक साथ अन्यत्र कहीं नहीं देखा है, कल नगरसे वापस आते समय उन्होंने कुछ वृक्षोंपर और भी अधिक जुगुनुओंको इसी प्रकार चमकते देखा था। पानी बरसनेके बाद यहाँ यह ज्योति-नृत्य नित्यप्रति रातके अँधेरेमें देखा जा सकता है। और अँधेरिया रातोंमें इसका सौन्दर्य सबसे अधिक रहता है। हम दोनों बन्धु प्रकृतिके बीच आनन्दसे उल्लसित और चकित बैठे हैं।

बुल्केजीको यह स्थान बहुत पसन्द है। यहाँ पानी अप्रिलसे ही बरस जाता है, और पानीके बाद मौसम बहुत अच्छा हो जाता है। मैं स्वयं अनुभव कर रहा हूँ कि यहाँ हवा कभी बन्द नहीं होती, सदा उसके झोंके तन-मनको पुलकित करते रहते हैं। इधर कई दिनसे पानी नहीं बरसा है, इस कारण गरमी है। फिर भी ठण्डी हवा बहती रहती है और आश्रमके सभी लोग बन्द कमरोंमें सोते हैं। यहाँ आकर, मैं अपने यहाँ आनेके निर्णयसे अत्यधिक प्रसन्न हुआ हूँ। प्रकृतिके सुन्दर और आश्रमके शान्त वातावरणमें बरसोंकी मेरी थकान दूर हो जायगी, मनका बिखराव व्यवस्थित हो जायगा और इधर जो मानसिक संघर्ष बढ़ता जा रहा है उसको एक दिशा मिल सकेगी। यह प्रकृति और आश्रम ही नहीं, बुल्केजीके स्नेह-का सामीप्य भी मेरा बहुत बड़ा आश्रय है। कभी सोचा है कि क्या बुल्केजीसे मुझे धर्मकी प्रेरणा मिलती है? वह सच्चे ईसाई हैं, और उनको मानव-प्रेमपर बहुत बड़ा विश्वास है। शायद मैं उनके इस धार्मिक भावसे प्रभावित होता हूँ। पर मैं अपनेको टटोलकर भी नहीं पाता कि मुझमें कोई धार्मिक भाव जन्म ले रहा है, उस अर्थमें जिसमें आज धर्म समझा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाता है। एक प्रकारसे मुझे किसी धार्मिक व्यवस्थापर विश्वास नहीं है। कभी आश्चर्य होता है कि इस मनोभावके साथ मैं इस सबके बीच कैसे हूँ? मुझे लगता है इस सबके बीच मैं किसी धार्मिक भावको ग्रहण करता हूँ, व्यवस्थाको नहीं। लेकिन इसमें बुल्केजीका ही महत्त्व है, उनके स्नेह और उनकी आत्मीयताकी विशेषता है जो वह मुझे इस प्रकार अपना कर आश्रय दे सके हैं!....अन्तर्मनसे यह सब अनुभव करता सोच रहा हूँ और प्रत्यक्षमें बुल्केजीसे बातचीत चल रही है। बुल्केजीने बताया कि इस घाटीको पारकर नगरका रास्ता गाँवोंमें जाता है, आगे जंगलोंके बीच आदिवासियोंके गाँव हैं। आश्रमके पासका बाड़ा पिंजरापोल है जिसमें जैनियोंकी ओरसे पशुशाला है। इधर अन्य हिंसक पशुओंका भय नहीं है, हाँ, कभी भालूसे भेंट हो सकती है। लेकिन वह भी सड़कपर शायद ही कभी मिले। बुल्केजी अपनी थीसिसका कार्य शीघ्र समाप्त करना चाहते हैं, वह रेक्टरसे कहकर यहीं टाइपिस्ट बुला लेना चाहते हैं जिससे टाइपका कार्य साथ-साथ होता चले।

अब नौ बज रहा है, उठनेका मन नहीं होता। इस वातावरणमें, प्रकृतिके इस रहस्यमय सौन्दर्यके बीचसे उठनेका मन नहीं हो रहा है। बुल्केजीकी मनःस्थिति मेरे ही समान है, जैसे प्रकृतिके इस ज्योति-नृत्यको देखकर अभी तृप्त न हुए हों। हम स्नेही बन्धु इसी प्रकार इस शिला-खण्ड-पर बैठे-बैठे रात बिता देना चाहते हों जैसे। मेरे लिए स्वाभाविक है, मेरे जैसे साधारण व्यक्तिके लिए स्नेहकी ऐसी आकांक्षा सहज है। पर बुल्केजी साधक हैं, संन्यासी हैं। शायद स्नेहका बन्धन छोड़ा नहीं जा सकता, जिसने स्वीकार किया उससे और जिसने अस्वीकार किया उससे भी। हमको उठना ही है, हम अपने कमरेमें वापस आते हैं। बुल्केजीने मेरे कमरेके लिए एक टाइमपीस ला दी और मेरी मच्छरदानी आदि ठीक करके रातके लिए मुझसे विदा ली। उनको अभी प्रार्थना पूरी करनी है। अब मैं अपने कमरेमें अकेला हूँ, कुछ देर आरामकुरसीपर लेटकर सोचता हूँ—यह सब क्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है ? मैं यहाँ कहाँ हूँ ? मेरे अपने स्वजन कहाँ हैं ? मैं उनसे कितनी दूर हूँ, दूर होता जा रहा हूँ। मेरे संघर्षमें, मेरे मानसिक संघर्षमें उनका क्या आलम्ब मिल सका है। मेरे मित्र, मेरे सुहृद् जनोंने मेरी सहायता की है, पराजयके क्षणोंको झेलनेकी शक्ति और सामर्थ्य दिया है, पर वे भी आज मुझसे कितनी दूर हैं। कौन कह सकता था कि एक सात समुद्र पारका विदेशी जन मेरे स्वजनोंमें इतना स्वजन, सुहृदोंमें ऐसा सुहृद् हो सकेगा जो संघर्ष तथा संक्रान्तिके क्षणोंका अन्तिम सम्बल बन जायगा।....मुझे याद आती है अभी साढ़े नौ बजे लाइट आफ़ हो जायगी और फिर सो जाना विवशता हो जायगी। तुरन्त डायरी लेकर बैठ जाता हूँ, यद्यपि यह समझ रहा हूँ कि आजका लेखा कल ही पूरा कर सकूँगा।

आज प्रातः (अगले दिन) उठकर नहा-धोकर निश्चिन्त हुआ तब सवा छः बजे हैं। अब शीघ्र ही घूमकर वापस आना है, नाश्तेके निश्चित समयपर पहुँचना ही है। मैं कलवाले रास्तेसे विशाल आम्र तरुके नीचेतक पहुँचता हूँ, आज पहिचाने हुए वृक्षों, वनों तथा पहाड़ी चोटियोंको देखता हुआ आगे बढ़ता आया हूँ। मनमें कलके भय तथा आतंकका कहीं पता नहीं है। आज मनमें निश्चय है कि आगे बढ़ूँगा, हरी घाटीमें प्रवेश करूँगा। पिंजरापोलके सामने इस पेड़के नीचे मैं किंचित् ठिठक गया हूँ। सामने घाटीमें प्रवेश करता हुआ रास्ता अदृश्य है, दाहिनी ओर शाल वृक्षोंके जंगलोंसे भरी हरी घाटी गहरे ढालमें फैली जान पड़ती है और फिर वही उठती हुई हरी-भरी पहाड़ी श्रेणीके रूपमें गोचर है। दूसरी ओर यही हरे जंगलोंका ढाल झुकता चला गया है और बहुत दूर जाकर इसीमें सर्प-शिखर पहाड़ी उभर आयी है। इसी प्रकार दाहिनी ओर पीछे चले गये पठारी ढालके बाद हस्तिपीठ पहाड़ी खड़ी है। मुझे घाटीमें प्रवेश करना है, मेरा ध्यान सामने-की पहाड़ी शृङ्खलापर है जो अपना बायाँ पार्श्व फैलाये उत्सुक खड़ी है और दाहिना पार्श्व अपने सामनेकी पादपीठ पहाड़ीमें छिपा रखा है। मुझे लगता है पहाड़ी हरी घाटीमें प्रवेश करनेके लिए मुझे आमन्त्रित कर रही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है और मैं घाटीके आकर्षणसे प्रेरित हो आमन्त्रण स्वीकार कर आगे बढ़ता हूँ। ऊपर चढ़ावपर आगे बढ़ रहा हूँ, पहाड़ी श्रेणी अपनी चोटियोंके साथ पाद-पीठके टीलेके पीछे सिमटी जा रही है। रास्तेपर आगे बढ़ता जा रहा हूँ और फुटूश तथा करेंचकी झाड़ियाँ मुझे घेर-घेरकर आच्छादित कर लेती हैं। इनके बीचमें अदृश्य हो-हो जाता हूँ। मेरे बायें पादपीठ पहाड़ी उठती जाती है और उसके पीछे जैसे सारी पहाड़ी-शृङ्खला मिटी जा रही है। आगेकी चोटीका केवल शिखर भाग दिखायी दे रहा है। दाहिनी ओरकी हरी शृङ्खला भी लुप्त हो चुकी है, दूरपर केवल पीछेकी ओर हटती हुई सर्पफन पहाड़ी दिखायी दे रही है। एकाएक सामने एक मोड़ है और यहाँ मुड़ते ही पादपीठकी चट्टानके ऊपरसे दायीं ओरकी पहाड़ी-का दाहिना पार्श्व प्रत्यक्ष हो जाता है। लेकिन पहाड़ी शृङ्खलाका पिछला भाग अपने बायें पार्श्वकी चोटियोंके साथ बिलकुल अदृश्य है, लग रहा है, पहाड़ी अपने दाहिने विंगमें समाप्त हो जायगी और उसके साथ ही समतल पठार आ जायगा। यहाँ रास्ता बिलकुल सामने उठा हुआ जान पड़ता है। दाहिनी ओर सर्पफन शिखरके दर्शन होते हैं और साथ ही हरी वनराजि-वाली श्रेणी उठती जा रही है। उस श्रेणी तथा इस मार्गके बीच वनोंकी अनन्त हरियाली सघन हो उठी है····पेड़ोंकी हरियालीपर चढ़ते-उतरते हुए ढाल चारो ओर फैले हुए हैं। मैं आगे बढ़ रहा हूँ, पर प्रत्येक पगपर अज्ञात आशंका तथा आतंककी भावना पुनः मनमें उभर रही है। मेरा अस्तित्व जैसे उसके सुखद दबावका अनुभव कर रहा हो····कभी लगता—मुझे बन्दी बनानेके लिए वृक्ष और झाड़ियाँ घिरती जा रही हैं, कभी जान पड़ता पादपीठकी चट्टान मुझे रोकनेके लिए ऊँची उठ रही है और सामनेकी पहाड़ी चोटी वृक्षों और झाड़ियोंसे युक्त पादपीठके ऊपरसे गुरु गम्भीर स्वरमें मुझसे पूछती है—कौन, यहाँ कैसे? फिर दूसरी ओर पीछे विकराल विषधर फन ऊँचा किये मेरा पीछा कर रहा है। दाहिनी ओरकी मिटती-सी और फिर स्पष्ट होकर उठती हुई हरियालीसे आच्छादित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्रेणी घाटीमें हरियालीके अपने तरंगायित जालमें मुझे फँसाना चाहती हो जैसे।

इसी भावनासे अभिभूत मार्गपर चढ़ता जा रहा हूँ, बायीं ओर एक हल्का-सा मोड़ आया और सामने रास्ता समतलमें फैल गया। अब मेरे सामने पहाड़ी शृंखला अपने पूरे दाहिने पार्श्वके साथ खड़ी है, दाहिनी ओरकी हरी श्रेणी उसके सामने केवल आभासित जान पड़ती है, लेकिन वह आगे बढ़कर पहले किंचित् झुककर ऊपर उठ गयी है। जिस पहाड़ी पार्श्वमें मार्ग चला गया है और उस हरी श्रेणीके बीचके निचले प्रदेशकी सघन वनराजि यहाँसे साफ़ दिखाई दे रही है। पादपीठकी चट्टान पीछे छूट रही है, उसकी ओर हल्की-सी शृंखलामें पहाड़ी मिल रही है। कुछ ही आगे बढ़कर एक आमके पेड़के नीचे रुकता हूँ। यहाँसे दिखायी दे रहा है—सामनेका रास्ता आगे बढ़ता-बढ़ता दूर वृक्षोंकी हरीतिमामें अदृश्य हो गया है। आगे बढ़नेमें पहले जैसा भय और आतंक मनको घेरता है, साथ ही अदृश्यमें प्रसरित घाटीका मार्ग अज्ञात आकर्षणसे उद्वेलित करता है। न आगे बढ़ते बनता है और न पीछे वापस लौटते ही। जान पड़ता है मार्ग पहाड़ीके दाहिने विगमें समाप्त हो गया है। आगे क्या होगा? इस विगके पीछे पर्वतके दर्शन कैसे होंगे? दाहिनी ओर श्रेणीका अन्तिम भाग छिपकर फिर एक कुछ ही ऊँची चोटीमें समाप्त हो गया है। मन उत्सुक है—इसके बाद क्या होगा? लेकिन समयपर घर भी पहुँचना है; अतिथिको आश्रमकी मर्यादाका निर्वाह करना ही है। इस तर्कसे मनके आतंकको आश्रय मिलता है। कुछ देर आमके इस वृक्षके नीचे खड़े रहकर अपने फैलते हुए अस्तित्व-को समेटनेका उपक्रम करता हूँ। घाटीकी श्रेणियाँ, वृक्षराजि, शिखर तथा झाड़ियाँ सभी मुझसे कह रहे हैं—'पथिक, यदि आ गये हो तो कुछ देर रुको, आराम कर लो।' हरीघाटीके इस आमन्त्रणसे मनका सारा आतंक और भय विलीन हो गया। मैं प्रसन्न हूँ, उल्लसित हूँ और कहना चाहता हूँ—तुम्हारे लिए ही इतनी दूरसे आया हूँ, कितनी व्यग्र-प्रतीक्षा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन दिनों मैंने की है। कैसे समझाऊँ, हरी घाटी जैसे मेरे अन्तर्तमको पुकार रही हो। मैं आऊँगा, तुम्हारी क्रोड़में बैठकर अपने हृदयकी व्यथाको, मनकी अशान्तिको भूल जानेकी कोशिश करूँगा।

लौटनेके लिए मुड़ते ही ठिठक जाता हूँ। यह क्या ? सौ दो-सौ क़दम आगे ही तो हमारा रास्ता समाप्त हो गया है, यह तो चारो ओर आकाश-ही-आकाश छाया हुआ है। एक क्षणमें सारा परिप्रेक्ष्य बदल सकता है, इसकी कल्पना कौन कर सकता था। हरी श्रेणी जो मेरे अब बायें आ गयी है, एकाएक समाप्त होकर आकाशमें लीन हो गई है। मार्ग भी आगे सीमान्तसे मिल गया है। और दाहिनी ओरकी पहाड़ी जैसे आकस्मिक रूप-से आगे बढ़ते ही घनी हरियालीके उतारमें समाप्त हो जायेगी। मनमें आ रहा है—क्या मैं इसी मार्गसे आया भी था ? मनमें कौतुक है—यह तो सब कुछ बदल गया है। आगे बढ़ता जा रहा हूँ, आकाशमें मार्ग जहाँ समाप्त होता है, वह स्थल निकट आता जा रहा है। उस स्थलपर पहुँचते ही रास्ता दाहिनी ओर मुड़कर एकदम नीचे उतरता है, और यहाँ सामने एक दूसरा आश्चर्य फैल जाता है। दायीं ओर हरियालीकी राशि नीचे उतरकर फैल गयी है, फैलती जा रही है, आगे बढ़कर उसमें मैदान और खेतके टुकड़े बीच-बीचमें आ गये हैं। और आगे बढ़कर पेड़ोंकी सघनताके बीचमें सफ़ेद-सफ़ेद बँगलोंमें हज़ारीबाग़ नगर झलक रहा है। बायीं ओर अपने पूरे आकारमें सर्प-फन पहाड़ी कुछ दूरीपर स्पष्ट गोचर है, और उसके पीछे धुँधले-धुँधले बादलों-सी एक श्रेणी चली गई है। ज्यों-ज्यों घूमकर नीचे उतर रहा हूँ, मेरे बिलकुल सामने आश्रमकी वृक्षराजि आती जाती है, आश्रमके कॉलेज अथवा बँगला आदिकी इमारतोंका आभास भी नहीं मिल रहा है। अब दाहिनी ओर ढालू मैदानमें वृक्ष तथा झाड़ियोंके समूहके अतिरिक्त कुछ दिखायी नहीं देता, दूरीपर हाथी-पीठ पहाड़ी और उसके आगे एक दूसरी पहाड़ी दिखायी देती है। आगे बढ़नेसे पाद-पीठ चट्टानके पीछे यह सारा दृश्य ओझल होता जाता है। मार्गके मुड़ते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहनेसे झाड़ियोंके बीचसे बायीं ओरका दृश्य मिल जाता है, कभी-कभी सर्प-फन शिखर दिखाई दे जाता है। लेकिन और आगे बढ़नेपर यह सब भी अदृश्य हो जाता है। आश्रमके साखूके जंगलके बीचमें कॉलेज और गिरजा-की लाल छत झलक रही हैं। पिंजरापोल भी दिखायी देने लगा है। और अब मैं उसी विशाल आमके पेड़के नीचे आ गया हूँ।

देर हो रही है, लम्बे डगों पुराने मार्गसे होकर बँगला पहुँचता हूँ। आज महसूस हुआ कि नहा-धोकर घूमने जाना ठीक नहीं है। घाटीमें चढ़ने-उतरनेमें पसीना-पसीना हो गया हूँ। कुछ ही मिनटमें बुल्केजीने मेरे कमरे-का द्वार खोलकर नमस्ते की। मेरे और उनके कमरेके बीच एक बड़ा-सा कमरा है जिसे हम पैसेज़के रूपमें इस्तेमाल कर रहे हैं। उन्होंने मेरे प्रातः भ्रमणके विषयमें प्रश्न किया और मैंने बता दिया। नाश्ता करनेके बाद बुल्केजी अपने कार्यमें लग गये और मैं अपने कार्य-क्रमको एक रूप देना चाहता हूँ। आठसे बारह तक चार घण्टे मिलते हैं, फिर एकसे छः तक पाँच घण्टे सुविधापूर्वक मिल सकेंगे। इस प्रकार लगभग नौ घण्टे मुझे आरामसे काम करनेके लिए मिल सकते हैं। इतनी सुविधा और आरामके बीच काम करनेका भी अपना आनन्द है, शान्तिपूर्ण वातावरण और निश्चिन्तता! बुल्केजीकी थीसिसको पढ़नेके लिए एक घण्टा पर्याप्त होगा, ३ से ४ तक का समय हमने साथ-साथ अनुवाद कार्य करनेके लिए रखा है, बुल्केजीको कुछ अंशोंका अनुवाद करना है। एक घण्टा 'मुक्तिदाता' की भाषा सुधारने के लिए रखा जा सकता है। इतना समय देनेसे सभी काम सुविधापूर्वक मेरे यहाँसे जानेके पूर्व समाप्त हो सकेंगे। शेष समय स्वाध्याय और चिन्तनमें लगाया जा सकेगा। स्वाध्यायके लिए गीता, लव ऑफ़ गाड, टालस्टायकी जीवनी, सेण्ट थेरेसा आदिकी जीवनियाँ चुन ली हैं। यहाँकी लाइब्रेरीमें कैथलिक धार्मिक साहित्यका विशेष संकलन होना स्वाभाविक है और मैंने यहाँ कुछ धार्मिक पुस्तकें पढ़नेका निश्चय किया है। मैं कुछ रहस्यवादी सन्तोंकी जीवनियाँ विशेष रूपसे पढ़ना चाहता हूँ। इन जीवनियोंमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अलौकिक कृत्योंका महत्त्व बहुत अधिक है, और मैं इनके जीवनके साथ अपने देशके सन्तोंके जीवनको रखकर देखना चाहता हूँ। लिखनेके कार्यमें विशेष मन नहीं लग रहा है, अतः डायरी लिखनेके अतिरिक्त अन्य कोई कार्य शुरू करनेका विचार नहीं है।

आज रविवार है, भोजनमें कुछ विशेषता है। बुल्केजीने बताया रविवार तथा पर्वके दिन यहाँ खानेमें कुछ विशेषता रखी जाती है। अन्य दिनों मुख्य हालमें भोजनके समय कोई-न-कोई विद्यार्थी किसी धार्मिक पुस्तकसे कुछ अंश सुनाता रहता था, पर रविवार अथवा पर्वके दिन साधारण प्रार्थनाके बाद बात-चीतकी छूट रहती है। यही कारण है कि हमारे भोजनके छोटे कमरे तक बातचीतकी गुँजार आती रही। दोपहरके भोजनके बाद जूनियरेटका एक विद्यार्थी एन्योनी मुझसे मिलने आया, वह हिन्दीमें रुचि रखता है और मुझसे कुछ सीखना चाहता है। यह दक्षिणका विद्यार्थी बातचीतमें सौम्य है, पहले दिनसे ही वह मुझे प्रभावित करता है। मैंने उसे सहायता देनेका वचन दिया। मैंने कहा—'तुम्हारा जब जी चाहे आ सकते हो, मैं सहर्ष समय दे सकूँगा।' वह प्रसन्न होकर गया और उससे मेरी मित्रता हो गयी। यहाँ इस आश्रममें जेजुयिट संघमें दीक्षा प्राप्त करनेवाले फ़ादर्सकी प्रारम्भिक शिक्षाका प्रबन्ध है। संघमें प्रवेश करनेके लिए इण्टरमीडियटकी शिक्षा एक प्रकारसे अनिवार्य है। प्रायः ये विद्यार्थी पहलेसे संघ द्वारा संचालित साधारण स्कूलोंसे आते हैं, और उनकी धार्मिक रुचि आदिके सम्बन्धमें पहलेसे सूचना रहती है। इसके अतिरिक्त संघमें प्रवेश करनेके लिए आनेवाले विद्यार्थियोंको एक-दो सप्ताह नियम-पूर्वक रखकर देखा जाता है कि उनकी वास्तविक रुचि धर्ममें है कि नहीं है। इसके बाद ही प्रवेश मिलता है। पहला, दो वर्षका कोर्स नोविशियेट कहलाता है, और इस नोविश कालमें विद्यार्थियोंको अधिकतर ध्यान, मनन, चिन्तनका अभ्यास कराया जाता है। इनको बाहरके लोगोंसे मिलने-जुलनेका विशेष अवसर भी नहीं दिया जाता। दो वर्षके अभ्यासके बाद इन समस्त

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विद्यार्थियोंको नोविश मास्टर दस दिनका मौन व्रत रखाता है और इसके अन्तमें विशेष उत्सवके साथ इनका संघका प्रारम्भिक प्रवेश घोषित किया जाता है। इस बीच यदि किसी विद्यार्थीको धार्मिक जीवनके उपयुक्त नहीं समझा जाता है तो उसे वापस जानेकी सलाह दी जाती है। इन दो वर्षोंके बाद जूनियरेटका कोर्स प्रारम्भ होता है जिसमें विद्यार्थीको लैटिन तथा ग्रीककी विशेष शिक्षाके साथ अन्य विषयोंकी शिक्षा भी दी जाती है। यह कोर्स भी दो वर्षोंका है, और ये दो कोर्स ही इस आश्रमके कॉलेजमें हैं, आगेकी शिक्षा के लिए इन विद्यार्थियोंको अन्यत्र जाना पड़ता है। जेजुयिट संघमें प्रवेश करनेके लिए अध्ययनकी बहुत लम्बी व्यवस्था है। इस शिक्षाके बाद प्रत्येक विद्यार्थीको तीन वर्ष दर्शन, चार वर्ष धर्मशास्त्रकी शिक्षा लेनी होती है और इसके अतिरिक्त दो वर्ष किसी कॉलेजमें पढ़ानेका कार्य भी करना होता है। अन्तमें फ़ादरहुडमें प्रवेश करनेके पूर्व एक वर्ष साधनाका जीवन भी बिताना पड़ता है जिसमें चिन्तन, मनन तथा स्वाध्याय करना होता है। यह टर्शन-शिपका काल कहलाता है। यहाँ इस साधनाके वर्षको पूरा करनेकी भी व्यवस्था है।

रातके भोजनमें सुस्वादु पुडिंग तथा क़लमी आमसे परितृप्त होकर हम दोनों उसी सीमेंटकी बेंचपर बैठकर जुगुनुओंका नृत्य देख रहे हैं। बुल्केजीने प्रस्ताव किया, क्यों न हम लोग यहाँ बैठनेके बजाय घूमने चला करें और वहीं कहीं बैठकर बातचीत किया करें। कभी हम लोग सड़कपर नगरकी ओर जा सकते हैं और कभी आश्रमके तालाबकी ओर घूमने निकल सकते हैं। तय हुआ कि कलसे हम लोगोंका कार्यक्रम यही रहेगा। सीमेंटकी शिलापर बैठकर हम बातचीतमें संलग्न हैं। बुल्केजी प्रसंगवश अपने परिवारकी चर्चा करते हैं। मेरे मनमें सदासे कौतूहल रहा है कि बुल्केजी जैसे स्नेही व्यक्ति अपने परिवार, माँ-बापको किस प्रकार छोड़नेमें समर्थ हो सके। बुल्केजीने बतलाया कि संघमें प्रवेश होनेके समय भी उनको इस बातकी छूट थी कि वह चाहें तो अपने देश बेलजियम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में रह सकते हैं। पर उनके मनमें भारतके प्रति न जाने कैसा अज्ञात आकर्षण कार्य कर रहा था; उन्होंने संघमें प्रवेश करनेके साथ ही भारत आनेका निश्चय कर लिया था। भारत आनेके पूर्व उन्होंने जर्मनी जाकर दर्शनका अध्ययन किया था, और फिर आइंसटाइनके सापेक्षतावादको समझनेके लिए उच्च गणितका अध्ययन भी किया था। वस्तुतः धर्म-संघमें प्रवेश करनेके पूर्व वह इंजीनियरिंगके विद्यार्थी थे। मेरे मनमें यह जिज्ञासा है कि बुल्के भाईने अपने संघ-प्रवेशके संकल्पको अपने परिवारमें किस प्रकार घोषित किया होगा, उसको उनके परिवारके लोगोंने, विशेषकर उनकी माँने किस प्रकार ग्रहण किया होगा? पर मैं इस विषयमें प्रश्न करनेमें संकोच करता हूँ। आज वह स्वतः अपने अतीतके प्रति संवेदनशील हो गये। उनकी स्मृतियाँ जाग गयी हैं। वह बेलजियमके फ़्लिमिश प्रदेशके अपने निवासस्थान, छोटे-से क़स्बेका ज़िक्र करते हैं। यह लिस्सवेग नामक क़स्बा केवल समुद्रसे कुछ मीलकी दूरीपर स्थित है, यहाँसे विशाल पत्थरोंके बाँधसे टकराते हुए समुद्रकी हूहाकारको साफ़ सुना जा सकता है। वेस्टरली विण्ड (पश्चिमी हवा) के अनवरत चलनेवाले थपेड़ोंसे यहाँके वृक्ष भी तिरछे उगते हैं। बुल्केजी अपने क़स्बेके निकटके सागरकी आवाज़को जैसे सुन रहे हों, उसके बाँधपर घूमते हुए जैसे उसके विविध रंगोंको देख रहे हों, पश्चिमी हवाके खिलाफ़ साइकिल दौड़ानेका आनन्द ले रहे हों। उनके उल्लेखोंसे मेरी कल्पना जाग गयी है, और मैं स्वयं अनुभव करने लगता हूँ जैसे मैं ही समुद्रका हूहाकार सुनता हूँ, सागरकी तरंगोंपर बनते-मिटते अनेक रंगोंको देखता हूँ और वेस्टरली विण्डके झोंके मेरे ही तन, मन, प्राणको पुलकित कर रहे हैं।

कॉलेजका साढ़े आठका घण्टा बजे देर हो चुकी है, अब नौ बजनेवाला है। हमको वापस लौटना है, हममें-से कोई भी उठना नहीं चाहता। पर नौ तक कमरोंमें पहुँचना ही चाहिए, आध घण्टा बुल्केजीको प्रार्थना आदिके लिए और मुझे सोनेके पूर्व डायरी लिखनेके लिए चाहिए ही। लेकिन इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकृतिके वातावरणमें जो चर्चा चल रही थी, वह मेरे मनको बहुत समय छोड़ती नहीं है। सोचता हूँ अभी ऐसे अवसर तो रोज़ ही मिलेंगे। बुल्केजी विदा लेकर चले गये है, और मैं अपने कमरेमें अकेला सोच रहा हूँ। सात सागर पार अपने परिवारको छोड़कर, अपने स्नेही जनोंको छोड़कर कोई कैसे आ सकता है। यह कौन-सी प्रेरणा होगी जिसने इस जनको नये देशमें, नये लोगोंके बीचमें आनेके लिए विवश कर दिया है। आज वह इस देशको अपना देश मानते हैं, यहाँके वासियोंको अपना मानते हैं, यहाँ मेरे जैसे लोगोंको अपना स्वजन मानते हैं! और इस प्रसंगमें सबसे करुण बात मुझे लगती है कि इनको एक अत्यन्त स्नेहमयी माँ हैं, ममताशील पिता हैं, प्रेम करनेवाले भाई-बहन हैं। कहा जा सकता है कि यह धार्मिक प्रेरणा थी जिसके कारण इनको सब कुछ छोड़ना पड़ा है। संघमें प्रवेश होनेकी यह प्रतिज्ञा है कि व्यक्तिको निःसंग होना पड़ेगा, निर्धन रहना पड़ेगा। पर फिर भी देश छोड़नेकी विवशता तो नहीं थी। फ़ादर बुल्केके एक छोटे भाई सेकुलर प्रीस्ट हैं और वह देशमें ही हैं। वहाँ संघमें रहकर भी वह रह सकते थे। और ऐसा भी नहीं है कि संघमें पिता-माता आदिसे मिलने-जुलनेके सम्बन्धमें ही कोई प्रतिबन्ध हो।

बुल्केजीको छोड़कर मेरा ध्यान उनकी माँकी ओर बरबस जा रहा है। बुल्केजीने बतलाया है कि उनकी माँ ममतामयी हैं, सबसे बड़े पुत्र होनेके कारण उनका स्नेह उनके प्रति और भी अधिक रहा है। आज भी बुल्केजी माँको पत्र लिखनेमें लापरवाही कभी नहीं करते। वह जानते हैं कि माँ उत्सुक और व्यग्र भावसे उनके पत्रोंकी प्रतीक्षा करती हैं, उनके प्रत्येक पत्रको अनेक बार पढ़ती हैं, उनको सँजोकर एक क्रमसे रखती जाती हैं। बीस वर्षसे यही उनका एक सहारा रह गया है। बुल्केजीकी लिखी हुई हर पुस्तककी प्रति वह कोमलताके साथ अपनी अलमारीमें रखती हैं। माँने बुल्केजीकी प्रत्येक वस्तुको सुरक्षित रख छोड़ा है, और इस म्यूज़ियम-को देखकर उनको सन्तोष मिलता है। यह समाचार भी बुल्केजीको

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माँसे नहीं अपनी बहिनसे मिलता है। माँ तो अपने पुत्रके मार्गको सदा प्रशस्त रखना चाहती हैं। उन्होंने अपने हृदयकी कोमलताको पुत्रके सम्मुख कभी व्यक्त नहीं होने दिया। अब लाइट ऑफ़ हो चुकी है और मुझे सोने जाना है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घाटीका साक्षात्कार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ७ :

अगले दिन (शनिवार) सुबह शौचादिसे छुट्टी पाकर साढ़े पाँच बजे घाटीकी ओर चल पड़ता हूँ। सोच लिया है कि सवा घण्टामें वापस आकर नहा-धोकर बुल्के भाईके साथ ब्रेकफ़ास्टपर जानेके लिए तैयार हो जाऊँगा। कॉलेजके रास्तेपर होता हुआ आगे बढ़ रहा हूँ, आज यहाँ आनेके बाद प्रथम बार उस उल्लासकी स्मृतिका अनुभव कर रहा हूँ जो इस स्थानको लेकर महीनोंसे मेरे मनमें कौंधती रही है। पहले दिनों यहाँके वातावरणके प्रति मनमें संकोच रहा है, अपरिचयका आतंक भी रहा है और किसी क़दर अज्ञात भयकी सृष्टि भी करता रहा है। पर नवीनताका संकोच दूर हो रहा है, परिचयके साथ आतंक कम हो रहा है, भय विस्मयके उल्लासमें बदल गया है। प्रकृतिके साथ परिचय हो चला है, उसके साथ मन अब रमने और फैलने लगा है। मनमें उठती हुई किसी तरंगके ऊपर जैसे मैं, मेरा अस्तित्व, उमड़ता हुआ ऊपर उठता जा रहा है। सेमेनरीकी सड़क छोड़कर विशाल आमकी पेड़की बगलसे होता हुआ घाटीकी चढ़ानकी ओर बढ़ रहा हूँ। आमके पेड़ने अपने विशाल तनोंके ऊपर फैली हुई सघन डालियोंसे संकेत करके मुझे रोकनेका आग्रह किया हो जैसे। पर मैंने उत्तर दिया—'मित्र, बहुत व्यस्त हूँ। आते-जाते मिलना होगा ही, अभी इस घाटीमें बहुतोंसे परिचित होना है, बहुतों तक पहुँचना है।' कुछ आगे चढ़ते ही पादपीठने अपने आँचलको पसारकर इच्छा प्रकट की कि हमसे भी मिलते जाओ। दाहिनी ओरकी उकसती हुई सर्पशिखरकी पहाड़ीपर एक दृष्टि डालते हुए मैं कह देता हूँ—'तुम्हारे अंचलसे होकर तो मैं आता-जाता ही रहूँगा। अभी फ़ुरसत नहीं है, पर कभी अवसर मिला तो तुम्हारे ऊपर सन्ध्या अवश्य बिताऊँगा।' सामनेकी पहली चट्टानशिखर पहाड़ी उझक-उझककर आमन्त्रित कर रही है और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं आगे बढ़ता जा रहा हूँ। उसी कलके आमके पेड़के नीचे कुछ क्षणोंके लिए झिझका, पर आज आगे बढ़नेका आकर्षण और उत्साह भय और आतंककी भावनासे अधिक प्रबल होकर अपनी ओर खींच रहा है। मैं चट्टानशिखर पहाड़ीके दाहिने पार्श्वके पास समाप्त होती सड़कपर बढ़ता जा रहा हूँ, मेरे दृष्टिपथपर दाहिनी ओरकी, विस्तारमें फैली हुई वृक्षाच्छादित घाटी और पहाड़ी श्रेणी है।

पेड़के आगे निकलते ही दाहिनी ओरकी हरी श्रेणी झुककर एकाएक एक बहुत कम ऊँची पथरीली पहाड़ी चोटीमें समाप्त हो गई दिखाई दे रही है। आगे जहाँ बाईं ओरकी शृंखलाके चट्टान शिखरका विंग (पार्श्व) पास आ जाता है, एक पहाड़ी नाला इसी ओरसे आकर रास्ता काटता है। इस-पर एक पुल है जिसके बाईं ओर एक बरगद छितराये हुए पत्तोंको अपनी डालियोंपर बटोरे खड़ा है। दाहिनी ओर नालेके पानीके फैल जानेके कारण छोटा-सा पोखरा बन गया है जिससे लगे हुए आदिवासियोंके धानके खेत हैं। अब दाहिनी ओरका विस्तार आगे बढ़कर अन्तिम उठान (श्रेणी) के रूपमें स्पष्ट हो जाता है। इसके आगे ढालू वनोंका हरा-भरा अनन्त विस्तार भी क्रमशः सामने फैलता जाता है। साखूके वनोंके इस विस्तारके बीच-बीचमें आबादी और खेतीका भी आभास मिल रहा है। बहुत दूरीपर वृक्षोंसे हरी गहरी रेखा भर जान पड़ती है और सीमान्तपर धुँधली-धुँधली पहाड़ी श्रेणियाँ गोचर होती हैं। पुलके आगे कुछ दूर बढ़नेपर बाईं ओरकी झाड़ियाँ कम होती जा रही हैं और चट्टानशिखर पहाड़ी पास आ गई है जो अपने विंगके आगे झुककर समाप्त हुई जान पड़ती है। सामने इसीके साथ सड़क भी समाप्त हुई जान पड़ रही है। बाईं ओर वही ढालू चली गई वनराजि तथा सीमान्तका दृश्य ! मैं मोहाविष्ट आगे बढ़ता जा रहा हूँ—जैसे कोई मोहक शक्ति मुझे खींचती जा रही हो। थोड़ा बढ़ा ही हूँगा कि पार्श्वके ऊपर एक विशाल चट्टानकी समतल चोटी अपने कठोर सिरको ऊपर उठाये झाँकने लगती है। चकित हूँ कि यह कहाँसे आ गई ? अभी तक यही जान पड़ता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था कि चट्टानशिखरके बाद दूसरी ओर उसका ही पिछला हिस्सा होगा और सड़क घूम जायगी। पर अब ज्यों-ज्यों विंगको पार कर रहा हूँ यह विशाल पाषाणी समतलशिखर अधिकाधिक स्पष्ट और गोचर होता जाता है।

यहाँ रास्तामें हल्का मोड़ है, और इस मोड़को पार करते ही पहले शिखरके पीछे एक पूरी श्रेणी आविर्भूत होती है। अपने आकस्मिक विस्तार-में मनको आतंकित करती हुई यह शृङ्खला ऐसी चली गई है कि लगता है इसका अन्त ही नहीं है। एकके बाद दूसरा, फिर तीसरा और इसी प्रकार न जाने कितने शिखर आगे निकलते आयेंगे कौन जानता है? दाहिनी ओर ध्यान जाता है, छोटी पथरीली पहाड़ी न जाने कब पीछे छूट चुकी है। सामने वनराजिका विस्तार और सीमान्तकी धूमिल पहाड़ी श्रेणियाँ हैं, इन्हींके बीच कहीं एक भूला-सा गाँव ज़रूर दिखाई दे रहा है। बाईं ओरकी शृंखला आतंकके साथ प्रतिबन्ध उपस्थित करती है, पर दाहिनी ओरका विस्तार मुक्ति देता है। शृंखलाकी चोटियोंमें अभी चट्टानशिखर ही सबसे ऊँचा है, पर ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता हूँ एक पाषाणी समतलशिखरके पास ही वृक्षोंसे आच्छादित श्रेणी चोटीका रूप धारण करती जा रही है, लगता है पीछेसे घूमती हुई सामने निकलती आ रही है। यह हरा-भरा शिखर सबके बीच उभरता आ रहा है। रास्ता समाप्त होते-होते फिर आगे फैल गया है, पर जान पड़ता है आगे बढ़ता-बढ़ता समाप्त हो जायगा, अधरमें गिर जायगा। दाहिनी ओर रास्तेके वृक्षोंकी आड़ समाप्त हो चुकी है और सारे विस्तारमें वृक्षराजि इस तरह फैली हुई हैं कि सिलवटें-सी जान पड़ती हैं। असम भूमिपर हरियालीकी ये सिलवटें जैसे लहरा रही हों। बीच-बीचके वन सम-तल जान पड़ते हैं। पृष्ठ-भूमिकी धुँधली श्रेणियाँ इस चित्रको अधिक उभार सकी हैं। बाईं ओर समतलशिखर पास आता है और हरा-भरा तरुशिखर ऊँचा उठकर उसकी भीषण चट्टानसे उबरना चाहता है। यहाँसे दृश्यका एक दूसरा पक्ष सामने आना चाहता है, चट्टानशिखरसे एक ढाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उतरकर वृक्षोंकी चोटियोंकी रेखा बनाता हुआ तरुशिखरपर चढ़ता चला गया है, बीचमें एक ऊँचाईपर इन दोनों शिखरोंसे कोण बनता है। यहाँ-से चट्टानशिखरपर बड़े-बड़े पाषाण-खण्ड जड़े जान पड़ते हैं। ज्यों-ज्यों सड़कका अन्त निकट आता जाता है, दाहिनी ओरका दृश्य वृक्षोंमें लुकता-छिपता चल रहा है और सामनेका दृश्य क्लोज़ अप होता जा रहा है। यहाँ एक छोटा-सा पुल है और आगे हल्का-सा ढाल शुरू हो गया है, लेकिन उसके बाद ही सड़क थोड़ी दूरपर मिट गई है। दाहिनी ओर नीचे हटकर एक विशाल पीपलका पेड़ खड़ा है और उसके चंचल पत्ते हवामें हरहरा रहे हैं। मैं चौंक पड़ता हूँ, अकस्मात् ही झिल्ली झंकार उठती है और यह ध्वनि एकतान शुरू होकर चलती रहती है, जैसे उसे समाप्त होना ही नहीं है। प्रकृतिके विशाल तथा अज्ञात सौंदर्य और इन ध्वनियोंने मुझे विचित्र रहस्यसे अभिभूत कर लिया है। मनमें उठा—अब बस, देर हो रही है! अन्दरसे जैसे कोई सतर्क कर रहा हो कि समय रहते इस मायाजालसे निकल जाना चाहिए। यह मोहक आकर्षण छल हो सकता है। मैं एक क्षणके लिए इस सारे घेरेसे निकल भागनेके लिए अन्दर-ही-अन्दर व्याकुल हो उठा हूँ।

अब मैं लौट रहा हूँ। इन स्थलोंपर परिप्रेक्ष्यके बदलते ही दृश्य-विधान-में बहुत अन्तर आ जाता है। सब कुछ बदल गया है, सब नया जान पड़ता है। बाईं ओर केवल हरियालीसे आच्छादित ढालू होकर श्रेणीके रूपमें फैले हुए विस्तारका आभास मिलता है। दाहिनी ओर न कहीं अब विशाल पाषाणी समतलशिखर ही है और न कहीं हरा-भरा तरुशिखर ही उझक रहा है जिसके उतरते हुए ढालसे चट्टानशिखरका ढाल ऊपर एक विन्दुपर मिलता है। एकाएक सामने चट्टानशिखर अपने पार्श्वके साथ घेरता हुआ निकट ही समाप्त हो गया है। पीछेसे अवश्य ऐसा जान पड़ता है कि सारी श्रेणी पीछा करती आ रही है। आगे सड़क काफ़ी दूरपर अधरमें समाप्त हो गई जान पड़ती है। नीचेकी घाटीमें हरियालीकी सघनतामें रङ्गोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

असंख्य छायातप पहले नीचेकी ओर उतरते फिर ऊपर चढ़ते हुए फैले हुए हैं। अनुमान होता है कि दाहिनी ओरकी पहाड़ी अब समाप्त हो जायगी। सर्पशिखर आगे बढ़ता हुआ अपना फन बार-बार उझकाता है। अब तो दाहिनी ओरकी पहाड़ी समाप्त है, केवल कुछ ऊँचाईका आभास लेकर श्रेणी क्षितिजसे मिल गई है। सड़क मुड़कर कुछ दूर फैलकर फिर आगे गिरती जान पड़ती है। मैं नालेके पास वृक्षोंके बीच घिर गया हूँ।

कलवाले आमके पेड़के निकट पहुँचते-पहुँचते लगता है देर हो रही है, क़दम बढ़ाना चाहिए। आज मुझे स्नान भी तो करना है। काफ़ी दूर निकल आया हूँ। मनमें संस्कार जागता है कि घाटी चिरपरिचित है, इन सब प्रदेशोंसे मेरा युगोंका परिचय है। घाटीका बिखरा हुआ सौन्दर्य न जाने कबसे मेरी प्रतीक्षामें रहा है। आज जब इसी सौन्दर्यपर मेरा मन बिखर रहा है तो समेटे नहीं समिटता। आँखें चारों ओरसे उसे बटोरती हैं, पर वह उड़-उड़कर बिखर जाता है, और आँखें बच्चे जैसे भोलेपनसे फिर उसे एकत्र करनेमें लग जाती हैं। पर फिर भरे हुए आँचलका छोर छूट जाता है और सारा श्रम व्यर्थ हो जाता है। बच्चे खीझ जाते हैं। मन इस क्रीड़ा-के आह्लादसे विभोर हो जाता है। पैर आगे बढ़ते जाते हैं, मैं ढालसे उतर-कर कब विशाल आमके पेड़के नीचेसे निकल गया, इसका भान नहीं हुआ। फिर घरकी सड़कसे होता हुआ, पेड़ोंके झुरमुटोंके बीचसे सर्पशिखर तथा हस्तिपीठपर कभी-कभी दृष्टि डालता हुआ जब बँगलामें अपने कमरेमें पहुँचा तो केवल पौने सात बजे हैं और नहाने-धोनेके लिए पर्याप्त समय बाक़ी है।

बुल्केजीने सवा सात बजे आकर पुकारा—'रघुवंश'। और मैं कपड़े पहनकर प्रस्तुत हूँ। चायपर उन्होंने बताया कि उन्होंने टाइपिस्ट बुलानेके लिए रैक्टरसे अनुमति ले ली है और हेलेरुसको आनेके लिए लिख दिया है। हेलेरुस बेतियाका टाइपिस्ट है जो बुल्केजीके स्नेहके कारण यहाँ आ जायगा और काम भी अच्छा करता है। नाश्ताके बाद बुल्केजी घूमनेका प्रस्ताव

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करते हैं, आज इस समय उनको फ़ुरसत है। हम लोग सेमेनरीकी सीमाके अन्तर्गत स्थित साखूके जंगलसे घिरे तालाबके किनारे-किनारे घूम रहे हैं। तालाबके बाँधके सहारे घूमते हुए हम अपनी सीमाकी ओर जाते हैं। सारी सीमा रामबाँसके ऊँचे-ऊँचे नोकदार पत्तोंके झुरमुटोंसे बनाई गई है। राम-बाँसके ऊँचे-ऊँचे स्तम्भाकार तनोंमें फूलोंके गुच्छे छाये हुए हैं। कोनिल पत्तियोंके बीचमें यह सफेद कलियों और फूलोंसे लदे हुए स्तम्भ एक पंक्तिमें सुन्दर लगते हैं। सीमाके पार जंगल उतार-चढ़ावके साथ लहरा रहे हैं, पर इन जंगलोंमें साखू कम हैं। तालाबका पानी बाँधके सहारे रोका गया है, लगभग दो फर्लाङ्गके विस्तारमें फैला है और हम बाँधके ऊपरके रास्ते-पर घूम रहे हैं। बाँधमें पानी निकालनेके कई जगह फाटक लगे हुए हैं। सिंचाईके इस प्रबन्धको देखकर यह समझना सरल हो जाता है कि यह सेमेनरी खानेकी सामग्रीकी दृष्टिसे स्वावलम्बी है। हम व्यक्तिगत समस्याओं-पर बात-चीत कर रहे हैं। डाक्ट्रेट प्राप्त करनेके बाद भविष्यमें मुझे क्या करना है, इस विषयमें बुल्केजी चिन्तित हैं। विश्वविद्यालयमें रहना ही मेरे लिए श्रेयस्कर है, पर वहाँकी स्थिति समझना सरल नहीं है। जिस प्रकारके अनिश्चयसे विश्वविद्यालय गुज़र रहा है, उसमें क्या कहा जा सकता है? मेरा कोई समर्थ सहायक भी तो नहीं है। बुल्के जी मुझे अपने किसी जेजुयिट कालेजमें सरलतासे भेज सकते हैं, पर उनका विचार है कि मुझे अभी विश्वविद्यालयके बारेमें विश्वास रखना चाहिए। मैं यह कभी नहीं सोचता कि विश्वविद्यालयमें नहीं हो सका तो कुछ हुआ ही नहीं, मैं जीवन-को किसी इस या उस कल्पना अथवा आकांक्षाका बन्दी नहीं देखना चाहता और न मैं जीवनके किसी अंगको अस्वीकारना ही चाहता हूँ। जो मेरा प्राप्य है उसके लिए बलपूर्वक आग्रह करना भी चाहता हूँ, पर यदि न ही मिले तो जीवनकी यथार्थ स्थितिको झेलनेका साहस मुझमें है। बुल्के भाई मेरे मनको समझते हैं, उससे उनकी सहानुभूति है। वह विरक्त होकर भी मुझे विरक्तिके मार्गपर चलनेका कभी उपदेश नहीं देते। वह समझते हैं कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह मेरा स्वभाव नहीं है, मार्ग नहीं है। वरन् वह मेरे जीवनकी सम्पूर्ण स्वीकृतिकी ही कल्पना करते हैं।

रातके भोजनके बाद हम टहलने निकले हैं, मेज़पर केवल बुल्केजीकी थीसिसकी चर्चा हुई है। हमने उसे साथ-साथ पढ़ना शुरू कर दिया है। आज हम लोग सड़क छोड़कर वृक्षोंके बीचसे होकर पगदण्डीके सहारे पूर्वकी ओरके तालाबपर जाते हैं। इसके तटवर्ती बाँधपर एक पुल है जो सिंचाई-की दृष्टिसे कण्ट्रोलरका काम देता है। इसमें लगे हुए विभिन्न फाटकोंको ऊपर-नीचे चढ़ा-गिराकर नालेमें जितने पानीकी आवश्यकता होती है उतना पानी तालाबसे दिया जाता है। इस समय पानीकी तीन मोटी धारें विभिन्न फाटकोंसे हहर-हहरका नाद करती हुई नीचे गिर रही हैं, और फिर अनेक नालोंमें होकर धानके खेतोंमें सिंचाईके लिए पानी जा रहा है। बाँधके रास्तेसे हम चल रहे हैं और बाईं ओर नीचेके ढालोंपर धानके खेत चले गये हैं। रातके धूमिल अन्धकारमें खेतोंके ढाल आभासित भर होते हैं, उनका रंगरूप कुछ गोचर नहीं है। हमारा यहाँ आनेका प्रस्ताव इसलिए था कि यहाँ मुक्त हवाके झोंके मिलेंगे और खुले आकाशका दृश्य भी देखने-को मिल सकेगा। आकाशके गहरे नीले विस्तारमें तारे खिल गये हैं और तारोंके इस धुँधले प्रकाशके नीचे सारा दृश्यविधान काली छायाओंमें उभर आया है। दाहिनी ओर तालाबका पानी चमक रहा है, बाईं ओर खेतोंके चढ़ाव-उतारके साथ वृक्षोंकी काली छायाएँ भी खड़ी हुई हैं। सामने दूरीपर काली आकृतिवाली वनश्रेणियोंके भी पीछे, उठती हुई पर्वतश्रेणियाँ आभा-सित भर हो रही हैं। फिर भी इन छायाकृतियोंके बीच हम एकाकी ही अनुभव कर रहे हैं। पानीके कलकल नादके अतिरिक्त कोई अपना सहचर नहीं जान पड़ता, सारी प्रकृति रहस्यलोक जान पड़ती है। यह नाद भी किसीका आर्तनाद ही अधिक लगता है। पानीमें सड़ती हुई सेवारकी बदबू मछलीकी सड़ान जैसी आ रही है। फिर भी इस छायालोकमें हम पुलपर बैठकर आध घण्टे तक बातचीत करते रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बात हिंसक पशुओंसे शुरू हुई है। बुल्के भाई बतला रहे हैं कि यहाँ जब पानी बहुत दिनों तक नहीं बरसता है, तो यहाँकी आदिवासी जातियाँ किसी अपरिचित व्यक्तिके हाथ काटकर देवीको चढ़ा देती हैं। उनका विश्वास है कि इस प्रकार देवी सन्तुष्ट होकर अपने अभिशापको हटा लेती हैं, और फिर पानी बरस जाता है। एक बार ऐसे ही हथकटे लड़केको मरा पाया गया था। मैंने हँसकर कहा कि मुझे कोई डर नहीं है, मैं उनको समझा लूँगा। बुल्केजीने भी हँसीमें कहा—'देखिए जी, इन जंगलियोंको तुम समझा तो खूब सकोगे ? पर अब जंगली जातियाँ ऐसी नहीं रह गई हैं, उनका बहुत सुधार हो चुका है। फिर पानी तो अभी ही बरसा है।' मैंने मज़ाकमें उत्तर दिया—'बुल्के भाई, मुझे क्या भय ! मैं तो कह दूँगा मेरे हाथ ठीक नहीं हैं, उनको चढ़ानेसे तो पूजा ही खण्डित हो जायगी।' मेरी बातपर बुल्केजी खूब हँसते हैं, और प्यारसे मेरे दोनों हाथ अपने हाथोंमें ले लेते हैं। इसके बाद वह इस जंगली इलाक़ेकी पेरिशोंके साहसिक जीवनकी कहानी सुनाते हैं। इधर पेरिशें बहुत जंगली उजाड़ प्रदेशोंमें हैं। पेरिश प्रीस्टों (पादरियों) को अँधेरी रातोंमें पुरोहित कार्यके लिए जंगल, पहाड़, नदी-नाले पारकर गाँवोंमें जाना होता है। वे साइकिल, मोटर साइकिल, घोड़ेपर जहाँ जैसा सम्भव होता है जाते हैं। पर कभी-कभी कहीं पैदल ही जाना होता है। बुल्केजीके कमरेके सामनेके कमरेमें जो फ़ादर रिट्रीट (मौनव्रत) कर रहे हैं, उनको भी मध्यप्रदेशके ऐसे ही इलाक़ेको एक पेरिशमें जाना है। परन्तु इन पेरिशोंके पुरोहितोंने निर्भय होकर कार्य किया है, धार्मिक कर्तव्य भावनासे प्रेरित होकर उन्होंने कभी किसी कठिनाईको स्वीकार नहीं किया। इन पहाड़ी तथा जंगली इलाक़ोंमें अनेक बार आते-जाते बाघका सामना हो जाता है, भालूसे निपटना पड़ता है और चीतेकी घातसे सतर्क रहना पड़ता है। इन क्षेत्रोंके पुरोहितोंको इन सबका अच्छा ज्ञान रहता है, उनके पास जंगली जीवनके अनेक क़िस्से भी सुरक्षित रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरे मनमें इन विदेशके दूर देशोंसे आये हुए पुरोहितों (मिशनरियों) के प्रति बहुत कौतूहल रहा है । मैं सोचता हूँ कि किस प्रेरणासे अपने देशसे दूर, अपने जनोंसे दूर तथा अपनी भाषासे दूर ये आते हैं । क्या मानवताके गहन सन्देशके प्रति इनकी यह आस्था है जो उनकी इस प्रेरणाके मूलमें है ? पर ऊपरसे तो धार्मिक सम्प्रदायवादके प्रचार और प्रसारकी भावना ही प्रधान जान पड़ती है । कितने हैं जिनके मनमें वास्तविक मानव सन्देश-की अनुगुंज प्रतिध्वनित होती है ? अधिकतर तो धार्मिक कर्मकाण्डको ही सन्देशका आधार मानते हैं, उसीपर उनका सारा बल भी है । इसी आवेश-में सारे धार्मिक आन्दोलन अपने पक्षके सत्यके सामने दूसरे सभी सत्यके पक्षोंको अस्वीकार कर देते हैं । पर मैं अनुभव करता हूँ कि इनके बीच भी ऐसे अनेक हैं जिनके मनमें ईसाका वास्तविक प्रतीक प्रेरणाका मूल स्रोत है । मैं सोच रहा हूँ फ़ादर वाशको मध्यप्रदेशके घने जंगली इलाक़ेमें रहना होगा, यशपुर, छोटेनागपुरकी पहाड़ियोंके क्रममें अवस्थित जंगलोंके बीचका गाँव है, जहाँ फ़ादर जा रहे हैं । मेरे सामने भूरी दाढ़ी मूछोंसे भरा, मौनव्रतकी तन्मयतामें डूबा हुआ उनका चेहरा उभर आता है ।

अगले दिन फिर घाटीमें प्रवेश करनेकी प्रेरणासे सुबह उसी ओर जा रहा हूँ । अब यह मार्ग परिचित हो गया है, चारो ओर जाना-पहिचाना वातावरण है । धीरे-धीरे यह प्रातः भ्रमण मेरे यहाँके जीवनके उल्लासका मुख्य स्रोत होता जा रहा है । यह ऐसा उल्लास है जो मुझे कर्मकी प्रेरणा दे रहा है । यहाँ आश्रमकी सुख-सुविधा तथा शान्तिके बीच मुझे कार्य करनेकी प्रेरणा मिल रही है । अभी तक मेरे जीवनका क्रम एक विचित्र विरोधाभाससे गुज़रता आया है । जब काम अधिक होता है, उसका भार अनुभव करता हूँ, सारी असुविधाओं और विवशताओंके बावजूद मैं काम करता रहता हूँ । पर जब विश्राम मिलता है, सुविधा होती है, उस समय मैं दिवास्वप्नोंमें अथवा भविष्यकी कल्पनाओंमें जीता हूँ । अकर्मण्यता-की इस स्थितिमें मैं सदा झुँझलाता हूँ, खीझता हूँ । पर स्वभाव भी एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मजबूरी होता है। अब तक मैं वर्तमानसे कभी सन्तुष्ट नहीं हो सका, मैं सदा ऐसे भविष्यकी कल्पना लेकर जिआ हूँ जिसमें मैं वांछित सुविधाओंके साथ अपना कार्य कर सकूँगा। इसी कारण अब तक जो सुविधा और शान्तिका समय मिला है उसे मैंने बेकारीकी आलस्यजन्य तन्द्रामें बिता दिया है। हाँ, इस तन्द्रामें भविष्यकी व्यवस्था और आदर्श जीवनके स्वप्न अवश्य देखता रहा हूँ। आज सोच रहा हूँ कि मैंने भविष्यकी मृगमरीचिका-के भ्रममें अपने वर्तमानको सदा अनुपलब्ध त्यागा है। अब तक मनने वर्त-मानके अपने मूल्यको पहचाना ही नहीं, सदा उसे भविष्यके साधन रूपमें समझा है। ऐसी स्थितिमें वर्तमानसे पलायन करना मेरा स्वभाव रहा है। मैंने कभी वर्तमानको भोगा नहीं, उससे केवल सुलह करके चला हूँ।

ऐसा नहीं कि मैंने कभी आगतको यशलिप्सा अथवा ऐश्वर्यभोगकी कामनासे वरा हो, अन्दर कुरेदनेसे भी मुझे यह कभी नहीं लगा कि मैं यशकामी हूँ अथवा ऐश्वर्यविलासी हूँ। मेरे मनने इन्हें महत्त्व ही नहीं दिया, इसलिए नहीं कि मैं विरक्त रहा हूँ, वरन् मेरी सोचनेकी पद्धति ही ऐसी रही है। इस अनन्त प्रसरित दिक्कालमें कौन क्या प्राप्त कर सकेगा? अनन्त सौरमण्डलोंकी कल्पनामें तथा असंख्य वर्षोंमें प्रसरित कालमें मनुष्य और उसके यशकी स्थिति कितनी नगण्य तथा व्यंगात्मक है। सौ दो सौ वर्ष, अथवा हज़ार दो हज़ार वर्ष भी इस काल-प्रवाहमें कितने अकिंचन हैं। फिर इस क्षणजीवी मानवकी यशलिप्सा क्या, ऐश्वर्यभोग कितना? सोचता हूँ फिर मैं क्या चाहता रहा हूँ, कौन-सी कल्पनामें जीता रहा हूँ! शायद मैंने जीवन अर्थात् जीवनकी प्रक्रियाको ही सब कुछ माना है। मेरे लिए निर्बाध जीवनका अवगाहन ही परम वांछनीय रहा है। कहीं मनमें यह विश्वास विकसित होता रहा है कि जैसे मैं अपनी आत्मचेतनाके लिए सत्यका सबसे बड़ा साक्षी हूँ, उसी प्रकार जीवनके लिए जीने जैसा सत्य कुछ और नहीं हो सकता। परन्तु अभी तक मैंने जीनेके लिए, जीवनकी अभिव्यक्तिके लिए उपकरणोंकी आवश्यकताको जाने-अनजाने माना है। समझता रहा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हूँ जीवनके सौन्दर्यकी उपलब्धिके लिए उपकरणोंको जुटानेका भी एक समय होता है।

मैं चढ़ानपर आगे बढ़ रहा हूँ और आज मेरे मनमें अपने ही विषयमें तर्क-वितर्क उठ रहे हैं। मेरे सोचनेकी यह पद्धति कैसी रही है? एक ओर जीनेकी सहज प्रक्रियाको सत्य माननेका विश्वास और दूसरी ओर भविष्यका इतना मोह! जीनेको मानकर चलनेवाला वर्तमानकी अवहेलना नहीं कर सकेगा। वर्तमान और भविष्यका इतना स्पष्ट भेद मानकर वह नहीं चल सकेगा कि एक उपकरणोंकी योजनाके लिए है और दूसरा उपलब्धिके लिए है। यहाँ आनेके बादसे मेरे मनमें एक नया क्षितिज उभरता हुआ जान पड़ता है, इस नये परिप्रेक्ष्यके साथ ही मेरी दृष्टि भी बदलती जा रही है। यशकी लालसा अथवा भोगकी कामनाके सम्बन्धमें मैं पहले भी अनिश्चित था, पर भविष्य मेरी आकांक्षाका बहुत बड़ा केन्द्र था। और यहाँ अब लगने लगा है कि गत अर्थहीन है और आगत सारहीन है, जो है वह वर्तमान है और उसीको भोगता हूँ मैं! न कुछ था और न कुछ होगा, केवल 'है' आगेसे पीछे तक एकरस फैला हुआ है। आदमी है कि वह इसीको भुलाकर भूत और भविष्यके चक्करमें फँस जाता है। इसी प्रकार विचारोंमें उलझा हुआ मैं आगे बढ़ता जा रहा हूँ, और घाटीका वातावरण मेरा ध्यान अपनी ओर खींचता है। प्रकृतिके इतने आमन्त्रणके बीच अधिक देर तक मेरा अपने आपमें लीन रहना सम्भव नहीं है। क्रमशः चढ़ाई पार कर मैं घाटीके ऊपरी समतलपर आ गया हूँ। और अब दाईं ओर नीची हरी श्रेणीके समानान्तर चट्टानशिखरके विंगकी ओर बढ़ रहा हूँ। मेरे मनमें आ रहा है कि प्रकृतिके इतने विस्तारमें भी मनुष्य कितना अनुदार है। वह क्यों नहीं इन उठती हुई श्रेणियोंके साथ अपने मनके उठानका अनुभव कर पाता, क्यों नहीं वह हरी-भरी घाटीके समान अपने मनको भी भरा-भरा अनुभव करता! ये शिखर कैसे दृढ़ हैं, युगोंके आतप-वातको झेलते हुए विशालताका ऐश्वर्य लिये खड़े हैं! क्या मनुष्यने इनसे कुछ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सीखा है ? मनुष्यके सौन्दर्यबोधमें प्रकृतिका कितना हाथ है ! आगे बढ़ते-बढ़ते सामनेसे बाईं ओर विशाल विस्तृत शृंखलाका दृश्य सामने आ गया है, लगा ऐसा ही मानवताका साक्षात्कार भी हो सकता है।

धीरे-धीरे आगे बढ़ता ही जा रहा हूँ, लग रहा है मैं आज घाटीमें बिलकुल नीचे उतरता जा रहा हूँ। विचारोंकी सघनताके कारण मनमें भय अथवा आतंकका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उतार शुरू होनेके पहले दाहिनी ओर हरी-भरी श्रेणियोंके बाद नीचा होकर चला गया विस्तार और सुदूरकी श्रेणियाँ स्पष्ट दिखाई दे रही हैं। बाईं ओर वृहद् पाषाण-खण्डका समतल शिखर अपने पार्श्वके तरुशिखरके निकट अधिकाधिक व्यक्त होता जाता है और निकट आ रहा है, अब चट्टान-शिखर पीछे छूट गया है और इन दोनोंसे छोटा लग रहा है। आगे कई चोटियोंमें उतरती हुई शृंखला घेर रही है। नीचे घाटीके अन्दर उतरता चला जा रहा हूँ, कभी घने वृक्षोंके बीचसे दोनों ओरके दृश्य झाँक जाते हैं और कभी उनके बीच बिलकुल घिर जाता हूँ। झिल्ली किटी-किटीकी एकरस झंकार कर रही है और मधुमक्खियाँ चारो ओर भनभना रही हैं। धीरे-धीरे यह अनुभव हो रहा है कि मैं अकेला इस घाटीमें अनायास ही क़ैद होता जा रहा हूँ। कुछ और उतरनेपर दाहिनी ओरका दृश्य बन्द हो गया है, बाईं ओर-की चट्टानी तथा वृक्षाच्छादित चोटियाँ अपनी श्रेणीके साथ सामने आ गई हैं, दोनोंके उतरते हुए एक ओरके पार्श्व बीचमें एक कोणपर मिल रहे हैं। फिर मैं आगे बढ़ता जा रहा हूँ, और सब छिपता जा रहा है, छिपता जाता है। अन्ततः उतारके अन्तिम विन्दुपर एक गड्ढेमें मैं बन्दी हो गया हूँ और सारा दृश्य विधान यहाँ समाप्त हो चुका है। सामने सीधी चढ़ाईमें सड़क भी समाप्त हो गई है। लगता है इतने दिनोंसे घाटीमें मुक्त विचरण करते रहनेके अपराधमें घाटीके राजाने मुझे इस प्रकार बन्दी बनाया है। वस्तुतः यह एक नाला है जो पर्वती श्रेणीसे निकलकर दूसरी ओर गया है। इस समय बिलकुल सूखा पड़ा है, और यह स्थल दो राहोंके काटनेसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चौराहा बन गया है। यहाँसे समतल शिखरकी चट्टान बिलकुल मेरे सीधमें है। कुछ क्षणोंके लिए आतंकित हूँ, सिवाय इस शिखरके कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है।

कुछ समय वहाँ खड़े रहनेपर आतंकके स्थानपर मनमें चिन्ताका उदय होता है। अब सोचता हूँ कि कहीं आज देर तो नहीं हो जायगी ? नाश्ता-पर पहुँचना आवश्यक है, क्योंकि इसी समय रोटी (डबल) मिलती है। दोपहर और रातके भोजनमें तो लाल भात रहता है जिसे मैं किसी प्रकार भी खा नहीं पाता, वस्तुतः मेरा मुख्य भोजन तो ब्रेकफ़ास्टके समय ही होता है। लौटनेके लिए मुड़ता हूँ, और मेरे आगे बढ़ते ही सामने हरियाली सघन होकर उठती जा रही है। अब मेरी दाहिनी ओर समस्त पहाड़ी शृंखला पीछे आ गई है, केवल पहली चोटी, चट्टानशिखर मेरे साथ रह गई है। ज्यों-ज्यों ऊपर चढ़ता जाता हूँ हरी-भरी वनराजिके बीच सर्पशिखर उभरता आता है। इसके अतिरिक्त कभी सीमान्त भी झलक जाता है। ऊपर सड़कके समतल बिन्दुसे पहले मोड़के पासके पेड़ोंके कारण दाहिनी ओर-के शिखर दिखाई नहीं देते, पर आगे मोड़ पार कर लेनेपर सारी पहाड़ी श्रेणी स्पष्ट हो जाती है, उसकी चट्टानी, समतल तथा वृक्षाच्छादित चोटियाँ और आगेकी छोटी चोटियाँ भी। पर यह सारी श्रेणी पीछे छूट रही है। सामने दाहिनी ओर तो केवल एक चोटी (चट्टानी) है, बाईं ओर ढालमें हरी-भरी श्रेणी एक बार उठकर फिर जैसे समतल हो गई हो। विभिन्न परिप्रेक्ष्योंसे दृश्यबोध कैसे रूप बदलता है, इसका साक्षात् अनुभव हो रहा है। यही हरी-भरी श्रेणी जाते समय लग रही थी कि पहाड़ी ढालू होकर नीचे चलती चली गयी है, फिर आगे समतल होकर वृक्षोंके सीमान्तमें बदल गई है। यही हरीतिमाका सीमान्त अपनी पृष्ठ-भूमिमें पहाड़ी श्रेणियोंके सीमान्तसे जुड़ा हुआ है। इसी प्रकार जब मैं ढालमें उतर रहा था, उस समय लगता था कि आगे पेड़ोंसे भरा हुआ भारी और विस्तृत गड्ढा है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और आगे बढ़ता हुआ यही विस्तार आकाशमें हरे-भरे सीमान्तके रूपमें उठा दिखाई दे रहा था।

आज नाश्ताके बाद ब्रदर एण्टोनी मुझसे मिलने आते हैं। वह मैसोरके निवासी हैं और जूनियरेट इस वर्ष उत्तीर्ण हो रहे हैं। इनका विश्वास है कि इनके पूर्वज दो हज़ार वर्षोंसे ईसाई हैं, उनका सम्बन्ध नेस्टोरियन चर्च-से रहा है। ब्रदरने हिन्दीमें बातचीत करनेका आग्रह किया, क्योंकि वह हिन्दीका अभ्यास करना चाहते हैं। यह बहुत उत्साही हैं। इनको इस बात-का दुःख है कि इतने वर्षों (हज़ारों) में भी ईसाका सन्देश भली प्रकार भारतमें प्रचारित नहीं हो सका है। ब्रदरमें लगन है जिससे वह असम्भवको सम्भव करना चाहते हैं, उनके मनमें यह संकल्प स्फुरित जान पड़ता है कि वह देशको ईसाका सन्देश पहुँचा सकेंगे ! भारतीय राजनीतिमें भी इनकी रुचि है। फिर आनेका वचन देकर वह चले गये। बादमें बुल्के-जीने बतलाया कि इन ब्रदर्सको बृहस्पतिवारको छुट्टी रहती है, और इस दिन ये सब घूमने निकलते हैं। मैं इन सबके साथ पहाड़ीपर घूमने जा सकता हूँ। एक बार वह स्वयं भी मेरे साथ पहाड़ी चोटियोंपर चलेंगे, इसका वादा भी मैंने उनसे ले लिया है।

हम दोनों मिलकर 'रामकथाकी उत्पत्ति और विकास' की पाण्डुलिपि देख रहे हैं। बुल्केजी उसके अन्तिम प्रकरण लिखते भी जाते हैं और प्रारम्भसे हमने भाषाकी दृष्टिसे देखना शुरू किया है। मैं भाषाकी दृष्टिसे कुछ सहायता दे रहा हूँ, फिर भी अनेक प्रसंगोंपर बातचीत होती रहती है। उनके मनमें कहीं यह सन्देह अवश्य रहा है कि हिन्दीके कुछ विद्वान् ऐसे भी हो सकते हैं जो धार्मिक भावके कारण रामकथा सम्बन्धी इस वैज्ञानिक अध्ययनसे सहमत न हो सकें। एक प्रसिद्ध बंगाली भाषाविद्ने उनके मनमें ऐसा सन्देह उत्पन्न भी किया था। डाक्टर साहब (धीरेन्द्रजी) से समय-समयपर बुल्केजी स्वतः परामर्श करते रहे हैं, और उन्होंने सदा प्रोत्साहित ही किया है। उनकी ओरसे वे आश्वस्त भी है। अन्योंके सम्बन्धमें मैंने उन्हें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आश्वासन दिया कि हिन्दीके विद्वानोंसे धार्मिक अनुदारताकी आशा मैं नहीं करता। वास्तवमें यह हिन्दू मात्रकी प्रकृति है कि वह धर्मके क्षेत्रमें व्यक्तिगत दृष्टिसे संकुचित होकर भी सामाजिक दृष्टिसे उदार ही होता है। इधर आधुनिक युगमें तो व्यक्तिगत अनुदारता भी बहुत कम हो चुकी है। शायद दूसरे धर्मावलम्बियोंको हिन्दुओंके इस दृष्टिकोणको समझनेमें दिक़्क़त भी होती हो। रामको भगवान् माननेवाले व्यक्तिके लिए सामान्य मानव चरित्रकी दृष्टिसे रामकथापर विचार करनेकी पद्धतिपर अनास्था हो सकती है, पर वह उसे दूसरे व्यक्तिका दृष्टिकोण मानकर स्वीकार कर सकता है।

आज रात फिर हम दोनों पेड़ोंकी घनी छायामें सीमेण्टकी चौकीपर बैठे हैं और जुगुनुओंके दीपनृत्यका आनन्द ले रहे हैं। बातचीतके दौरानमें मृतकोंकी चर्चा चल निकली। इस आश्रममें अनेक वद्ध तथा अवकाश प्राप्त फ़ादर्स मृत्युकी प्रतीक्षा करते हुए समय बिताते हैं। अभी हालमें एक छयासी वर्षके वृद्ध फ़ादरकी मृत्यु हुई है। वस्तुतः इस प्रकारकी मृत्युओंके बारेमें किसीको दुःख नहीं होता, क्योंकि यह इस प्रकारकी मृत्यु प्रतीक्षित ही रहती है। फिर भी समवयस्क फ़ादरोंको काफ़ी खलता है, एक तो उनके बीचसे उनका एक मित्र विदा हो जाता है और दूसरे अपनी विदाईकी घड़ीकी आहट भी मिलती है। आश्रममें इस प्रकारकी घटनाएँ क्रम और व्यवस्थाके साथ स्वीकार कर ली जाती हैं। कार्यक्रमोंमें विशेष प्रार्थनाओंके अतिरिक्त कोई अन्तर नहीं पड़ता है। इस विषयमें पच्छिमी ढंग हमारे ढंगसे बहुत भिन्न है। पच्छिमी ईसाई व्यवस्थामें मृतककी विदाई शान्तिपूर्ण ढंगसे सम्पन्न की जाती है, जब कि अपने देशमें हिन्दू व्यवस्थाके अनुसार इस विदाईमें भी एक अजब तरहका आतंकपूर्ण आवेश रहता है। शायद अन्त्येष्टिकी विधिके अन्तरके कारण भी यह ऐसा हो।

बातचीतके दौरानमें बुल्केजी अपने यहाँकी रीतिके विषयमें चर्चा करने लगते हैं। उनको भारतीय ढंग क्रूर लगता है जिसके अनुसार शवको तुरन्त घरसे बाहर करनेका प्रयत्न किया जाता है। उनके देशमें मृतकको ममता-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूर्ण ढंगसे बहुत कोमलताके साथ विदा दी जाती है। मृत्युके बाद मृतकको बहुत अच्छे रंग-विरंगे कपड़े पहनाकर बिस्तरपर लिटा देते हैं, ऊपरसे चादर उढ़ाया रहता है। तीन दिन तक लोग आते रहते हैं; उसको देखते हैं, हाथ आदिका चुम्बन लेते हैं और फिर उसके लिए प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार दूर रहनेवाले स्वजन भी आकर देख जाते हैं। उसके लिए प्रार्थना आदि छपवाकर निमन्त्रणके रूपमें बँटवाया भी जाता है। अन्तिम संस्कारके लिए काफ़िनमें उसे चर्च ले जाते हैं, वहाँ प्रार्थनाके बाद काफ़िन बन्द किया जाता है। अन्तिम प्रार्थना क़ब्रमें शवको सुला देनेके बाद की जाती है। सारा वातावरण बहुत शान्त और शालीन रहता है। वापस आनेपर प्रीति-भोज होता है जिसमें स्वजन तथा सुहृद्जन सम्मिलित होते हैं। इस चर्चाके बीचमें बुल्केजीको अपने बचपनकी एक घटना स्मरण आती है। उनके गाँव-के एक परिवारमें पन्द्रह-सोलह वर्षकी एक किशोरीकी मृत्यु हो गई। उस समय बुल्केजीकी अवस्था छः या सात वर्षकी थी, किशोरीको बुल्केजी भी जानते थे, वह अक्सर उनको खिलाया करती थी। वह अपनी माताके साथ उसको देखने गये। उस समय उसका मुख खुला हुआ था, वह सुन्दर वस्त्रों-में बहुत अच्छी लग रही थी, विशेषकर उसके मुखपर मृत्युकी शान्तिकी नीरवता थी। बालक बुल्केको उसका इस प्रकार नीरव भावसे लेटा रहना जाने क्यों मोहक लग रहा था। जब प्रार्थना करके माँ वापस लौटने लगीं, बुल्केजीने भोलेपनसे कहा—'माँ मुझे यहीं रहने दो, मैं यहीं रहूँगा।' माँने चकित होकर पूछा—'क्यों?' उन्होंने उसी प्रकार उत्तर दे दिया—'मैं इनको देखूँगा, ये कितनी सुन्दर लगती हैं।' इसपर माँ कुछ गम्भीर होकर उनका हाथ पकड़कर घर ले गईं। पर बालक बुल्केकी यह बात किशोरीकी माँको बहुत अच्छी लगी, क्योंकि वहाँ आनेवाले सभी प्रार्थना करनेके बाद लौटनेमें जल्दी करते थे। लड़कीके लिए वहाँ रुकनेकी कोई इच्छा नहीं प्रकट करता था।

इसी प्रसंगमें बुल्केजी अपना एक अनुभव भी बताते हैं। वह भारतमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आये ही आये थे। अभी तक अपने देशकी याद ताज़ी थी, इस देशके प्रति अपनत्वका भाव नहीं जागा था। उन्हीं दिनों एक वृद्ध फ़ादरकी मृत्यु हुई। वह आशा करते थे कि अपने देशके समान यहाँ भी फ़ादरको कई दिन रखा जायगा, और लोग उनके लिए जा-जाकर प्रार्थना करेंगे। परन्तु उन्होंने देखा कि आश्रममें इस बातकी बहुत जल्दी की जा रही है कि तुरन्त शवको दफ़नाया जाय। और कुछ घण्टोंके अन्दर उनका अन्तिम संस्कार किया भी गया। इस जल्दबाज़ीसे बुल्केजीके मनपर आघात लगा कि ये लोग कितने निर्मम हैं, इनके मनमें मृतात्माके प्रति किंचित् प्रेम नहीं है। बादमें उनके किसी मित्रने उन्हें बताया कि इस गर्मदेशमें शवको अधिक समय तक रखा ही नहीं जा सकता और फिर इन फ़ादरको तो ड्राप्सीका रोग था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घिरते-घुमड़ते हुए बादलोंके बीच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ८ :

समयकी माप घण्टों, दिनों और सप्ताहोंमें होती है, इसलिए कि इस प्रकार हम जीवनको एक व्यवस्था देना चाहते हैं, क्रममें देखना चाहते हैं। अन्यथा समयका प्रवाह अविच्छिन्न है, उसको इस प्रकार टुकड़ोंमें विभाजित किया ही नहीं जा सकता। मनुष्य घटनाओंमें जीता जान पड़ता है, पर उसके लिए यथार्थ है अनुभूति जो वास्तवमें बहते हुए क्षणोंकी उसकी अपनी उपलब्धि है। क्षण समयके प्रवाहमें निरन्तर ओझल होते रहते हैं, केवल उनका संस्कार रह जाता है। घटनाएँ घटित हैं इसीलिए गत भी, पर जो अनुभूत है वही उपलब्ध है। हरी घाटीके बीच मेरा अगले पाँच-छः सप्ताह-का जीवन घटनाओंसे अलग केवल उपलब्धि है। दूसरे दिन, और दूसरे दिन, फिर और दूसरे दिन घाटीमें नित्यके समान सुबह टहलने जाता हूँ। इस समय मेरे घूमनेकी एक सीमा है, पौने सात तक वापस आना ही है। सुबहके जलपानके समय पहुँचना ही है, कुछ इसलिए कि यहाँ समय बीतने-पर खानेको कुछ मिल नहीं सकता और मुझे सुबह अच्छी भूख लगती है। पर इसलिए भी कि बुल्के भाई यह इस प्रकार चलने नहीं देंगे, वह मेरे संरक्षक जो ठहरे। घाटीमें उतारके उस गहरे स्थल तक जाना होता है। कई बार मनमें यह भाव उत्पन्न हुआ, घाटीमें इसके आगे जो अज्ञात है उसे बिना जाने ही अच्छा है। ज्ञानका उल्लास यदि सौन्दर्यका प्रारम्भ है तो संकेतोंकी रहस्यमयता उसका चरम भी। यही कारण है कि जब उस गहरी घाटीके तलमें एक ओर पहाड़ी श्रेणीसे और दूसरी ओर वृक्षोंकी अनन्त राशिसे घिर जाता हूँ, तब कुछ दूर आगे उठकर ग़ायब हो जानेवाली सड़क-के विषयमें अधिक रुचि ही नहीं हुई। लेकिन मनुष्यको प्रश्नशील होनेका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अभिशाप झेलना पड़ा है। आगे क्या है ? यह उसकी विवशता है, वह जाने बिना रह नहीं सकेगा।

कौतूहलसे प्रेरित होकर एक दिन मैं उस ओर चढ़ता हूँ। एकाएक समतल विस्तार फैल जाता है और सड़क दूर तक चली गई है। इधर दाहिनी ओर काफ़ी खुला विस्तार है, कुछ पगडण्डियाँ फूटकर जंगलोंके बीचके गाँवोंमें शायद जाती हैं। बाईं ओर मुड़ी हुई श्रेणीका अन्तिम शिखर दिखाई देता है, जान पड़ता है शृंखला पास आकर समाप्त होनेवाली है। यह अन्तिम चोटी घेरा बनाकर खड़ी है, इसका अनुमान उस ओर लगाया ही नहीं जा सकता था। इसकी उपत्यका अत्यन्त घने वृक्षोंसे आच्छादित दिखाई दे रही है। यहाँसे तो लौटना ही है, इसके आगे जाना वापस आनेकी दृष्टिसे उचित नहीं होगा, देर वैसे भी हो गई है। लौटनेपर बुल्के भाई सतर्क करते हैं कि इस प्रकार अकेले दूर-दूर तक घूमना उचित नहीं है। फिर प्रातः भ्रमणके प्रसंगमें अकेला मैं इस स्थलसे आगे बढ़नेका साहस नहीं कर सका।

अब घाटी मेरी ख़ूब परिचित है, धीरे-धीरे वह मेरी सहचरी होती जा रही है। अब उसमें घूमते हुए मैं रास्तेका भान भूल जाता हूँ, भूल जाता हूँ कि मुझे कहाँ जाना है, क्या करना है। मैं मानो चोटियोंपर विचरता हूँ, सीमान्तोंपर घूमता-फिरता हूँ। मैं ढालोंपर दौड़-दौड़कर चढ़ता-उतरता हूँ। वृक्षों और झाड़ियोंसे उलझ-उलझकर खेल करता हूँ। फिर कभी हवामें उड़ता हुआ विशाल बरगदकी शाखाओंपर विश्राम करता हूँ, ऊँचे-ऊँचे शाल वृक्षोंके शिखरपर जा बैठता हूँ। कभी विस्तृत हरियालीपर तैरता हुआ न जाने कहाँ-कहाँ पहुँच जाता हूँ। अब यहाँ सभी मेरे परिचित हैं, अपने हैं। अब कोई मुझे कौतूहल और विस्मयकी दृष्टिसे नहीं देखता। देखकर मुसकरा देते हैं, जिसमें केवल परिचयकी स्वीकृति व्यंजित हो जाती है। कभी कोई वृक्ष अपनी डालियाँ हिलाकर पत्तियोंके संकेतसे बुलाता है, और जब मैं उसकी ओर देख लेता हूँ, तब वह हवाके एक झोंकेसे झर-झरकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हँस पड़ता है। कभी कोई चोटी अपने संकेतोंसे आमन्त्रित करती है, पर मुझे शंकित देखकर उदास होकर मेरे साथ-साथ दूर तक बढ़ती आती है। जाते-जाते एकाएक मैं अपनेको वृक्षोंसे घिरा पाकर चकित रह जाता हूँ, फिर वे सब विखरकर हँसते हुए फैल जाते हैं। मैं उनके इस खेलवाड़से मन-ही-मन मुग्ध हो जाता हूँ। मैं चला जा रहा हूँ, एकाएक टिटिहरी अपनी टिटिही टिटीही-टीसे चौंका देती है और पासके फ़ुटूश, ढाक तथा घमोय आदि विहँस कर अपने-आपमें लज्जित होकर चुप हो जाते हैं। कहीं पीपल पास हुआ तो हर-हर करके अट्टहाससे और भी भयभीत कर देता है। मैं उसकी ओर क्रुद्ध दृष्टि डालता हुआ आगे बढ़ जाता हूँ।

मेरे आनेके बाद यहाँ पानी देरसे बरसा है (२३ जूनसे)। इसके बाद घाटीका सारा दृश्य अन्य अनेक रूपोंमें प्रकट होने लगा है। मैं विशाल आमके वृक्षके नीचेसे पहाड़ी चोटियोंपर उमड़ते-घुमड़ते हुए बादलोंको देख रहा हूँ। काले, सुरमई तथा सफ़ेद किनारोंवाले मेघ घाटीमें भरे हुए हैं। कुछ चट्टानशिखर पर उमड़ते हुए क्रीड़ा-मग्न है। आमके नीचे कुछ क्षणोंके लिए खड़ा हूँ और मनमें कालिदासकी मेघदूतकी कल्पनाको समझनेका प्रयत्न करता हूँ। रामगिरिकी सारी कल्पना जैसे मेरे सामने प्रकट हो गई हो। वही असाढ़ मास है, वही रामगिरि न सही सीतागढ़की पहाड़ियोंकी चोटियाँ हैं, और मेघोंकी यह क्रीड़ा भी वैसी ही टीलोंको ढहानेवाले हाथियोंकी क्रीड़ा जैसी है। और ऐसा भी नहीं कि यह सारा वातावरण मेरे मनको कहीं किसी प्रकार स्पर्श ही न करता हो। लेकिन एक मौलिक अन्तर भी है, पर यह मेरा और कालिदासका अन्तर उतना नहीं है,जितना मेरे और कालिदासके युगका अन्तर है। कालिदासका यक्ष हृदय अपनी यक्षिणीके लिए भी बिना किसी वस्तुपरक आधारके अभिव्यक्तिका माध्यम शायद नहीं ग्रहण सका। पर युगका इतना बड़ा व्यतिक्रम हो गया है कि आज मेरे हृदयमें कहीं कोई यक्षीभाव नहीं है, फिर भी मनकी वेदना प्रकृतिके साथ व्यंजित होनेके लिए तत्पर है। घाटीकी ओर आगे बढ़ते हुए मनमें संकल्प जागता है कि प्रकृतिकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनन्त वेदनाको, उसकी राशि-राशि उमड़नको मैं निश्चय ही मानव तक पहुँचाऊँगा। मैं इस नये युगका नया दूत बनूँगा और प्रकृतिकी निरपेक्ष उमड़नको विश्रृंखल, खंडित और विश्वासहारे मानव तक पहुँचाऊँगा।

कौन कहेगा कि यह उमड़कर चट्टानशिखरपर फैलनेवाला मेघ मेघ नहीं है, और मेरे अन्तरमें उमड़नेवाली व्यथा व्यथा नहीं है? मेरी वेदना कालिदासकी वेदनासे भिन्न नहीं है और मेरे सामनेका मेघ भी 'धूम-ज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः' ही है। पर मैं दीन नहीं हूँ, शायद इसलिए कि मैं कामार्त नहीं हूँ। कालिदासकी पीड़ा व्यक्तिगत थी, उन्होंने यक्षके माध्यमसे उसे साधारणीकरणके स्तरपर लोकरंजनके अनुकूल बनाया है। मेरी वेदना आत्मगत है, उसमें मेरी व्यक्तिगत सीमाओंका संकोच नहीं है। मेरी पीड़ा, व्यथा, क्लेश कहाँसे मुझे मिला है, क्या है इसका स्रोत मैं नहीं जानता! यह है जो मेरे अस्तित्वका अंश है, मेरे उस अस्तित्वका जो अपने प्रवाहमें अनन्त चेतनाको गत-आगतके निरन्तर क्रममें धारण करता है। मेरे अनुभवमें न मेघ अचेतन ही है और न संदेश भेजनेके लिए उसे दूतकार्य सौंपनेकी आवश्यकता ही। वह इस क्षणके मेरे अनुभवका अंश है, उसके बिना न मेरा इस क्षणका अनुभव पूरा है और न मैं ही। धीरे-धीरे प्रकृति-पुरुष कामरूप मेघ अपने आलिंगनपाशको बढ़ाता हुआ चट्टानशिखरको घेर लेता है। मैं अनुभव कर रहा हूँ कि चोटीके साथ मेघने अपने आच्छादनमें मुझे भी ग्रहण कर लिया है।

मैं चढ़ाईपर आगे बढ़ रहा हूँ, चोटियोंपर बादल घिर रहे हैं, और फिर भी घाटीके मार्गपर हूँ, आये बिना रहा जो नहीं जाता है। पानी कई दिनोंसे बरस रहा है, ढाल और जंगल एक बार फिर धुल गये हैं। जंगलों-की हरियाली उभरकर चमक गई है, सीमान्तकी वृक्षराजि अधिक स्पष्ट व्यक्त हो गई है, और अन्तिम सीमान्तकी पहाड़ी शृंखलाएँ भी अब साफ़ गोचर हो गई हैं। पर घाटीको एकरसता पसन्द नहीं है, सदा एक दृश्यविधान उसे भाता नहीं। सड़कके कीचड़से बच-बचकर आगे बढ़ता हुआ देखता हूँ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कि दाहिनी ओरकी सारी हरी वनराजि और उसके साथ चलनेवाली श्रेणी मेघाच्छादित है। मैं उनका अन्दाज़ लगाता रह जाता हूँ और वे अदृश्य विलीन हैं। कभी झीने बादलोंमें छायाभास भर मिलता है। श्रेणीके विस्तार और उठते-गिरते ढालोंमें बादलोंका आड़ोलन इस प्रकार व्याप गया है कि सागर फैला जान पड़ता है। बाईं ओरकी चोटियोंकी मेघक्रीड़ा मुझे खूब छकाती है। आगे बढ़ते-बढ़ते ठिठककर खड़ा हो जाता हूँ—यह क्या? आज यह एक काले मेघकी टोपी लगाये चट्टानशिखर एकाकी है। कहाँ है इसकी सारी श्रेणी? और कहाँ हैं इसके साथकी चोटियाँ? मैं किंचित् विभ्रमके साथ देख रहा हूँ, यह शिखर अकेला बादलोंसे घिरता जा रहा है। थोड़ी देरमें इस शिखरके पास एक वृक्षोंसे आच्छादित चोटी उग आई है, मैं आश्चर्यसे देखता हूँ यह कहाँसे आ गई है? पर नहीं यह कामरूप मेघोंकी माया मात्र है। बादल बहुत मन्थर गतिसे चट्टानशिखर तथा तरुशिखरके बीच गुज़र रहे हैं, इस व्यवधानके कारण तरुशिखर ओझल था। बादमें उसका ऊपरी भाग खुल जानेसे तरुशिखरका ऊपरी भाग चट्टानशिखरके बिलकुल समीप जान पड़ता है।

घाटीमें वापस लौट रहा हूँ, एक विचित्र मायाजाल मेरे चारो ओर फैला हुआ है। अब मेरी बाईं ओरका नीचेकी ओर फैला हुआ विस्तार उमड़ते हुए बादलोंके अतिरिक्त कुछ नहीं है। इसी प्रकार दाहिनी ओरकी श्रेणी और चोटियाँ भी कोहासामें जैसे अदृश्य हैं। चारो ओर फैले हुए धुआँ-धुआँके बीच केवल दोनों ओरका कुछ दूरका विस्तार भर दृष्टिगत हो रहा है। बाईं ओरके कुछ दूर जंगली ढालपर सफ़ेद धुआँ-सा उतरता जा रहा है, लगता है उसके रन्ध्रोंमें प्रवेश कर रहा हो। दाहिनी ओर किंचित् ऊँचाई तक श्रेणीके गह्वरों, उपत्यकाओं तथा जंगलोंमें हल्के सफ़ेद बादल विचरण कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त विस्तारका सारा ज्ञान डूब गया है। सामने भी बादलोंके बीच आश्रम झलक भर रहा है और आगे सब अदृश्य है। सर्पशिखर तथा हस्तिपीठका कहीं अस्तित्व भी नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरी दृष्टिकी सीमाके सारे बन्धन विलीन हो गये हैं, मुझे लगता है जैसे मैं मुक्त हो गया हूँ। पर यह मुक्ति बन्धनोंको तोड़नेकी नहीं है, क्षणकी उपलब्धिमें सीमाके विस्मरणकी है। यह आदमी सीमाएँ मानकर अपनेको शासित और नियन्त्रित ही करता है। अस्तित्वके प्रवाहमें न कहीं कोई सीमा है और न कोई बन्धन है, वह निस्सीम निर्बाध घटित होता है। पर यह इसका घटित होना गत-आगतकी सीमा नहीं बनाता, यह केवल अनुभूतके अर्थमें है। मैंने अपने जीवनके पच्चीस-छब्बीस वर्षोंमें बहुत झेला है, सहा है, संघर्ष किया है। शारीरिक सीमाओं और बाधाओंसे प्रारम्भ करके पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक न जाने कितनी बाधाओंका सामना किया है। इसके लिए रामचरित मानस, गीता, उपनिषद्, बाइबिलकी विभिन्न चिन्तन प्रणालियोंका आश्रय लेना चाहा है; राम, कृष्ण, ईसा, बुद्ध और गाँधी जैसे व्यक्तित्वोंसे आधार ग्रहण करनेका प्रयत्न किया है। पर मेरे मनमें कुछ ऐसा धुँधला अस्पष्ट सदा रहा है जिसे मैं कभी समझ नहीं सका। यह संघर्ष, यह द्वन्द्व क्यों ? किसलिए ? क्या उद्देश्य है इस सबका ? मोक्ष ! नहीं मोक्ष मैं कभी मान नहीं सका। जीवनके परे कुछ है, यह मान लेनेपर भी वह मेरे लिए कभी वांछनीय नहीं हो सका। जीवनके अर्थको ही अस्वीकार कर कोई मोक्ष मेरा उद्देश्य नहीं हो सकता, मेरे कर्मकी प्रेरणा नहीं हो सकता। और भोग जो सांसारिक विलास तथा ऐश्वर्यमें सार्थकता ढूँढ़ता रहा है, जीवनको उपलक्ष्य बना देता है। जीवन इसमें झुठलाया जाता है और उसमें भी। न मैं मोक्षको मान सका और न भोगको, फिर मेरे जीवनकी दिशा निरुद्देश्य और विभ्रमपूर्ण रही है तो आश्चर्य क्या ?

इधर मेरे मनमें, शायद मेरे अस्तित्वमें महीनोंसे कुछ घटित हुआ है। मुझे यहींसे आभासित होता रहा है कि जीवनको दो सीमाओंमें बाँधना ही जीवनका वास्तविक बन्धन है—गत-आगत, सुख-दुःख, पाप-पुण्य, सफलता-असफलता, हानि-लाभ। और सीमा बिना उद्देश्यकी कल्पना नहीं की जा सकती। ऐसा लगता है इस जीवनका कोई उद्देश्य इस अर्थमें है भी नहीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उद्देश्य बनाकर जीना मुझे बोझा लगने लगा है। पर जहाँ मेरे अन्तर्मनमें यह धारा प्रवाहित होती रही है, मैं सजग मनसे अपने जीवनके उद्देश्यके विषयमें अधिकाधिक व्यग्र भी होता गया हूँ। और यही द्वन्द्व महीनोंसे मेरे और अस्तित्वमें अनजान ही चलता रहा है। पर आजकी मुक्ति, यह इस प्रकार अपनी सारी सीमाओंको खोकर जीवनको ग्रहण करनेकी चेष्टा एक अलग और अद्भुत अनुभव है। सब कुछ मिट गया है, या खो गया है—घाटी, श्रेणी, हरी-भरी वनराजि, श्रेणियोंकी चोटियाँ। फिर भी मैं हूँ, मैं सबका द्रष्टा साक्षी! और द्रष्टा भी नहीं, साक्षी भी नहीं, मैं हूँ केवल भोक्ता! मैं अस्तित्वमें स्थित हूँ, और बादलोंसे भरे हुए नीचे ढलते चले गये सारे विस्तार, बादलोंसे घिरे हुए श्रेणीके शिखर, सामने आश्रमकी वृक्षराजिमें चारों ओरसे प्रवेश करते हुए बादल और सामने हर दो सौ क़दम-पर नीचे गिरकर आकस्मिक रूपसे बादलोंमें अदृश्य हो जानेवाला धुँधला-धुँधला-सा रास्ता सब मेरे अस्तित्वके अंश हैं।

यह ऐसा नहीं कि मैंने किसी अलौकिक रसका आनन्द ग्रहण किया हो, न ऐसा ही कि किसी अज्ञात सत्ताका साक्षात्कार कर रहा हूँ। प्रकृतिके सामीप्य और साहचर्यके आनन्दोल्लासमय उपभोगकी मनःस्थिति भी नहीं है। मैं इस क्षण संग अथवा असंग कुछ भी तो नहीं हूँ। मेरी मनःस्थिति निस्संगकी है, गत-आगतसे मैं मुक्त नहीं हूँ, केवल मेरे वर्तमान क्षणमें दोनों अन्तर्भुक्त हैं, सन्तुलित हैं। गतकी सारी पीड़ा और आगतका सारा उद्वेलन मेरे अस्तित्वमें समाहित है। इस क्षण गत वर्तमान और आगत सब एक साथ मेरा अनुभूत है, मैं किसी घटनासे नहीं अपने अस्तित्वसे सम्पृक्त हूँ। सारी घाटीकी सघनताके बीच अनुभव करता हूँ, जैसे मैं उपलब्ध हूँ।

दूसरा दिन है! आश्रमकी सीमा पार कर आमके पेड़के नीचेसे चढ़ाई-की ओर आगे बढ़ रहा हूँ। सामनेकी चोटीपर बादल धीरे-धीरे चढ़ रहे हैं, क्रमसे एक-एक कर जैसे चढ़कर एकत्र होते हैं। एकत्र होते हैं, भीड़ बढ़ती है, फिर धक्कम-धक्कासे विवश होकर दूसरी ओर नीचे उतर रहे हैं। क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नीचे उतर-उतरकर आगे बढ़ते जा रहे हैं। श्वेत, सुरमई तथा श्यामवर्णके मेघ-खण्ड मृग-शावकोंके समान शृंग शिखरपर चढ़ने-उतरनेकी क्रीड़ामें मग्न हैं। मैं हूँ इसका उन्हें जैसे भान ही नहीं है, वे उपेक्षाके भावसे अपने-आपमें व्यस्त हैं। मैं चिढ़ता हूँ, यह भी कोई बात हुई। मैं यहाँ इस घाटीका अतिथि हूँ और ये हैं कि चिन्ता ही नहीं करते। दूसरी ओरकी हरी-भरी श्रेणीको देखने लगता हूँ। मेघ-खण्ड इस सारे विस्तारके ऊपरसे तैरते हुए चले आ रहे हैं, लगता है ये भी क्रीड़ामें भाग लेनेके लिए उत्सुक हैं और इसीलिए क्रीड़ा-शिखरकी ओर दौड़े आ रहे हैं। पर मन नहीं मानता, फिर उसी क्रीड़ाको देखनेके लिए आकुल हो जाता हूँ। जब वे जान लेते हैं कि मैं उनकी क्रीड़ाको ललचाई दृष्टिसे देख रहा हूँ, तब वे अदृश्य भी हो जाते हैं। उनको आगे समतलशिखरपर विश्राम करते देखा जा सकता है। फिर कभी क्षण-भरमें ही वहाँसे वे उतारपर भाग निकलते हैं; ऐसा भी लगता है कुछ धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे हैं जैसे खेलमें आपसमें झगड़ा करके मुँह लटकाये वापस आ रहे हैं।

सारी घाटी मेरे साथ इसी क्रीड़ा-कौतुकको देखनेमें व्यस्त है। यह क्या? मेरा पाँव कीचड़में फिसल जाता है और चौंक पड़ता हूँ। सारी प्रकृति झरझरकर हँसने लगती है। लजाकर सँभलता हुआ सड़कपर सीधी दृष्टि डालता आगे बढ़ता हूँ। मुझे लज्जित समझ प्रकृति मनाने लगती है और मेरा मन फिर उसी ओर आकृषित होता है। जान पड़ता है समतल-शिखरपर अपनी विशाल चट्टानोंकी गम्भीरताके साथ संकेतसे मना करता है—'हुश, अभ्यागतके साथ ऐसा नहीं करते।' सब नीरव हैं, चुपचाप हो जाते हैं। तरुशिखर सबसे ऊँचा है तो क्या, आज्ञा इनकी ही चलती है। लगता है कुछ घटित हुआ है, सब उदास, खिन्न, रुष्ट अपने-अपने स्थानपर खड़े हैं। किसीको चिन्ता नहीं है कि मैं यहाँ आया हूँ, उनके बीच घूम रहा हूँ। मैं एक-एकको देखता हूँ, प्रश्नकी दृष्टिसे, पर उनकी ओरसे न कोई उत्तर है और न संकेत ही। मुँह फुलानेसे मुझे चिढ़ है, ऊब उठता हूँ इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वातावरणसे। और दूरके ढालोंमें फैले हुए जंगलों, नीचेकी ओर चले गये विस्तृत मैदान और सीमान्तकी श्रेणियोंमें अपना मन रमाता हूँ। इसी बीच जैसे आपसमें कुछ खुसफुस शुरू होती है, अधिक देर मेरी उपेक्षा नहीं की जा सकेगी। सर-सर बहती हुई हवाके झोंकेके साथ सब चारो ओर फिर हँसने मुसकाने लगते हैं। मुझे भी विवश होकर उनका आमन्त्रण स्वीकार करना होता है। फिर देखता हूँ चट्टानी बन्धु अपनी आक्रोशकी मुद्राको अधिक गम्भीर बनाकर देखी-अनदेखी कर जाते हैं, इतना ख्याल वह भी हमारा रखते हैं। मैं आनन्दित उल्लसित घाटीसे वापस लौट रहा हूँ और श्रेणीके शिखरोंपर बादल घिर मड़रा रहे हैं। मेघ-खण्ड किलकारी मारकर ऊपर चढ़ रहे हैं और फिर एक दूसरेको धक्का देकर जैसे दूसरी ओर भाग खड़े होते हैं।

इसी प्रकार मेघोंसे घिरती-उमड़ती घाटीके बीच अनुभूत उपलब्ध घूमता रहता हूँ। अनुभव करता हूँ प्रस्तुत क्षण मेरी कल्पनाओंके साथ अभिन्न हो गया है। अभी तक यही समझ पाया था कल्पना और आकांक्षा केवल कामनाकी वस्तु हैं, पर वह अस्तित्वके साथ अनुभूत भी हो सकती है, यह आज ही समझ सका हूँ। न जाने क्या है—कोमल कल्पित जो मुझे अन्दरसे उल्लसित कर रहा है। मुझे लगता है मैं चल नहीं रहा, पंखोंपर उड़ रहा हूँ या पानीमें तैर रहा हूँ। सोचता हूँ आज तक किन कल्पनाओं-में, स्वप्नोंमें भटकता रहा हूँ। मैं तो आज कल्पनाके साथ ही हूँ, स्वप्न मेरे साथ-साथ भटक रहे हैं! जिसको समझा था भविष्यकी वस्तु है, वही इस क्षणका अनुभूत सत्य है। मैं क्षणमें ऐसा भुक्त और तृप्त जी रहा हूँ कि संसारमें मेरे लिए कुछ भी प्राप्य शेष नहीं रह गया है। मैं सुखसे निर्लिप्त नहीं, मैं दुःखसे मुक्त नहीं, मैं पीड़ा झेल रहा हूँ और वासनामें भी जी रहा हूँ। पर सारा झेलना इस क्षणका है, सारा भोगना इसी वर्तमानका है जिसमें मेरा गत-आगत भी समाहित है। मुझे लग रहा है पिछली मेरी सारी सौन्दर्य कल्पना, मेरे आदर्शोंका लक्ष्य मेरे अस्तित्वका आवरण मात्र था,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो मेरे साथ होकर भी मेरा अपना नहीं था। आज मैं निरावरण हूँ, मुक्त हूँ, स्वच्छन्द हूँ—संस्कारोंसे, परम्पराओंसे, भूत और भविष्यकी चिन्तासे भी। मैं घाटीकी उमड़नमें, उसके उल्लासमें, उसकी शान्तिमें और उसकी नीरवतामें घूमता रहता हूँ, तृप्त मन उल्लसित प्राण। मुझे नहीं लगता प्रकृति मेरी सहानुभूतिकी अपेक्षा करती है या मैं उसकी सहानुभूतिका आकांक्षी हूँ। यह जो भी है घाटी, उसका विस्तार, उन्नयन तथा निम्न-नयन, उसकी हरियाली, क्रीड़ा और उल्लास सब कुछ मेरे अस्तित्वका घटित है, अनुभूत है।

जीवनमें लक्ष्य मानकर चलता आया हूँ, पर सोचता हूँ यह व्यर्थ है। भविष्यकी कल्पनाके आरम्भपर विश्वास करता आया हूँ, पर समझता हूँ यह भ्रम हूँ। मेरा लक्ष्यपर विश्वास मुझे प्रेरणा देता रहा है, लेकिन सोचता हूँ न कोई क्षण आता है और न जाता है, वह तो केवल रहता है। फिर कौन होगा वह लक्ष्यपूर्तिका क्षण, कल्पनाकी सिद्धिका क्षण ! मेरे लिए आगे बढ़नेमें चलना पहले भी महत्त्वपूर्ण रहा है, पर चलनेमें जो गति है उसमें दिशाका निर्देश स्वतः अन्तर्निहित है। अब चलनेके स्थानपर जीना ही सार्थक क्रिया है। जिस भविष्यको प्रयत्न करके भी कभी जान नहीं सका, जिस उद्देश्यको कभी निश्चित नहीं कर सका, वही आज इतना सहज स्वाभाविक हो उठा है कि मैं उनकी ओरसे निश्चिन्त हूँ। मैं कह उठता हूँ—'हे अदृश्य क्षण, आज परितृप्त हूँ, भुक्त हूँ, अनुभूत हूँ। मैंने तुम्हारा साक्षात्कार करके जीवनका अर्थ समझा है।' फिर अपने अस्तित्वमें अनुभव कर रहा हूँ बन्धु चट्टानशिखर अपनी गम्भीर कठोरताके बीच मृदु हो गये हैं, शान्तिमूर्ति तरुशिखर अपने स्मितमें स्नेहार्द्र हो उठे हैं, समतल पाषाणीशिखर अपने विक्रान्त स्वभावमें सहज हो गये हैं, वृक्ष हँस पड़े, झाड़ियाँ और लताएँ मुसकरा दीं, विस्तृत हरी घाटीके विस्तारने अपने उतार-चढ़ानमें उल्लास व्यक्त किया, और वापसीमें सर्पशिखरने आशीर्वाद दिया और हस्तिपीठ पहाड़ीने आश्वासन दिया। इसी सबके बीच मुझे बुल्के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भाईकी याद आ जाती है। मेरे जीवनमें, मेरी दृष्टिमें कुछ बदल रहा है, कहीं कुछ आमूल बदलता जा रहा है। सोचना चाहता हूँ कि इसमें बुल्के भाई कहाँ हैं, किस सीमा तक हैं। पर क्या यह मेरे अन्दरका परिवर्तन उनके अनुसार, उनके आदर्शोंके अनुकूल माना जा सकता है?....पूरबसे घटाएँ उमड़ती गरजती चढ़ती चली आ रही हैं और मुझे आश्रम इनके आक्रमणके पहले पहुँचना है, भीगनेके भयसे नहीं जितना बुल्के भाईकी चिन्ताके कारण! मैं तेज़ क़दम बढ़ा रहा हूँ।

उस दिन (२६ जून) पूरी तरह बादलोंसे घिरे हुए आकाशको देखकर भी घाटीके मेघाकीर्ण आकर्षणको अस्वीकार नहीं कर पाता हूँ। बादलोंसे सारा वातावरण भर गया है। परसों साँझसे पानी बरस रहा है और इस समय सुबह भी हल्की झींसी पड़ रही है। समझता हूँ आज पहले दिन सुबह टहलनेके लिए नहीं जा सकूँगा। पर यह झुका-झुका-सा वातावरण अपने बोझिलपनसे बाहर निकलनेके लिए और विकल कर रहा है। ख़ैर छाता लेकर चल पड़ता हूँ। आश्रमकी सड़कपर आगे बढ़ते ही जान पड़ा दोनों ओरके जंगलोंमें बादल भरते जा रहे हैं। कुछ दूर आगे बढ़नेपर देखता हूँ कि सामनेकी पहाड़ीके बायें पार्श्वकी चोटीपर बादल घने एकत्र हैं। चट्टानशिखरका ऊपरी भाग उनके आवरणमें अदृश्य है। पीछेकी ओर बाईं तरफ़ हस्तिपीठका कहीं पता नहीं है और दाईं ओर नागराजके दर्शन भी नहीं हो रहे हैं। ध्यान देनेपर भी कहीं कुछ पता नहीं चल रहा है, सब बादलोंके प्लावनमें डूब चुके हैं। कुछ आगे बढ़नेपर नागराजकी कुंडलीकी हरियालीका आभास मिलता है और उसीके आधारपर उनके फनकी कल्पना भी की जा सकती है।

सामने दूर घाटीमें हल्के-हल्के बादल बिखरकर फैल गये हैं और बायें पार्श्वकी श्रेणीपर बादल सघन होते जा रहे हैं। घाटीके प्रवेश मार्गपर बादलोंकी भीड़ बढ़ रही है। सामनेकी चोटीका ऊपरी भाग अदृश्य हो चुका है। श्रेणीकी रेखापर मेघ एकत्र हो रहे हैं। पर दाहिनी ओरका घाटीका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विस्तार अपनी हरियालीमें ज्यों-का-त्यों फैला है, ऊपरसे पार करते हुए बादलोंकी छाया अवश्य बीच-बीचमें उतर आई है। इस ओरकी सारी हरी वनराजिवाली श्रेणी प्रत्यक्ष स्पष्ट है। केवल बाईं ओरसे घने बादल घेरते आ रहे हैं, मानो कोई फेनिल सुरमई तरंगोंवाला सागर हरियालीसे आच्छादित पहाड़ी तटकी ओर उमंग कर बढ़ रहा है। बाईं ओरकी पहाड़ीका दायाँ पार्श्व अभी साफ़ है। मैं कुछ और आगे बढ़ आया हूँ। चट्टानशिखर और तरुशिखरके बीच बादलोंकी छुटपुट सेना तितर-बितर होकर टहल रही है। लगता है इस घाटीपर मेघ सेनाने छापा मारा है, श्रेणीकी सारी कठोरताका दर्प विलीन हो गया है और इसके बड़े-बड़े सेनानी शिखर बन्दी बना लिये गये हैं। और उनकी असहायावस्थापर मुझे हँसी आ जाती है। बादलोंकी उमड़ती हुई छायाके नीचे घाटीकी प्रकृति आतंकित और उदास है, न कोई हँसता है और न कोई मुसकराता है। शायद घाटी इन सैनिकोंसे आतंकित है,....मुझे याद आता है अभी कुछ दिन पहले ही इस क्षेत्रमें अमरीकी सेनाओंका अड्डा था और इस ओर उनके आतंकके अनेक क़िस्से फैले हैं।

बादल गरज रहे हैं, पानी बरसनेके आसार हैं। वापस लौटना ही चाहिए। सामनेकी सड़कपर बादल झुण्ड-के-झुण्ड उतरते आ रहे हैं और ढालमें खो जानेवाली सड़क एकदम अदृश्य हो चुकी है, लगता है आगे मटमैला फेनिल सागर उमड़ता आ रहा है। मुझे लौटना है और मैं लौट पड़ता हूँ। अब दूर सामने पठारी समतल ढाल छितराये हुए वृक्षोंके साथ साफ़ दिखाई दे रहा है, परन्तु उसके ऊपर घने बादल छा गये हैं। सीमान्तकी पर्वत श्रेणियाँ बादलोंमें अदृश्य हैं, केवल वृक्षोंकी श्रेणियोंमें प्रवेश करते हुए बादल दिखाई दे रहे हैं। आश्रमके सारे विस्तारमें बादलोंके झुंड तितर-बितर होकर विचर रहे हैं। मुझे लग रहा है कि कुछ ही क्षणोंमें बादलोंसे घिर जाऊँगा, और उस अनुभूतिसे मैं अभिभूत हो उठा हूँ। यह ऐसा नहीं कि इस क्षण मेरे लिए बाहरकी प्रकृतिका विस्तार ही प्रमुख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है, कुछ है जो मेरी चेतनामें कौंधकर तरंगायित हो उठता है। और फिर लगता है बाहरकी उमड़न अन्दरकी उमड़न एक हो गई है। यह अकेले-पनकी अनुभूति गहरी हो उठी है, मैं जीवनमें वर्षों-वर्षोंसे अकेला रहा हूँ, अपना दुःख-सुख एकाकी झेला है। पर अन्दर यह अकेलापन भी इतना महसूस हो सकता है, यह आज समझ पा रहा हूँ। कहीं दुःख हो, उदासी हो, पीड़ा या वेदना हो, ऐसा कुछ भी नहीं। अनेक बार पीछे जीवनमें इसका भी अनुभव किया है रोया हूँ, चिल्लाया हूँ, मेरी आत्मा विलखी है, मैंने घनी उदासीसे असह्य बोझाका अनुभव भी किया है। एकान्त क्षणों-में निराशा और अवसादमें अपनेको बहने दिया है। पर वह सब आजकी इस अनुभूतिसे नितान्त भिन्न रहा है। आज इस क्षणकी अनुभूतिमें अन्य कोई भाव उठता ही नहीं, एकाकीपन अपने-आप जैसे संवेदित हो उठा हो!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शिखर और उपत्यकाकी खोज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: १ :

मैं सुबह उठा तो अनुभव करता हूँ किसी आन्तरिक भावनासे उद्वेलित हूँ। आज (२३ जून) बृहस्पतिवार है और ब्रदर एन्टोनीसे तै है कि हम लोग साथ घूमने जायेंगे। प्रति बृहस्पतिवारको ब्रदर्सकी छुट्टी रहती है और वे सभी बाहर दूर-दूर घूमनेके लिए निकलते हैं। देरसे लौटनेके कारण सभी नाश्ता साढ़े छः बजे करके ही निकलते हैं। मैं स्नानादिकसे छुट्टी पाकर सवा छः बजे नाश्ता करने पहुँच गया, ब्रदर एन्टोनीके साथ ही नाश्ता करता हूँ। ब्रदरने मुझे बता दिया है कि प्रातः घूमते समय एक घण्टा वह मौन रहकर ध्यान करेंगे। पर मुझे इससे क्या असुविधा हो सकती है, मैं स्वयं नित्य घण्टों अकेला मौन रहता हूँ। सुबहका नाश्ता करनेके बाद हम जब घूमने निकले सात बज रहा है। अनेक गुटोंमें इधर-उधर ब्रदर्स निकल पड़े हैं। हम दोनों एक साथ हैं। ब्रदरके हाथमें कुल्हाड़ी है, मेरे मनमें सहज जिज्ञासा है कि यह किस लिए है। पर अभी पूछ नहीं सकता हूँ। हमलोग घाटीकी ओर चलते हैं, मुझे निश्चित पता नहीं है कि हम किधर जा रहे हैं। हम आश्रमकी सड़क पार करनेके बाद घाटीमें ही चढ़ रहे हैं, इस सड़कपर आगे बढ़ता हुआ मैं सोच रहा हूँ शायद आज हम चोटीपर नहीं चढ़ेंगे। लेकिन जैसे ही चढ़ाई समाप्त हुई आमके पेड़के नीचे पहुँचनेके पहले हम एक पगडण्डीसे पहाड़ी श्रेणीकी ओर मुड़ जाते हैं।

ब्रदर एण्टोनी अपने ध्यानमें मौन हैं। और मैं पेड़ों और झाड़ियोंसे आच्छादित रास्तेको पहचान-पहचानकर आगे बढ़ता जा रहा हूँ। पर सघनता है कि विभ्रममें डालती है। समझ रहा हूँ कि पादपीठकी शृंखलाके पाससे होकर हम चट्टानशिखरपर चढ़ने जा रहे हैं। परन्तु यह क्या ? चोटी दाहिनी ओर छूटती जाती है और हम बाईं ओर बढ़ रहें हैं। प्रश्न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मनमें उठता है और मनमें ही रह जाता है, क्योंकि ब्रदरसे पूछ नहीं सकता। अभी हम जिस समतल भूमिपर आगे बढ़ रहे हैं, वह बहुत हल्के-हल्के ऊपर चढ़ रही है। पहाड़ी पेटेके सघन जंगलोंसे सारा प्रदेश भरा हुआ है, इसी कारण रास्ता खोजनेमें दिक़्क़त होती है। हमारे बिलकुल सामने बहुत कम ऊँची हरियालीसे आच्छादित शृंखला चली गई है और हम उसके पास पहुँचकर ऊपर चढ़ना प्रारम्भ करते हैं। सामने कुछ ऊँचाईपर अन्य ब्रदर दिखाई देते हैं, बादमें रास्तेमें उनसे हमारी भेंट कहीं नहीं हुई। एण्टोनीको मार्ग समझनेके लिए कहीं-कहीं रुकना पड़ता है। अनेक स्थल ऐसे आते हैं जहाँ यह निर्णय करना होता है कि हमको बायें रास्तेसे चलना है या दाहिने रास्तेको पकड़ना है। झाड़ियोंके बीच अनेक रास्तोंका भ्रम होता रहता है। रास्ता झाड़ियोंकी बरसाती बाढ़से रुँधने लगा है। लकड़ी काटनेवाले लकड़हारोंके आने-जानेसे अनेक ओर रास्ते बन गये हैं और इनके कारण मुख्य रास्ता भूल जानेका भय है। फिर भी चोटियोंकी ओरका रास्ता ऊबड़-खाबड़ होकर भी ध्यान देनेसे साफ़ अलग दिखाई देता है। वस्तुतः यह रास्ता सन् ५७ के ग़दरके समय अंग्रेज़ी फ़ौजने अपने शिविरके लिए बनाया था।

कुछ ऊपर चढ़कर हम दाहिनी ओर मुड़ते हैं। अब हम चट्टानशिखरके पार्श्वमें तथा उनके दाहिनी ओरकी श्रेणीके बीचसे होकर गुज़र रहे हैं। रास्ता इस चोटीके पार्श्वपर है, इसके तथा श्रेणीके बीच एक गहरी घाटी-सी है जो घने पेड़ों, झाड़ों और पाषाण खण्डोंसे भरी हुई है। हम लगभग समतलपर चल रहे हैं, कभी किसी स्थलपर कुछ ऊपर चढ़कर फिर समतल रास्तेपर आगे बढ़ने लगते हैं। मैं झाड़ियोंसे रुँधे हुए रास्तेपर सँभलकर बढ़नेमें तथा ऊपर चढ़ाईपर सन्तुलित होकर चढ़नेमें ऐसा व्यस्त हूँ कि यह समझ नहीं पा रहा हूँ, किधर जा रहा हूँ, कहाँ जाना है। एक स्थलपर जंगल बहुत विरल हो गया है, और रास्ता कुछ अधिक विस्तृत तथा खुले भागसे गुज़र रहा है। देखता हूँ एक ओर लगभग नग्न चट्टान आ गई है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो पहाड़ीके पार्श्वमें एक चोटी-सी लगती है। कुछ थकान आ गई है, चाहता हूँ यहाँ कुछ देर रुका जाय। ब्रदर यहाँ रुक जाते हैं। मैं प्रसन्न होता हूँ। पर क्षणभरमें यह सोचकर कहीं ब्रदर अब आगे न बढ़ें, मन उदास भी होता है। मैं कुछ देर आराम करके आगे बढ़ना चाहता हूँ। पर मेरी इच्छाका प्रश्न ही कहाँ है? ब्रदर एक ओर बैठकर अपनी प्रार्थना कर रहे हैं, कुछ दूर चट्टानके लगभग किनारे बैठकर मैं सामनेका विस्तार देख रहा हूँ। जहाँ मैं बैठा हूँ, वह चट्टानका किनारा है और मेरे पैरोंसे कुछ दूर हटकर ही एकदम तीखा ढाल नीचेकी ओर चला गया है। पर मेरे मनमें कहींसे भयका प्रवेश नहीं होता, पीछे चट्टानकी कटानकी धोक लगाये निश्चिन्त बैठा हूँ। यहाँसे सामने मैदान जैसा जो हरा-भरा फैला है, वही घाटीके दाहिनी ओरकी हरी श्रेणी है। इस ऊँचाईसे हल्की-सी लहरके साथ यह समतल मैदान ही जान पड़ती है। दस मिनटके विश्रामके बाद ब्रदरने फिर आगे बढ़ना प्रारम्भ किया। उसी प्रकारके झाड़ियोंसे आच्छादित रास्तेको पार करते हुए हम आगे बढ़ रहे हैं, कहीं-कहीं ब्रदरको साथकी कुल्हाड़ीसे रास्ता साफ़ करना पड़ता है। मैं समझ रहा हूँ, यह शायद इसी कामके लिए साथ लाई गयी है। थोड़ी देर ऊपर चढ़नेके बाद हम फिर दूसरी चट्टानपर पहुँचते हैं, यहाँ भी पहले जैसा खुला स्थान है। हरहराती हवाका आनन्द लेनेके लिए हम यहाँ भी दस मिनटके लिए रुकते हैं। यहाँ ब्रदरने अपना मौन भंग किया और हमारी बातचीत शुरू हुई। इतने समयसे अपने-आपमें संलग्न रहनेके कारण अब बातचीत करनेका आग्रह भी है। कुल्हाड़ीकी उपयोगितापर जब मैं अपना मत व्यक्त करता हूँ, तब ब्रदर हँसकर कहते हैं—'रघुवंशजी, यहाँ भालूसे मुलाकात हो सकती है। इस ख्यालसे इसे साथ रखते हैं कि कहीं सलाम करना पड़ जाय।' फिर वह उन माँदोंकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करते हैं जिन्हें मैंने मार्गमें साधारण खोहें मात्र समझा था।

हम बात-चीतमें लगे हुए आगे बढ़ रहे हैं। अब तक स्पष्ट हो चुका है

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कि हम चट्टानशिखर पहाड़ीके पार्श्वका घूमकर चक्कर लगाते हुए आगे बढ़ते आये हैं। इस प्रकार हमने इस पहाड़ीको पार किया है और चढ़ाई-पर बहुत धीरे-धीरे ऊपर चढ़ते आये हैं। कुछ दूर बहुत साफ़-सुथरे रास्ते-पर आगे बढ़नेके बाद हम उस मध्यबिन्दुपर पहुँच जाते हैं जहाँसे दोनों ओरकी चोटियाँ उठी हुई दिखाई दे रही हैं। और तरुशिखरके पास ही समतल पाषाणशिखर भी स्पष्ट दिखाई दे रहा है। इस स्थलसे यह निश्चय करना है कि हम किस ओर चढ़ाई करना चाहेंगे। विद्यार्थियोंके गुट चट्टान-शिखरपर चढ़ते दिखाई दे रहे हैं। पर इस पहाड़ीपर चढ़ना साहसिकता अधिक है, सुन्दर दृश्योंका आकर्षण तरुशिखरकी ओर ही है। आसानीके कारण भी हमने तरुशिखरपर चढ़नेका निर्णय किया। अब चढ़ाई सीधी और तीखी है, अतः सँभल-सँभलकर तथा रुक-रुककर आगे बढ़ रहे हैं। परन्तु इस ओर पहाड़ीपर पेड़ और झाड़ियाँ सघन हैं और इस कारण उनका आश्रय मिल रहा है। झाड़ियाँ इस प्रकार तो नहीं हैं कि मार्ग रोकें, पर चढ़ते समय उनका सहारा लेना पड़ता है। रास्ते इतने अधिक लगने लगते हैं कि निर्णय लेनेमें दिक़्क़त होती है। चढ़ाई कभी इतनी सीधी आ जाती है कि किसी मज़बूत पौधेको पकड़कर ऊपर चढ़ना होता है। ब्रदर मेरे लिए चिन्तित होते हैं, पर मैं अपने हल्केपनके कारण चढ़ता चला जा रहा हूँ। मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं सदा पहाड़ोंपर चढ़ता आया हूँ, कहीं कोई असुविधा नहीं हो रही है।

किंचित् घूमकर हमको चोटीके ऊपर चढ़ना होता है, क्योंकि इधर इतना सीधा ढाल है कि उसपर सीधे चढ़ना सम्भव नहीं है। चोटीपर पहुँचकर हम देखते हैं कि यहाँ काफ़ी विस्तार है और यह सारा विस्तार घने वृक्षोंसे आच्छादित है। जान पड़ता है इस चोटीपर कोई बाग़ीचा लगाया गया है। यहाँ छायाके नीचे घूमना सुखद लग रहा है। परन्तु हम वृक्षोंके आवरणमें इस प्रकार छिप गये हैं कि कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। इस चोटीके बीचमें घाटीके दूसरी ओर झुका हुआ ऊँचा-सा चबूतरा बना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुआ है। वस्तुतः चारों ओरके पत्थरोंको एकत्र कर ऊँचा उठा लिया गया है। हमने ऊपर चढकर देखा कि उसपर एक क्रास बना हुआ है। ब्रदरने बताया कि आश्रमके विद्यार्थियोंने यहाँ क्रास बनाया है। इसीपर बैठकर हम सुस्ताने लगते हैं, यहाँ हवा कुछ-कुछ चल रही है। परन्तु फिर भी इस ऊँचाईपर जैसी हवा मिलनी चाहिए वैसी हवा नहीं है। वृक्षोंके कारण कदाचित् हवा रुकती है। अपने चतुर्दिक्के सम्बन्धमें हमारा ज्ञान यहाँसे सीमित है, पर दूर-दूरका दृश्य अधिक साफ़ दिखाई दे रहा है। पीछे पहाड़ी श्रेणीका निकटवर्ती दृश्य नहीं दिखाई दे रहा है। पर दूरके हरे-भरे वन, समतल-सी लगनेवाली हल्की-हल्की पहाड़ीश्रेणी, हरियालीसे आच्छादित असम पठार और सीमान्तपर आभासित होनेवाली पहाड़ियाँ दिखाई दे रही हैं। और सामनेका विस्तार गहरा होता हुआ फिर ऊपर चढ़ता हुआ और हरियालीकी सघनतामें एकरस सीमान्त तक फैलकर पारसनाथकी ऊँची पहाड़ियोंपर जाकर रुक जाता है। इस ऊँचाईसे विस्तार-का सारा बोध सुन्दर लग रहा है। और इस रमणीयतासे हमारी थकान थोड़ी देरमें दूर हो गई है। हवा नहीं चल रही है, फिर भी गरमी नहीं लग रही है।

धीरे-धीरे हम दोनों बातचीतमें संलग्न होते जा रहे हैं और चारो ओर-का सौन्दर्यबोध पृष्ठभूमिमें है। चीनपर कम्युनिस्ट शक्ति बढ़ती जा रही है और माऊ त्से तुंगकी फ़ौजें चांग काई शेककी फ़ौज़ोंको चीनके बाहर कर रही हैं। इसी स्थितिके सम्बन्धमें चर्चा शुरू होकर धर्म और कम्युनिज़मपर आ जाती है। रूसके समान चीनसे भी कैथलिक धर्म क्या सभी धर्म निष्का-सित हो रहे हैं। धर्माध्यक्ष तथा पादरी भाग रहे हैं या छिप गये हैं। कम्युनिज़मके अन्तर्गत धर्मकी स्थितिपर हम विचार कर रहे हैं। ब्रदर एण्टोनी धर्महीन कम्युनिज़मपर आक्रोशपूर्ण हैं, वे उसे राक्षसत्वका प्रतीक मानते हैं। मैं मार्क्सवादके प्रति उदारतापूर्वक विचार करनेका प्रस्ताव रखता हूँ।—'ब्रदर, साधारण जनके लिए धर्मसे अधिक महत्त्वपूर्ण भौतिक आवश्यकताएँ हैं। इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तथ्यको भुलाकर, झुठलाकर सदा भ्रमकी सृष्टि की गई है। यह ठीक है धर्मने आध्यात्मिक सन्देश दिया है, पर उसके पास मानव मुक्तिका अधूरा सन्देश ही रहा है। तुम कहते हो, मानते हो आजसे लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व प्रभुपुत्र ईसाने मानवमुक्तिका क्रास धारण किया था, उन्होंने मानवके समस्त पापशापको अपने ऊपर झेल लिया था और इस प्रकार मानवमुक्तिका मार्ग प्रशस्त किया था। परन्तु मानवता आज भी अपनी पीड़ा, वेदना और कष्टों-को झेलती है, आज भी उसके पापशापकी स्थिति वैसी ही है, ईसाको अपना मुक्तिदाता मान लेनेपर भी। दो हज़ार वर्षोंका लम्बा इतिहास यही बताता है कि मानवताका क्रम जैसाका - तैसा चल रहा है, प्रत्येक व्यक्तिको अपना क्रास स्वयं ही ढोना पड़ा है। हाँ, महापुरुषोंने मार्ग प्रदर्शनका कार्य अवश्य किया है। मैं तो समझता हूँ कि मार्क्सवादको अब मानवमुक्तिकी समस्याको नये स्तरपर उठानेका अवसर मिलना चाहिए। समाजवादकी जो परिणति कम्युनिस्ट देशोंमें हो रही है, मात्र वही उसका स्वरूप नहीं माना जा सकता है। मुझे लगता है मार्क्सने मानव विकासको निश्चय ही एक नई दिशा प्रदान की।' ब्रदर कुछ सन्तोंकी जीवनियोंसे उदाहरण देकर यह सिद्ध करना चाहते हैं कि ईसाई धर्मने मानवमुक्तिके लिए कहाँ तक मार्ग प्रशस्त किया है। मैं ब्रदर एण्टोनीकी शिक्षा और उनके युवक हृदयको ध्यानमें रखकर उनकी मनःस्थिति समझनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। उनकी इस प्रकार की भावना और उत्साह सहज है।

बातचीतमें काफ़ी समय बीत चुका है, घाटीके दूसरी ओरकी सड़कपर कुछ ब्रदर्स लौटते दिखाई दे रहे हैं। हमने भी लौटनेका विचार किया। एण्टोनीने प्रस्ताव किया कि हम दूसरी ओर समतल शिखरपर पहले जाकर यदि फिर उतरेंगे तो ढाल कम पड़ेगा और उस शिखरको देख भी लेंगे। चबूतरेसे नीचे उतरकर हम पेड़ोंके बीच कुछ देर भटकनेके बाद एक स्थलपर पहुँचते हैं, जहाँसे ब्रदरके अनुसार समतलशिखरका मार्ग नीचे उतरता है। वृक्षोंकी सघनतामें रास्तेका आभास मिलता है। सघन पेड़ों और झाड़ियोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीचसे हम नीचे उतरकर कुछ ही देरमें शिखरके सामने आ गये हैं, और पाषाणी चोटीपर पत्थरोंको लाँघते हुए पहुँच जाते हैं। यहाँ पहुँचते ही लगता है अभी तक हम किसी बँधे और घने वातावरणमें बन्दी थे और अब हमको मुक्ति मिली है। हवा झर-झर चल रही है, जैसे हम उसमें उड़े जा रहे हैं। यहाँ आकर मन उत्फुल्ल हो गया है। यहाँसे घाटीके पीछे-का दृश्य एकदम अदृश्य है, पर अन्दर और उस ओरका सारा दृश्य स्पष्ट गोचर है। घाटीके बीचका रास्ता जिसपर नित्य आता जाता हूँ, बिलकुल पतला सर्पाकार फैला हुआ है। उस ओरकी श्रेणी नीचे झुकी-सी जान पड़ती है, जंगलकी हरियालीमें सब डूबा-सा है। हज़ारीबाग़ नगर बीच-बीचमें झलक रहा है। सेण्ट स्टेनिसलॉसके ऊपरकी लाल-लाल टीन चमक रही है। इतनी ऊँचाईसे सब कुछ खिलौने जैसा सुन्दर लगता है। यहाँ हवाके झोंकोंमें जितना सुख मिल रहा है, उतना मनमें यह भाव उभर रहा है कि अब चलना चाहिए, नहीं देर होगी। पहले ही काफ़ी समय ले चुके हैं, अतः यहाँ अधिक देर रुकना सम्भव नहीं है। मैं ब्रदरसे कहता हूँ—'ब्रदर, यदि हमको मालूम होता कि यह स्थान अधिक हवादार है तो यहाँ कुछ पहले आ सकते थे।' ब्रदर एण्टोनी मुसकराकर कहते हैं—'हम फिर कभी इनसे अधिक देर मिलनेके लिए आयेंगे।' मैं समझता हूँ इस 'इनसे' कहनेमें शिखरके प्रति ब्रदरकी आत्मीयता ही व्यंजित हुई है।

हमको लौटना है और हम लौट पड़े। हम इस पाषाण-शिखरपर ऊपरकी ओरसे आये थे, पर अब नीचेकी ओरका रास्ता पकड़ना है। मैंने सामनेके तरुशिखरकी ओर एक दृष्टि डालकर पाषाणेश्वरसे वादा किया—'तुम्हारा निमन्त्रण स्वीकार है, कभी आऊँगा और तुमको काफ़ी समय दूँगा।' फिर घूमकर हमने पहलेवाले मार्गको नीचेकी ओर उतरते हुए पा लिया। और कुछ देरमें ही हम पहले मार्गपर आ गये। इस ओरसे मार्ग आसान है, उतना ढाल नहीं है। ग्यारह बज चुका है और हमको आश्रम पहुँचनेकी जल्दी है। क़दम बढ़ाना है, पर नीचे उतरनेमें पैर सँभाल-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सँभालकर रखना होता है। हमारे जैसे हल्के आदमियोंके लिए उतरना आसान है। उतरते समय नीचे ध्यान अधिक रखना पड़ रहा है, पर बीच-बीचमें चारों ओरके दृश्यको देख लेता हूँ। हमको भूख लग रही है, ब्रदरने अपनी सीखी हुई हिन्दीमें कहा—'रघुवंशजी, पेटमें चूहे कूद रहे हैं।' मैंने कहा—'आपकी भाषा ठीक है।' वह हँस देते हैं। दोनों शिखरोंके मार्गों-के मिलन-स्थलपर हम कुछ मिनट रुककर आगे बढ़ते हैं। रास्तेमें ब्रदरने भालुओंकी खोहोंको पहिचनवाया, और मैं उनको देखकर आतंकित हूँ। उनमें भालूके शरीरकी गन्ध परिव्याप्त है। उतारका रास्ता जल्दी कट रहा है और हम चालीस मिनटके अन्दर ही घाटीके नीचे पहुँच चुके हैं। अब मनमें विचार उठता है कि कुछ ही मिनटोंमें हम आश्रम पहुँच जायेंगे और पहुँचते ही हमको खाना तैयार मिलेगा। आज इस कल्पनासे मन सुखी है।

बेतियासे टाइपिस्ट हेलॉरिसके आ जानेके बादसे बुल्के भाई और भी अधिक व्यस्त हैं। वह नित्य टाइप किये हुए पृष्ठोंको देखते हैं, मेरे साथ आगेकी टेक्स्ट देखकर तैयार करते हैं और इसके अतिरिक्त आगेका काम भी समाप्त करनेमें संलग्न हैं। इधर दो दिनसे पानी बरस रहा है और गर्मी कम हो गई है। आज रविवार (२६) है और बुल्के भाईने शिखर-पर चढ़नेका अपना वादा पूरा करनेका निश्चय किया। हमने पिकनिकका पूरा बन्दोबस्त किया, ब्रदर क्लासनने टिफ़िन तैयार कर दिया—सेण्डविचेज़ तथा स्लाइसेज़। चायके लिए थरमास फ़ादर रैक्टरसे तथा सामान ले जानेके लिए झोला फ़ादर मिनिस्टरसे लिया गया। दोपहरके भोजनके बाद हमने सारा सामान कमरेमें रख लिया, जिससे दो बजे हम बिना किसीसे कुछ कहे पिकनिकके लिए चल सकें। दोपहरके समय मैं अपने कमरेमें नींद ले रहा हूँ, बाहर धीरे-धीरे पानी बरसनेका क्रम चल रहा है। मैं सोचता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हूँ, सम्भव है आज चलना न हो सके। पर जब दो बजे आराम करनेके बाद उठा तो देखता हूँ पानी थम गया है। बुल्केजी कहते हैं—'इतनी तैयारीके बाद रुकनेसे लोग हँसी करेंगे।' मैंने कहा—'सो तो यदि हम भींगकर वापस लौटे तो भी हमारी पिकनिककी हँसी होगी।' पर अन्ततः हमने जानेका निश्चय किया।

बुल्केजीने थैला और थरमास लिया और हम चल पड़ते हैं। रास्तेमें बुल्केजी पूछते हैं कि रास्ता मुझे याद ही होगा, अभी उस दिन तो मैं ब्रदर-के साथ गया ही था। पर मैं जब बताता हूँ कि रास्तेके बारेमें मैं निश्चित नहीं कह सकता, बुल्के भाई हँसते हैं। उन्होंने कहा कि हम चल पड़े हैं तो पीछे पैर नहीं रखेंगे। रास्तेसे मोड़का रास्ता पाना सरल है, और चढ़ाईका स्थान खोज निकालना भी कठिन नहीं हुआ। पर आगे कुछ दूर जाकर दो रास्ते आ जाते हैं, और यहाँ मेरे लिए निर्णय करना आसान नहीं है। बुल्केजीने दाहिनी ओरके मार्गपर चलनेका सुझाव दिया और वह ठीक निकला। पर कई स्थलोंपर हम ग़लत रास्तेपर कुछ दूर आगे बढ़ जाते हैं, तब अपनी भूलका बोध होता है और हमको वापस लौटकर सही रास्ता पकड़ना होता है। आगे रास्ता साफ़ मिल गया और हम आसानी-से बढ़ते जा रहे हैं। घनी झाड़ियों अथवा मार्गपर छाये हुए पेड़ोंके बीचसे जब हम निकल जाते हैं तो उनपर रुकी हुई बूँदें हमको भिगो देती हैं। बादलोंके झिटक जानेसे घाम तीखा लग रहा है। अन्दर पसीनासे भींग रहे हैं और बाहर बरसाके पत्तियोंसे झरते हुए पानीसे। गर्मी ख़ूब लग रही है। चढ़नेमें कष्ट हो रहा है। पर मनमें उत्साह है कि पाषाण-शिखर की समतल चट्टानपर हवाके झोंकोंमें बैठकर हम दोनों बातचीत करेंगे। उसका आमन्त्रण बार-बार मनको संवेदित कर रहा है। बुल्के भाई इधर लगातार परिश्रम करते रहे हैं, उनको भी यह परिवर्तन उल्लसित कर रहा है।

रास्तेमें भालुओंकी खोहें मिलती हैं, फिर मुझे वहाँ भालूके शरीरकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गन्ध व्याप्त जान पड़ती है। पर बुल्केजीका कहना है कि आवश्यक नहीं कि इनमें अब भी भालू रहते हों, छोड़ी हुई खोहें भी हो सकती हैं। पर उनमें-से एकमें भालूकी लीद देखकर यह मानना पड़ता है कि कमसे-कम कुछमें अब भी भालुओंका वास है। मनमें भय तथा आतंकका भाव उठता है, पर बुल्केजी साथ हैं। दोका बड़ा भरोसा होता है। कुछ ही समयमें हमारा ध्यान फिर अपने चतुर्दिक्में फैल गया और भालूका आतंक न जाने कहाँ विलीन हो जाता है। भीषण शिलाखंडवाली चट्टान मिलती है, हम कुछ मिनट रुककर आगे बढ़ जाते हैं। इसी तरह अगली चट्टानपर भी कुछ ही देर हम विश्राम करके आगे बढ़ते जाते हैं। दो शिखरोंकी चढ़ाईके बीचके स्थलपर रुककर हम सुस्ताते हैं और बातचीत करते हुए दूरकी उठती हुई मेघमालापर दृष्टि जमाये हुए हैं। बुल्केजीका कहना है कि मेघमाला एक घण्टेके अन्दर फैल जायेगी, पर आशा यही है कि यह दक्षिण होकर निकल जायगी, इधर इस ओर नहीं आयेगी। मैं कहता हूँ—'मुझे इस प्रदेशमें मेघोंको देखकर कालिदासके मेघदूतकी याद आती है। निश्चय ही रामगिरिकी स्थिति ऐसी ही होगी, जहाँसे महाकविको प्रेरणा मिली होगी।' बुल्केजीने स्वीकार किया—'कालिदासका रामगिरि कहीं भी हो, विद्वानोंमें इस विषयमें मतभेद रह सकता है, पर इस सीतागढ़की पहाड़ीसे भिन्न निश्चय नहीं रहा होगा।' मैं उत्साहमें कह रहा हूँ—'बुल्केजी, मुझे आज भी इन शिखरोंपर उमड़ते-घुमड़ते मेघोंको देखकर किसीके सन्देशकी याद आती है। जैसे मुझे भी किसीको सन्देश देना है। क्या युद्धकी विभीषिकासे पीड़ित और शापित मानवताके लिए कोई सन्देश दिया जा सकता है? क्या धार्मिक वैमनस्यकी ज्वालासे दग्ध भारतकी जनताके लिए कोई सन्देश हो सकता है? आज कालिदासके युगको बीते डेढ़ हज़ार वर्ष हो गये, पर क्या इस युगमें मेघों-की उमड़न मनुष्यके हृदयको उसी प्रकार संवेदित कर सकती है? क्या कुछ प्रकृतिका खो गया है, या मनुष्यने ही कुछ खो दिया है?'

अब हम तरुशिखरपर चढ़ रहे हैं। आज हम रास्तेमें अधिक भटक-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भटक जाते हैं, रास्ताभासोंके धोखेमें मुख्य रास्ता अनेक बार खो जाता है। पर कुछ देरमें भ्रम दूर होता है, और हम फिर रास्तेपर आ जाते हैं। लगभग सवा घण्टेमें हम तरुशिखरपर पहुँच गये। यहाँ पहले दिनके समान ही हवा बहुत कम है, चबूतरेपर चढ़ जानेपर भी स्थितिमें महत्त्वपूर्ण अन्तर नहीं है। पसीनेसे हम तर हैं, फिर भी इस ऊँचाईपर कुछ चैन मिल रही है। हल्के हवाके झोंके भी आ जाते हैं और धूप बिलकुल नहीं है। यहाँसे सामनेके विस्तारपर दृष्टि डालकर हम बातचीत कर रहे हैं, बुल्केजी अपने देशकी चर्चा कर रहे हैं। उनके देशमें इतनी ऊँची पहाड़ी भी नहीं है, इसके बजाय समुद्र तटके निचले भाग हैं जिनको बाँध बनाकर समुद्रसे प्राप्त किया गया है। वहाँ हिंसक पशु या विषैले कीड़े भी नहीं मिलते, इसपर मुझे किंचित् आश्चर्य होता है। वह उत्साहमें बता रहे हैं—हमारे देशमें समुद्रके किनारे बाँधकी एक चौड़ी दीवार चली गई है, यह दीवार मेरे घरसे केवल दो मीलकी दूरीपर है। इस दीवारसे टकराती हुई समुद्रकी लहरोंका हूहा-कार मेरे गाँव (लिस्सवेग) तक सुनाई पड़ता है। उस दीवारपर घुमना या साइकिल चलाना हमारा मनोरंजक कार्यक्रम रहता था। मैं हवाके खिलाफ़ मीलों साइकिल भगाता जाता था, और पश्चिमी हवाके झोंके खाता जाता था। यह अपने-आपमें एक रोमांचक अनुभव रहता था। वस्तुतः हमारे देश में समुद्र ही रोमाण्टिक कल्पनाओंका स्रोत है। किनारेके मार्गपर चलते समय विशाल सागरके दर्शन होते हैं, ज्वारके साथ सागरका जल मार्गके ऊपरसे निकल जाता है। सारे देशके लोग मनोरंजनके लिए किनारेके होटलोंमें एकत्र होते हैं, और होटलोंकी श्रेणियोंके बीचकी सड़कोंपर इतनी भीड़ हो जाती है कि सड़कपर निकलना मुश्किल हो जाता है। वेस्टरली हवा इतनी तेज़ चलती है कि कभी-कभी दीवालकी सड़कपर हमको रेंग-रेंगकर चलना होता था। इस हवाके कारण हमारे देशके तटवर्ती सारे पेड़ एक ओर झुक गये हैं।

मैं बुल्केजीके मुँहसे उनके देशकी बात सुनता-सुनता अविभूत हूँ, इस-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिए नहीं कि वह किसी नये देशकी नयी बात बता रहे हैं, वरन् उनके कहनेमें मुझे उनका भाव संवेदित कर रहा है। अपने घरकी, देशकी बात कहनेमें उनके मनमें पुरानी स्मृतियाँ जाग गई हैं, जिनके बीचसे वह जो कुछ कह रहे हैं वह मात्र विवरण नहीं है, एक अनुभव है। लगता है कि बेल्जियम देशके वेस्ट फ्लैण्डर्स प्रदेशका एक अल्हड़ किशोर वेस्टरलीके समान ही मुक्त स्वच्छन्द भावसे घूम रहा है, साइकिलिंग कर रहा है, समुद्रके किनारे मीलों मनमाना घूमता फिरता है, हवा चक्कियोंका मुआयना करता फिरता है। और पचीस वर्ष बाद वही किशोर मेरे सामने संन्यासी वेशमें है और अपने स्नेह और ममत्वसे मेरे विचलित मनको आर्द्र कर रहा है। हम दोनों सेण्डविचेज़ खा रहे हैं और कॉफ़ी पी रहे हैं। चढ़ाईके परिश्रमके बाद इनका स्वाद बढ़ गया है, लगता है इनकी बहुत आवश्यकता थी। खाने-पीने तथा बात-चीतके बीच हम एक दृष्टि दूरके विस्तारपर भी डाल लेते हैं। जंगलोंके बीचके खेत क्यारियाँ-सी लग रही हैं, चरते हुए पशु खिलौना-से जान पड़ते हैं, सड़कें काली लकीरें-सी फैली हुई हैं, पहाड़ी चोटियाँ टीलेसे जान पड़ते हैं, और दूर-दूरकी श्रेणियाँ दिखाई दे रही हैं।

अब हमने निश्चय किया कि कुछ समय समतल-शिखरपर बिताया जाय। पिछले अनुभवके आधारपर मैंने अधिक समय वहीं बितानेका आग्रह किया, वहाँ हवा अधिक मिलेगी। परन्तु बुल्केजी मार्गके विषयमें निश्चित नहीं हैं, कभी वहाँ गये अवश्य हैं, पर अब याद नहीं है। मैं तो अभी उसी दिन आया हूँ, पर मुझे अपनी स्मरणशक्तिपर भरोसा नहीं है। फिर भी हम सोचते हैं कि खोज लेना कठिन नहीं होगा। बुल्केजीने थर्मास और बैग लटकाया और हम चल पड़े। चबूतरेके नीचे उतरकर घने पेड़ोंके बीच हम उतारका रास्ता खोज रहे हैं। एक स्थलपर लगता है कि यहींसे रास्ता पाषाण-शिखरकी ओर उतरता है। पर कुछ दूर नीचे जाकर हम समझ जाते हैं कि यह रास्ता तो घाटीमें सीधा उतरता है। हम वापस आकर फिरसे खोज शुरू करते हैं। कई बार ग़लती करनेके बाद हम ठीक रास्तेपर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आ गये हैं और अब सामने किंचित् चढ़कर समतल-शिखरपर पहुँच जायँगे। यहाँ पहुँचकर बुल्केजी हर्षसे उछल पड़े और मेरे दोनो बाहोंको अपने हाथों-से दाबकर कह उठते हैं—'रघुवंश, यह तो बहुत अच्छी जगह है, मुझे तो इसका अनुमान नहीं था।' फिर हम चट्टानोंपर होते हुए अन्तिम शिलाखण्ड-पर पहुँचते हैं। यहाँ बहुत अच्छी हवा चल रही है और सामने घाटीका खुला हुआ विस्तार है। हम एक शिलाखण्डपर धोक लगाकर बैठ जाते हैं। दो-चार क़दम बाद ही नीचे सीधा ढाल चला गया जान पड़ता है। यद्यपि कुछ आगे बढ़कर देखनेसे, कुछ ही नीचे श्रेणीके अन्य उभार आ गये हैं। पर खड्डोंकी गहराईसे मन आतंकित होता है। बुल्केजीने मुझे उस ओर जाने और झाँकनेसे मना किया।

हम आरामसे फैलकर लेटे हुए रंग-बिरंगी तितलियोंका नृत्य देख रहे हैं और बातचीतमें व्यस्त हैं। बुल्केजी बीच-बीचमें बालकों जैसे आह्लादसे चिल्ला पड़ते हैं—'रघुवंश, यह देखो यह तितली कैसी सुन्दर है।' मैं उनके संकेतका अनुसरण करके देखता हूँ सचमुच ऐसी सुन्दर रंग-बिरंगी तितलियाँ पहले जीवनमें कभी नहीं देखी हैं। हम कहते हैं कि इतना कोमल और सूक्ष्म रंगोंका संयोग जिस चितेरेने किया है वह कैसा होगा? नीचेकी ओरकी श्रेणीकी हरियालीपर असंख्य तितलियाँ नाच रही हैं। सामनेके विस्तारकी क्षितिज सीमापर एक ओर रामगढ़की पहाड़ी और दूसरी ओर पारसनाथकी श्रेणी दिखाई दे रही है। और सारे सीमान्तपर हरियालीकी एक रेखा चली गयी है। बातचीतका क्रम धार्मिक अन्धविश्वासके प्रश्नको लेकर आगे बढ़ चला है। बुल्केजी धर्मके क्षेत्रमें अन्धविश्वासोंकी चर्चा करते हैं। मैं कहता हूँ—' बुल्केजी, क्या हमारे धार्मिक विश्वासमें अन्ध-विश्वासका अंश नहीं रहता? जिस श्रद्धापर धार्मिक आस्था आधारित है, वह विश्वासको उस सीमापर ग्रहण करती है जहाँपर उसमें और अन्ध-विश्वासमें अन्तर कर पाना कठिन है। फिर एकको विश्वास और दूसरेको अन्धविश्वास कैसे कहा जा सकता है! आप कह सकते हैं, पर मैं कैसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहूँ। मेरे लिए यह उतना ही अस्पष्ट है, आपके लिए जितना स्पष्ट।' बुल्के भाई कैथलिक विश्वासोंकी वैज्ञानिकता तथा प्रामाणिकतापर कह रहे हैं। और मन-ही-मन सोचता हूँ—'क्या इसी प्रकार हिन्दू-धर्म अथवा मुस्लिम-धर्मके विश्वासोंके सम्बन्धमें नहीं कहा जा सकता?' मेरे लिए यह समझ पाना सरल नहीं है। यदि यह संन्यासका जीवन अपनी अस्वाभाविकतामें भी मनुष्यके जीवनका एक महत् उद्देश्य हो सकता है, उच्च जीवनकी उपलब्धिमें सहायक हो सकता है, तो कैथलिक संन्यासी और हिन्दू संन्यासीमें अन्तर नहीं किया जा सकता।

झरझर हवाके झोंकोंके बीच हमारी बातचीत चल रही है। इस आत्मीयताके वातावरणमें बुल्के भाई मेरे भविष्यकी चर्चा छेड़ते हैं, वह भविष्य जो मेरे लिए अत्यन्त अस्पष्ट और भ्रामक बन गया है। वह मेरा मनोभाव समझते आये हैं और जानते हैं कि मेरी सार्थकता जीवनकी पूर्णतामें ही है। मैं कुछ छोड़कर विकसित नहीं हो सकता, मैं सब कुछ पाकर ही उपलब्ध और सार्थक बन सकूँगा। इसलिए वह कभी मेरे भविष्यको पारिवारिकता अथवा गृहस्थीके सन्दर्भसे अलग करके नहीं सोचते। मैं कहता—'बुल्केजी, मैं अपनी छोटी सीमाओंको छोड़ नहीं सकता, मुझे अपनोंसे मोह है, मैं अपनोंके आधारपर ही दूसरोंको जान-समझ सकता हूँ। सब कुछ छोड़कर आपके समान सब कुछ ग्रहण कर लेना मेरे लिए आसान नहीं है। इतना मैं अपनेको समझ सका हूँ। विवाहका सवाल मेरे सामने नहीं उठता, क्योंकि आप समझते हैं यह मेरे स्वीकार करनेसे अधिक दूसरेके स्वीकार करनेकी बात है। और इस विषयमें स्पष्ट हूँ जो मुझे, मेरी सारी शारीरिक विवशताओंके बावजूद, पूर्णतः स्वीकार कर सकेगा उसीका साथ मैं कर सकूँगा। पर इस विषयमें मैं सोचता नहीं, क्योंकि यह मेरी सीमाका प्रश्न नहीं है। यह बात दूसरी है कि सिद्धान्ततः मैं वैवाहिक जीवनपर विश्वास करता हूँ, लेकिन इस मृगमरीचिकामें मैं उलझना नहीं चाहता। मेरे सामने पहला सवाल जीविकाका है और उसीके आधारपर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं अपने भविष्यका कार्यक्रम बना लूँगा।' बुल्केके स्वरमें गहरी सहानुभूति है—'नहीं भइया, नौकरीका प्रश्न कठिन नहीं है। तुम विद्यालयमें ही रहना चाहते हो और यह ठीक भी है, अन्यथा और आसान होता। फिर भी समयकी अपेक्षा है, मैं समझता हूँ स्थान मिलेगा ही। गुरुजन ज़रूर सोचते होंगे। और तुम्हारे पारिवारिक जीवनके विषयमें मैं पूर्ण आशावान् हूँ। तुम्हारे लिए तो यह और भी आवश्यक है। तुमको एक गहरी सहानुभूतिके साथीकी बहुत आवश्यकता है।' फिर उन्होंने किंचित् मुसकरा कर कहा—'तुमको स्वीकार करनेमें जिस गहरी बौद्धिक सहानुभूतिकी अपेक्षा है वह दुर्लभ नहीं है।' मैंने हँसकर कह दिया कि ऐसी सहानुभूतिवाला व्यक्ति मिलनेपर देखा जायगा, अभीसे क्या कहा जाय।

बुल्केजी देखते हैं उनकी घड़ीमें पाँच बजनेवाला है। अब तुरन्त चलना चाहिए। सन्ध्याके पूर्व आश्रम वापस पहुँच जाना ही है। इस एकान्तके प्रति मनमें न जाने कैसी ममता पैदा हो गयी है कि जानेका मन नहीं हो रहा है। मैं ही नहीं बुल्केजीको भी यहाँसे उठनेमें जैसे प्रयत्न करना पड़ रहा है। वस्तुतः हम दोनोंने यहाँ जो स्नेह और आत्मीयताका वातावरण बनाया, उसीका यह बन्धन है। पर जीवनमें मोहके बन्धन तोड़ने पड़ते हैं, साधुको भी और गृहस्थको भी, उसके बिना चलता जो नहीं है। हम पाषाण-शिखरसे विदा लेकर चल पड़ते हैं। इस बार उतारका रास्ता खोजनेमें अधिक परेशानी नहीं हुई, एक दो बार भ्रम अवश्य हुआ। वापसीमें हमारी बातचीत अधिकतर अपने कार्यक्रमपर चलती है। 'राम-कथा'के अन्तिम प्रकरण लिखे जा रहे हैं। टाइपका काम भी बढ़ चला है। भाषाकी दृष्टिसे साथ-साथ पढ़नेका कार्य दो-चार दिनमें समाप्त हो जायगा। इस बीच मैंने 'मुक्तिदाता' का कार्य समाप्त कर लिया है। हेलॉरिसके टाइप किये हुए कार्यको हमलोग लगभग साथ-साथ देखते चल रहे हैं। वह परिश्रमी और ईमानदार व्यक्ति है, वह बेतियामें कोर्टका टाइपका कार्य करके अपना जीविकोपार्जन करता है, उसकी अच्छी आमदनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। गरमियोंमें सिविलकोर्टस बन्द हैं और वह बुल्केजीके कार्यसे यहाँ आ गया है। खानेपर वह हमारे साथ रहता है। सीधा पर व्यावहारिक कैथलिक है, और उसके विश्वास अथवा अन्धविश्वासका स्तर विहारी हिन्दूसे भिन्न नहीं है।

उतरते समय हमको श्रम नहीं पड़ रहा है, बातचीत करते उतरते जा रहे हैं। कहीं किसी स्थलपर दो क्षणके लिए रुकते हैं, फिर आगे बढ़ जाते हैं। चतुर्दिक्के दृश्यपर सन्ध्याकी छाया जैसे उतरती आ रही है, सूर्य पहाड़ी श्रेणीके पीछे उतर चुका है। हम इस छायाके घने होनेके पूर्व ही समतलपर आ जाना चाहते हैं। एकके-बाद-एक दूसरे पड़ावोंको पार करते हुए हम लगभग सवा पाँच बजे श्रेणीके बायें पार्श्वसे समतलपर उतर चुके हैं। फिर हम सड़कपर आमके पेड़के पास पहुँचकर उसे छोड़ दूसरी ओर उतर जाते हैं। हमने निश्चय किया है कि हम आश्रममें तालाबकी ओरसे प्रवेश करेंगे। विरलसे जंगलके बीचमें होकर हम आश्रमकी बाउण्डरीके समानान्तर चल रहे हैं। तालाबके निकट एक स्थलपर हम उसे पारकर आश्रमकी सीमामें प्रवेश करते हैं। फिर तालाबके किनारे होकर हम आश्रमकी ओर बढ़ रहे हैं। उसी समय खाकी पोशाकमें एक ब्रदर बगलमें छाता दाबे सामनेसे टहलने जाते हुए दिखाई दिये। ये ब्रदर आश्रममें मशीन आदिकी देख-रेख करते हैं। इञ्जीनियरिंगका इनका अनुभव है। पर ब्रदर बिलकुल मौन और शान्त रहते हैं, सदा जान पड़ता है ध्यानमग्न हैं। वास्तवमें इनका अधिकांश समय इसीमें व्यतीत ही होता है। इस दृष्टिसे खजांची फ़ादर और इन ब्रदरमें बहुत साम्य है। परन्तु फ़ादरमें गहन गम्भीरता है और ब्रदर सरल अधिक जान पड़ते हैं। हमने उन्हें अभिवादन किया और आगे बढ़ जाते हैं। जब हम अपने कमरेमें पहुँचे छः बज चुका है। अब हमको शीघ्र ही नहाने-धोनेमें लग जाना है, क्योंकि भूख अच्छी लग रही है और सवा सातका समय भी दूर नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आज बृहस्पतिवार (३० जून) है और ब्रदर एण्टोनी (दक्षिणी) तथा ब्रदर मैथ्यू (आदिवासी) के साथ घूमनेका कार्यक्रम कलसे ही निश्चित है। गत परसों सन्ध्या समय ब्रदर सॉपेनके साथ कुछ दूर गाँव और खेतोंमें घूमने जा चुका हूँ। पर ब्रदर सॉपेन (इंगलोइण्डियन) इतना कम बोलनेवाले हैं कि उनके साथ विशेष बात-चीत नहीं हो सकी और उस ओरके दृश्योंमें भी रोचकता नहीं थी। आज मैंने पहाड़ी श्रेणियोंके पार जाकर देखनेका निश्चय किया है। प्रातः जलपानके बाद हम चल पड़े हैं, पर मेरे दोनों साथी अभी मौन हैं। हम अपने परिचित घाटीके मार्गसे बढ़ रहे हैं, मनमें श्रेणीके उस पार जानेका कौतूहल मात्र है। वैसे घाटीके सारे वातावरणसे हिलमिल गया हूँ, सब परिचित और आत्मीय लगता है। कभी-कभी मैं अपने साथकी सफ़ेद पोशाकोंमें मौन डोलती हुई मूर्तियोंको भूल जाता हूँ और उच्छृङ्खल भावसे ढालों, चढ़ानों, शिखरों, वृक्षोंकी श्रेणियों और सीमान्त रेखाओंपर विचरने लगता हूँ।

क्रमशः हम नालेवाली घाटीमें नीचे उतरकर दूसरी ओर चढ़ गये हैं और अब उस ओरकी सड़कपर आगे बढ़ते जा रहे हैं। उस स्थानसे हम आगे बढ़ चुके हैं जहाँ तक मैं अनेक बार अपने प्रातःभ्रमणके क्रममें आ चुका हूँ। अब बाईं ओरकी श्रेणी समाप्त हो रही है, अन्तिम चोटी पीछे छूटती जा रही है। सामनेका मार्ग है कि आगे बढ़ता जा रहा है। उसी समय हम एकाएक बाईं ओर मुड़ जाते हैं। हम झाड़ियोंके बीचकी पगडण्डियोंसे होकर आगे बढ़ रहे हैं, सामने श्रेणीका अन्तिम छोटा-सा शिखर है जिसका अस्तित्व इस ओर आनेके बाद ही जान पड़ता है। हम इस शिखरके पार्श्वसे निकलकर उस ओर जानेके रास्तेपर हैं और हम फिर उसी ओरसे घूमते हुए आश्रम वापस लौट जायँगे। मुझे इस भ्रमणमें विशेष उत्साहकी बात नहीं लग रही है, पर ब्रदर एण्टोनी कह चुके हैं कि इधरकी उपत्यका बहुत सुन्दर है। पर इस उपत्यकाकी बात मेरी समझमें तो आ नहीं रही है। दोनों ब्रदर अभी मौन हैं, कुछ पूछना भी सम्भव नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आशा लगाये आगे बढ़ता जा रहा हूँ और ब्रदर एक गतिसे आगे बढ़ते जा रहे हैं।

हम उस स्थलपर पहुँच गये हैं, जहाँसे श्रेणी समाप्त होकर पीछेकी ओर घूमती है। ऐसा लग रहा है, इसी श्रेणीके सहारे हमको भी घूमना है और इसीके सहारे दूसरी ओर पहुँच जाना है। पर घूमते ही दाहिनी ओर लगभग समतलपर चट्टानोंकी नंगी पीठें गोचर हो जाती हैं। एकके बाद एक चट्टानोंका क्रम और उनकी नग्नता सुन्दर लगती है। कुछ आगे बढ़नेपर स्पष्ट हो जाता है कि ये चट्टानें ढालमें उतरती गई हैं जिसके कारण आगे आकस्मिक रूपसे खालीपन झुक गया है और फिर उतरते चले गये विस्तृत ढालमें सघन वृक्षोंकी हरियाली छायी हुई है। मैं इस स्थल-पर रुकना चाहता हूँ, कुछ थमता हूँ। ब्रदर एण्टोनी मेरा भाव समझते हैं और उन्होंने संकेतसे दूसरे ब्रदरको सूचित कर दिया। फिर हम वहीं रुक जाते हैं। दोनों ब्रदर दो ओर अपनी प्रार्थना समाप्त करने चले गये हैं, और मैं सामने एकाएक नीचे गिरकर फिर ढालमें फैली हुई हरियालीके विस्तारके सौन्दर्यको देख रहा हूँ। आगे अनन्त विस्तारके बाद साफ़ पहाड़ी श्रेणियोंकी रेखा है। आकाश साफ़ होनेके कारण दूर दाहिनी ओर राम-गढ़ और बाईं ओर पारसनाथ चोटियाँ दिखाई दे रही हैं। और बीचका लहरदार विस्तार लगता है जंगल-ही-जंगल फैले हैं। मेरे पीछे घाटीकी शृंखला घिरती हुई चली गई है। इसी बीच दोनों ब्रदर अपनी-अपनी प्रार्थना समाप्त करके आ गये। ब्रदर एण्टोनी मेरी मनःस्थितिका अनुमान लगाकर कहते हैं—'मैं कहता था न कि इस ओर आपको अच्छे सीन, क्या कहते हैं दृश्य मिलेंगे। आगे और अच्छा लगेगा।' ब्रदर हिन्दी टटोलकर बोलते हैं। हम तीनों बातचीत करते हुए आगे बढ़ते हैं।

वहाँसे पहाड़ी श्रेणियोंको पार कर हम एक दूसरे स्थलपर पहुँच गये हैं। मैं समझ रहा हूँ कि अब हम दूसरी ओर निकल आयेंगे। पर कुछ ही आगे बढ़नेपर एक दूसरा श्रेणीक्रम दिखाई देता है जिसमें दो चोटियाँ एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोण बनाती हुई उठी हुई हैं। पहले मुझे लगता है कि यह वही श्रेणियाँ हैं, पर ग़ौरसे देखनेसे लगता है कि ये कम ऊँची श्रेणियाँ हैं। ब्रदर एण्टोनीने समझाया कि ये पहाड़ी श्रेणियाँ सब मिलाकर त्रिकोण-सा बनाती हैं, ऐसा नहीं कि केवल समानान्तर चली गई हों। फिर हमको एक श्रेणी-के कुछ आगे बढ़े हुए बिंगपर चढ़ना पड़ रहा है, किंचित् चढ़ाईके बाद फिर हम नीचे उतर रहे हैं। ज्यों-ज्यों हम नीचे उतरते जाते हैं हमारे सामने एक उपत्यका स्पष्ट होती जा रही है। वस्तुतः दो ओरसे इस श्रेणी-ने कुछ झुककर घेर लिया है और एक ओर एक छोटी-सी पहाड़ीने रोक रखा है। श्रेणीके ऊपर दो शिखर अब भी दिखाई दे रहे हैं। यह तीन ओरसे घिरी हुई उपत्यका ख़ूब हरी-भरी है, साथ ही इसमें बड़े-बड़े पाषाण-खण्ड चारो ओर बिखरे हुए हैं। हम वृक्षोंकी छायामें पाषाणखण्डोंपर बैठकर आराम कर रहे हैं। उपत्यका जिस ओर खुली है उसी ओर नंगी चट्टानोंवाले ढाल हैं। इस दृश्यबोधके कारण इस स्थलका सौन्दर्य और भी बढ़ गया है। सामने दूरीपर पारसनाथकी चोटी और श्रेणियाँ हैं, रामगढ़ आड़में आ गया है।

मैं यहाँ चुपचाप हूँ। मुझे लग रहा है, इस स्थलपर आदमीको मौन रहना चाहिए। उपत्यकामें घिरे हुए मुझे आज फिर लगने लगा है कि मैं किसी रहस्यमय लोकमें ले आया गया हूँ। कोई जादूगर अथवा किसी दैत्य-का मैं बन्दी हूँ। उसने रातों-रात लाकर मुझे यहाँ बन्दी बना लिया है। यही जंगल है, यही वह उपत्यका है, फिर यहीं कहीं वह राजकुमारीका महल भी होगा? मुझे उस महलको खोजना है, राजकुमारीको मुक्त करना है, दैत्यको पराजित करना है। परन्तु इस उपत्यकाका सौन्दर्य मोहक है, इससे अपने मनको वशमें रखना होगा। कहीं मैं इसकी छलनामें ही भटकता न रह जाऊँ? हवाके झोंके आते हैं और मेरे तन-मन-प्राणको सिहरनसे भर जाते हैं। न जाने कैसी गन्ध है जो महमहा रही है और मनको उन्मत्त कर रही है। यह तीखी गन्ध सारे वन-प्रदेशमें गमक रही है। हरियालीकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तरंगें उठती हैं और नाचती हुई एक छोरसे दूसरे छोर तक फैलती जाती हैं। मन पुकार उठता है—'क्या सचमुच मुझे किसी दैत्यको पराजित करना है ? किसी महलको खोज निकालना है ? और राजकुमारी !'

ब्रदर एण्टोनीने प्रस्ताव किया—'अब हमको चलना चाहिए।' और हम चल पड़ते हैं। दाहिनी ओरके श्रेणीके घिरावको हमको एक नालेकी घाटीमें चढ़कर पार करना पड़ता है। इस घाटीको पार कर हम श्रेणीके बिलकुल दूसरी ओर पहुँच गये। फटूशकी झाड़ियोंका उपद्रव बहुत अधिक है, रास्ता जहाँ-तहाँ घेरे हैं। पर भालूका आतंक भी कम नहीं है। उससे मोर्चाके लिए आदिवासी ब्रदर छाता लेकर और एण्टोनी अपनी बन्दूक (अपने हाथमें एक टहनी लिये हुए हैं) लेकर प्रस्तुत हैं। ब्रदर एण्टोनी-के अनुसार हम सलाम बोलनेको तैयार हैं, पर मैं तो अभिवादनके लिए केवल गरदन हिला सकता हूँ। मैंने ब्रदरसे इस मादक गन्धके बारेमें जिज्ञासा प्रकट की। और जब मुझे ज्ञात हुआ कि करौंदा है जो इस प्रकार सारे वनप्रान्तरको महमहा रहा है, तो मेरे आश्चर्यका अन्त नहीं रहा। इस ओर आकर, मैंने सड़क-सड़क होकर चलनेका प्रस्ताव किया, क्योंकि अब समय अधिक हो चुका है और हमको आध घण्टेमें आश्रम पहुँच जाना चाहिए। इस ओर श्रेणीके समतल पठारका विस्तार है और सड़क श्रेणीसे कुछ हटकर उसके समानान्तर चली गई है। इधर पाषाण-शिखर बहुत स्पष्ट नहीं हो पाता है, क्योंकि वह तरु-शिखरकी ओटमें किंचित् आ गया है। हम तरु-शिखर और चट्टानशिखरकी ऊँचाईको घटते-बढ़ते देखते हुए क़दम बढ़ाये चले जा रहे हैं, इसी समय आकाशमें घिरते हुए मेघोंके दर्शन भी होते हैं। अब तो हमने अपनी रफ़्तार और भी तेज़ कर दी है। बस हम अधिक दूर भी नहीं हैं, पिंजरापोलका फाटक दिखाई दे रहा है और आगे बढ़ते ही हम अपने कम्पाउण्डमें पहुँच जायेंगे। एकाएक मैंने अनुभव किया कि आज इस उपत्यकाको देखनेके बाद ही मेरी हरी घाटीकी यात्रा पूरी मानी जा सकती है। बिना इसके हरी घाटीकी अनुभूतिका एक अंश छूट ही जाता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्तब्ध रातकी ध्वनियोंके बीच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: १० :

रातके भोजनके बाद सवा नौ बजे तक बुल्केजी और मैं साथ-साथ घूमते और बातचीतमें संलग्न रहते हैं। कभी आश्रमके घने वृक्षोंके नीचे पड़ी सीमेण्टकी बेंचोंपर बैठकर हम जुगुनुओंका नृत्य देखते हुए बातचीत करते हैं, कभी आश्रमके, सड़ककी ओर वाले तालाबके बाँधपर बैठकर अपने गत जीवनके इतिहासकी चर्चा करते हैं और कभी आश्रमसे शहर जानेवाली सड़कके उतारपर एक नालेके पुलपर हम देर तक बैठे रहते हैं। इस सारे प्रदेशमें सात बजेके बाद ही आधी रात जैसा सन्नाटा छा जाता है। शहर तीन मीलकी दूरीपर है, निकट कोई गाँव भी नहीं है। चारों ओर पहाड़ियों और जंगलके बीच इस आश्रमका जीवन सात बजेके बाद बिलकुल डूब जाता है। कॉलेजके लाइब्रेरीकी ओरके बरामदेमें फ़ादर्स बैठकर कॉफ़ी पीते हैं और अन्य बरामदोंमें कुछ देरतक बात-चीत करनेके बाद विद्यार्थी अपने कमरोंमें चले जाते हैं। हमको आश्रमके बल्बकी रोशनी ज़रूर दिखाई देती है, इसके अतिरिक्त घूमते हुए अथवा बैठकर बातचीत करते हुए आश्रमके जीवनका आभास नहीं मिलता। परन्तु इन स्तब्ध रातोंमें जब हमारा ध्यान भंग होता है तब जान पड़ता है कि हम अनेक ध्वनियोंके बीच घिरे हुए हैं। झिल्ली, झींगुर, क्रीकेटकी करी-किरी किटी-किटी ची-ची-ची-ची आदि अनेक ध्वनियाँ वातावरणमें तरंगायित होकर गूँजती रहती हैं। नालेके पुलपर अथवा तालाबके बाँधपर मेढकोंकी भीषण टरटराहट अपनी अद्भुत तालल्यके बावजूद आतंककारी है। अनेक मोटे-पतले कण्ठोंका समवेत गान सुनाई देता है। रातकी नीरवतामें कभी-कभी तो ऐसा जान पड़ता है जैसे मेला लगा हो और उसका निरन्तर शोर चल रहा हो। पर जब हम इनकी ओर ध्यान न देकर अपने-आपमें व्यस्त रहते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं तब ये समस्त ध्वनियाँ पृष्ठभूमिमें चली जाती हैं और दो अभिन्न रातके सन्नाटेमें अपने-आपमें डूबे हुए खो जाते हैं।

अँधेरी रात है और हम नीले आकाशके नीचे तारोंके मोहक प्रकाशमें आश्रमसे ढालकी सड़कपर चले जा रहे हैं। आकाशकी नीलिमा भी असंख्य ताराओंके प्रकाशसे उद्भासित हो गई है। हम दोनों जैसे चारों ओरसे उठते हुए प्यालेकी पेंदीमें चले जा रहे हैं। दोनों ओर लहलहाते हुए धान-के खेतोंका आभास मिल रहा है, उनकी क्यारियोंके बीचसे बहते हुए पानी की कलकल ध्वनि मधुर लग रही है। यहाँ बाँधसे रोककर तालाबके पानी-से धानके खेतोंमें पर्याप्त मात्रामें पानी समय-समयपर देते रहते हैं। खेतों-के ढालू होनेके कारण उनमें मेड़े बनाकर पानी भरा जाता है, और ढाल-पर पानी तेज़ीसे बहनेके कारण आवाज़ करता है। धीरे-धीरे हम नालेके पुलकी ओर ही बढ़ रहे हैं। पुलके पास नाला अधिक विस्तारमें फैलकर तालाब जैसा लगता है। हम दाहिनी ओरकी पुलकी दीवारपर बैठ जाते हैं। यहाँ पानीका प्रवाह टकराकर रुकता है और फिर आगे बढ़ता है, अतः हहरघलके साथ खलखलकी आवाज़ भी आ रही है। परन्तु इन सबके ऊपर है दादुरोंकी निरन्तर चलनेवाली टों-टों-टरर-टोंटों कों-कों टरर-टर। यह कोरस कई मोटी-पतली ध्वनियोंका एक साथ समवेत रूपसे चल रहा है। इसकी निरन्तरतामें कभी-कभी जब अन्तराल पड़ता है, तब एकाएक लगता है वातावरण एकदम शान्त हो गया है, समयकी गति रुक गई है।

और हम बातचीतमें संलग्न हैं। बीच-बीचमें कुछ देरके लिए मौन होकर चतुर्दिक्में अपनेको फैलानेका प्रयत्न करते हैं और फिर प्रकृतिके धूमिल प्रकाशकी रहस्यमयतासे बचनेके लिए एक दूसरेकी ममतामें डूब जाते हैं। हम अपने प्रारम्भिक परिचयकी चर्चा कर रहे हैं। मैं हिन्दू हॉस्टलमें रहता हूँ और कामिल दादा सेण्ट जॉसेफ़स सेमीनरीमें। मैंने देखा है कि विभागमें एक छः फ़ीटसे कई इंच लम्बा, ऊँची नाक और ऊँचे ललाटवाला, भूरे बाल तथा दाढ़ी और नीली आँखोंवाला गौरांग विदेशी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पादरियोंकी पोशाकमें आने लगा है। सुना है कि उसने एम० ए० प्रीवियस में दाखिला लिया है। उसके आकर्षक व्यक्तित्व और एम० ए० हिन्दीमें लेनेके तथ्यने मुझे उसकी ओर आकर्षित किया है। हमारा पहिला परिचय किसने कराया यह हममें किसीको याद नहीं है। पर म्योर कॉलेजमें हमारी अक्सर भेंट हो जाती है, बुल्केजी क्लासेज़से वापस जाते हैं और मैं लाइब्रेरी-के लिए जाता रहता हूँ। अक्सर वह अपनी साइकिलसे दोनों हाथ उठाकर आते-जाते नमस्ते कर लेते हैं। कभी-कभी उतरकर एक-दो बातें भी हो जाती हैं। इस प्रकारकी पहली भेंटकी हम याद करते हैं। अपने भारतीय संस्कारके अनुसार मैं उनको गौरांग विदेशी मानकर अंग्रेज़ीमें बातचीत करना प्रारम्भ करता हूँ, और बुल्केजी उसी दिन एक हाथसे मेरा कन्धा दाबते हुए कहते हैं—'देखिएजी, गोरी चमड़ीसे यह न समझिए कि मैं अंग्रेज़ हूँ। अंग्रेज़ी मेरी मातृभाषा नहीं है। और मैं तो बिहारी हूँ, मेरी भाषा हिन्दी है।' मैं किंचित् लज्जित हुआ और प्रसन्न भी। उनकी बिहारीवाली बातको लेकर भी हम हँसते हैं। वह भारतीय नागरिकता प्राप्त कर चुके हैं और राँची उनका स्थान है, क्योंकि जेज़ुयिट संघके इसी प्रदेशसे उनका सम्बन्ध है। अतः अपनेको बिहारी माननेका उनका गौरव अक्षुण्ण है।

हम इस पर्वतीय वनप्रान्तरमें असंख्य ताराओंसे नीलोज्ज्वल निरभ्र आकाशके नीचे बैठे हैं। सारा दृश्यविधान छायाओंके हल्के गहरेपनमें ही व्यक्त है। प्रकाश इतना नहीं कि किसी वस्तुको व्यक्त कर सके, पर आभासित अवश्य कर रहा है। अपने सघन वृक्षोंके मध्यमें सेण्ट स्टेनिसलॉस कॉलेज पुंजीभूत छायाओंके बीच एक आकृति ग्रहण कर रहा है। उसकी दुमंज़िली इमारत, उसका गिरजा, तथा ऊपरका टीन, सबका अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। और उसके ठीक पीछे काली सघन छायाकृतिमें चट्टानशिखर सारी श्रेणीको अपने विंगमें सम्भाले खड़ा हुआ है। हमारे सामने दाहिनी ओर ऊपर उठता हुआ पठार समतल-सा बहुत दूर तक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फैला है जिसके बीचमें एक स्थलपर सर्पफन पहाड़ी छायाकृतिमें खड़ी है और आगे चलकर क्षितिजपर काले बादलों जैसी छाया एक ओरसे दूसरे ओर तक चली गई है। हमारे पीछे, दूसरी ओर कुछ ही उठकर पठार समतल हो गया है जिसपर काली आकृतियोंमें खड़े वृक्षों और झाड़ियोंको पहचाना जा सकता है। हाँ, कुछ दूरपर इस ओर भी बिना सूँड़का हाथी जैसी हस्तिपीठ पहाड़ी है। हम एक ओर तो इस छायालोकको देखते हैं, दूसरी ओर जलकी कलकल और दादुरोंका स्वरनिनाद भी सुनते हैं। और फिर अपने-आपको वातावरणसे खींचकर अपने अतीत जीवनकी ओर ले जाते हैं।

हमको भानु काश्मीरीकी याद आती है, जानकीनाथ बुल्केजीका सहपाठी था। उसीके माध्यमसे हमारी मित्रताका प्रारम्भ माना जा सकता है। भानु कहता है 'हम लोग पादरीजीके यहाँ जाँयगे।' मैं 'हाँ' कह देता हूँ। हम दोनों सेण्ट जॉसिफ़ गिरजाघर पहुँचते हैं, थार्नहिल रोडपर लगभग हमारे हॉस्टलके सामने ही है। वस्तुतः हमारे हॉस्टलके सामने सेण्ट मैरीज़ कान्वेण्ट है और उसीसे लगा हुआ चर्च है। मैं विशपके घरके ऊपरके कमरेमें भानुके साथ फ़ादरके पास पहुँच जाता हूँ। वह प्रसन्न और उल्लसित होकर हमारा स्वागत करते हैं। फिर हम आरामकुर्सियोंपर बैठे अनेक प्रकारकी बातें करते हैं। आज हमको एक प्रसंग याद आ रहा है। बुल्केजीने बिस्कुटका एक डब्बा हमारे सामने पेश किया। मैं तो सहज भावसे कई बिस्कुट ले लेता हूँ, पर जानकीनाथ मना कर देता है। बुल्केजी कहते हैं कि 'मैं कारण उसी दिन समझ गया था।' और रास्तेमें काश्मीरी पण्डित भानुने प्रश्न किया—'रघुवंशजी, क्या आप ईसाईके हाथका खा लेते हैं?' फिर मैं क्या पूछता कि भानु तुमने आग्रह करनेपर भी खाया क्यों नहीं। उत्तर तो मिल ही गया। मैंने उत्तर दे दिया कि मुझमें यह विवेक नहीं है। मेरे उत्तरसे मेरा मित्र प्रसन्न नहीं हुआ, इतना स्पष्ट है। खैर कुछ भी हो, हम दोनों मानते हैं कि उस दिनके बाद मैं बिस्कुटके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लालचमें उनके यहाँ अधिक आने-जाने लगता हूँ। और बुल्केजी हैं कि उन्होंने मेरे स्वागत-सत्कारके लिए बिस्कुटके डब्बेकी स्थायी नियुक्ति कर दी।

भानु पण्डित भी खूब था। पढ़ाई-लिखाईको इस गम्भीरतासे लेता है कि भय लगता है कि कहीं पागल न हो जाय। पागल होनेकी बात भी यों ही नहीं है। बुल्केजीको मैं दूसरे काश्मीरी पण्डित मट्टूकी बात बताता हूँ। यह विद्यार्थी मैं जब एम० ए० फ़ाइनलमें था तब प्रीवियस हिन्दीमें आया था और हमारे केशवजीका सहपाठी था। उसने पढ़ाई-लिखाईको इतनी गम्भीरतासे लिया कि मम्मटके 'काव्य-प्रकाश'को बगलमें दाबे घूमने लगा। सीनियर कक्षामें मैं अच्छा विद्यार्थी हूँ, यह जानकर वह प्रायः मेरे पास भी आया करता है। दशहराकी छुट्टियोंके कुछ ही पहले एक दिन केशव आकर सूचना देते हैं कि मट्टू 'डिलिट गाड' हो गया है। उस रात उसने कोई प्रकाश पुंज देखा है। केशव बतलाते हैं कि रात बारह बजे उसने चिल्लाकर मुझे जगाया और एक ओर दिखाकर कहा कि वह प्रकाश है। और उसी प्रकाशको देखते-देखते वह ईश्वर हो गया। पढ़नेका उसका इतना शौक़ है कि वह अपनेको 'डि० लिट्० गाड' कहता है। उसने इसी रूपमें चारों ओर अपनी लीला भी शुरू कर दी। मुझसे मिलकर उसने घोषित किया कि केशवको उसने 'वाइस गाड' नियुक्त किया है और मुझे 'पब्लीसिटी मिनिस्टर'। अपने पार्टफ़ोलियोको सँभालनेके कर्तव्यके रूपमें मुझे वह बहुत-से काग़ज़के टुकड़े दे जाता है जिसमें न जाने कितनी बातें उसने कमरा बन्द करके लिखी हैं। और मुझे आज्ञा मिलती है कि जल्दी-से-जल्दी गाडका सन्देश भूले-भटके संसारवासियोंके पास पहुँचा दूँ।

खैर 'डि० लिट० गाड'ने हम दोनोंको कर्तव्यका भार दिया तो दिया ही, भगवन् (हमारे वार्डन महोदय) ने भी बुलाकर हम दोनोंको गाड महोदयकी देख-रेख रखनेका दायित्व सौंपा। इस दोहरे दायित्वसे हम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दोनोंको काफ़ी परेशानी उठानी पड़ती है। गाड महोदय एक दिन पं० अमरनाथ झा (हमारे वाइस चांसलर) जीके यहाँ पहुँच जाते हैं और उनको पुराना पापी आदि कहकर उनकी मुक्तिकी घोषणा कर आते हैं। एक दिन सर सप्रूके यहाँ पहुँचकर उनके गालपर हाथ फेरकर उनको पापमुक्त करते हैं। मट्टूके गाडत्वका समाचार कुछ-कुछ फैल गया है, इस कारण लोग समझ जाते हैं। एक दिन सर कृष्णन्के यहाँ जाकर संगीत सुनते हैं और जलपान भी करते हैं। यहाँ तक तो फिर ठीक था, लेकिन एक दिन सेण्ट मैरीज़में घुस जाते हैं और वहाँके चपरासियोंके हाथसे हमलोग उनको छुड़ाते हैं। एक दिन भगवन्के कमरेमें घुसकर उनकी नंगी तोंदपर हाथ फेरकर कहते हैं कि भगवन् तुम शेषनाग हो और मैं भगवान् हूँ, मैं तुमपर शयन करूँगा।' भगवन्जी उसको किसी प्रकार समझा-बुझाकर मुक्ति पाते हैं। उसी दिन वह हॉस्टलके असिस्टेण्टसे किसी बातपर रुष्ट होकर हज़ारों गालियाँ सुनाते हैं। दिन-पर-दिन गाड महोदयकी उत्तेजनाको बढ़ता देखकर हमलोग चिन्तित होते गये। अन्ततः उनके घरके लोग आकर हमलोगोंकी सहायतासे किसी प्रकार उसको काश्मीर वापस ले जाते हैं।

हम बात कर रहे हैं कि यह भानु पण्डित भी मम्मटके काश्मीरी होनेपर गर्व करते हैं और उनको ब्राह्मणत्वका भी अभिमान है। लकड़ीकी चट्टी पहनकर वह सारे हॉस्टलमें घूमते हैं और जाड़ोंमें काश्मीरी कण्डी लटकाकर भी घूमते देखे जा सकते हैं। वैसे भानु बहुत सरल और भला है और उसकी मुसकानकी सरलतामें तो कभी-कभी पागलपनकी छाया देखकर मन सिहर जाता है; पर तब सोचता हूँ यह मट्टू पण्डितके कारण ऐसा मन कमज़ोर हो गया है, अन्यथा भानु पण्डितमें कहीं कोई गड़बड़ नहीं है। बुल्केजी कहते हैं किंचित् झक्कके अतिरिक्त भानु ठीक ही था। उनका कहना है कि प्रतिभा और ग़रीबीके कारण ऐसे लड़कोंका सन्तुलन कभी-कभी बिगड़ जाता है जो स्वाभाविक है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन्हीं चर्चाओंमें नौ बज चुका है और हमको वापस लौटना चाहिए। हम जुगुनुओंका नृत्य देखते हुए वापस लौट रहे हैं। अतीत हमको वर्तमान जैसा अभिन्न लगता रहा है। वस्तुतः हम अपने आत्मीय अस्तित्वमें इस प्रकार जीते हैं कि हमारे लिए गत, वर्तमान या आगतका कोई भिन्न अर्थ रह नहीं गया है। बुल्केजी उस दिनकी याद दिलाते हैं, जब वह फ़ाइनलकी परीक्षा देकर राँची जानेवाले हैं, और हम दोनों काफ़ी हाउसमें कोल्ड काफ़ी पीते हुए उनकी रिसर्चकी चर्चा कर रहे हैं। बुल्केजीको रिसर्चके सिलसिलेमें यहाँ दो वर्ष रहनेकी अनुमति सुपीरियरसे मिल गयी है और हम उससे बेहद प्रसन्न हैं। एक प्रकारसे हम बुल्केजीके जानेके समय उसीको इस रूपमें सेलीब्रेट कर रहे थे। हमारे लिए वह दिन इसलिए भी महत्त्व-पूर्ण है कि हम मित्रताकी पहली मंजिल पारकर आत्मीयताकी सीमामें इसी समयसे प्रवेश करते हैं। फिर धीरे-धीरे हमारी आत्मीयता बढ़ती ही गयी है। इसीके बादसे हम साइकिलपर साथ-साथ न जाने कहाँ-कहाँ घूमते फिरे। साइकिलपर घूमना बुल्केजीको बचपनसे आज तक एक-सा पसन्द है। और आगे डण्डेपर बैठकर बातचीत करते हुए उनके साथ घूमनेमें मुझे भी आनन्द आता है। बुल्के भाईने अपनी मुट्ठीसे अँधेरा करके घड़ीमें समय देखा तो सवा नौ बज चुका है और अब हमको अपने कमरोंमें पहुँचनेकी जल्दी है। ठीक साढ़े नौ बजे लाइट आफ़ हो जाती है।

हमारे रात्रिभ्रमणका न कोई निश्चित्त क्रम है और न दूरीकी कोई माप ही। माप है तो केवल समयकी, भोजनपरसे हम सवा आठसे पूर्व उठ जाते हैं और सवा नौ बजते-बजते हमको अपने कमरोंमें पहुँचना होता है। बुल्के भाई नित्य क्रमसे पहले मेरे कमरेमें आकर मेरा बिस्तरा और मच्छरदानी ठीक करते हैं और फिर विदा लेकर अपने कमरेमें जाते हैं। आज किसी सन्तका दिवस मनाया गया है, रात्रि भोजनमें केक्स, पुडिंग तथा फलोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सलाद आदिसे तृप्त होकर हम लोग घूमनेके लिए निकले हैं। उजाले पाख-की तेरस होगी या चौदस, आकाशमें चाँद ऊपर चढ़ आया है और सारा वनप्रदेश चाँदनीसे उज्ज्वल हो गया है। हम आश्रमकी सड़कके वृक्षोंकी छायामें आगे बढ़ रहे हैं, कहीं-कहीं वृक्षोंकी डालियोंके बीचसे चाँदनीका एक खण्ड हमारे ऊपर पड़ता है और हम आगे बढ़ जाते हैं।

आज बुल्के भाईको माँकी याद आ गई है और वह अपने संन्यास लेने-के निश्चयकी बातकी चर्चा कर रहे हैं। मेरे मनमें उनके संन्यास लेनेकी बात अनेक बार उठी है। वह कैसा निश्चय होगा जिसमें अपने स्वजन, परिजन-को ही छोड़नेका नहीं वरन् स्वदेशको सदाके लिए छोड़नेका संकल्प हो? इस कोमल अत्यन्त आत्मीय जनसे यह हो कैसे सका? इनके बन्धु-बान्धवोंने इस निश्चयको सहा कैसे होगा? और सबसे अधिक इनकी ममतामयी माँको कैसा लगा होगा, उन्होंने किस सहारे इस वज्र कठोर प्रहारको सहा होगा? अनेक बार इन प्रश्नोंसे मथित होकर भी सीधे-सीधे पूछनेका साहस कभी हुआ नहीं। पर किसी भावाकुलतामें, आवेश शब्दका प्रयोग करना उचित नहीं होगा, वह स्वयं ही उस कथाको कहने लगे हैं तो मैं पूरे मनोयोग तथा अनुभूतिके साथ ग्रहण कर रहा हूँ।

प्रथम महायुद्धके दौरानमें बुल्केजी छोटे थे। उनको याद है कि उन दिनों पिता बाहर थे और उनकी माता अपने छोटे-छोटे बच्चोंके साथ क़स्बे (लिस्सबेग)में शंकित और भयभीत रहती थीं। सारे क़स्बेमें भय और आतंकका वातावरण था। शामसे ही माँएँ बच्चोंको घरोंमें रोककर द्वार बन्द कर लेती थीं। उनके क़स्बेमें कुछ समय तक बड़े-बड़े क़दवाले फ़ौजी सिपाही रुके रहे। इन ऊँचे सिपाहियोंको देखकर लोग शंकित लगते, माँएँ बच्चोंको सड़कोंसे घरमें बुला लेतीं। कई बार उन्होंने देखा क़स्बेसे होकर कई तरहकी फ़ौजें आईं गईं। पर उन्हें इन ऊँचे क़दवाले जर्मन सिपाहियोंके व्यवहारके सम्बन्धमें कोई शिकायतकी बात याद नहीं है। जर्मन आकूपेशनके दिनोंके बादके उल्लासका स्मरण उन्हें अवश्य है। उनको लगा कि जैसे एकाएक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चिन्ता, निराशा और अवसादका वातावरण विलीन हो गया है, आशा तथा उल्लासका प्रकाश फैल गया है। सब बच्चे विशषरूपसे इसलिए भी प्रसन्न थे कि उन्हें स्कूल जाने तथा खेलने-कूदनेकी पूरी स्वच्छन्दता मिल जायगी।

'पिताके वापस आ जानेसे न केवल हमको प्रसन्नता हुई, वरन् माँकी चिन्ताके समाप्त हो जानेसे हमको माँके व्यवहारमें अधिक स्नेह तथा सरसता-का अनुभव भी हुआ। लड़ाईके दिनोंमें हमारे क़स्बेके चर्चके प्रीस्ट माँको समझाने और सान्त्वना देने प्रायः आया करते थे। उनकी कोमलताका तथा स्नेहमयी वाणीका मेरे मनपर प्रभाव रहा है। कुछ ही दिनोंमें मुझे हाई स्कूलकी पढ़ाईके लिए अपने क़स्बेके पासके नगर ब्रूजस जाना पड़ता है। अभी तक कोई नहीं कह सकता था कि यह विद्यार्थी आगे चलकर एक दिन संसार छोड़नेका निश्चय कर लेगा। मैं स्वयं कुछ भी नहीं समझ सकता था। मुझे तब साहित्यसे प्रेम था, अभिनयसे प्रेम था, खेल-कूदसे प्रेम था। मैंने तब तक शेक्सपीयरके नाटकोंकी कई भूमिकाओंमें अभिनय किया था। विद्यार्थियोंके ग्रूप दूर-दूरके क़स्बोंमें अभिनय करने जाते थे और मैं भी उत्साह-के साथ उनके साथ जाता हूँ। मुझे साइकिलपर घूमनेका शौक़ उस उम्रमें बहुत अधिक था।'

'मैं अपने परिवारका सबसे बड़ा लड़का हूँ, और इस कारण पिता सम्मानकी दृष्टिसे देखते हैं और माँका अधिक स्नेह मुझको प्राप्त हो सका है। पिता चाचाजीके साथ नार्वेसे स्वेडेनसे लकड़ीका व्यापार करते हैं। चाचाजी सम्पन्न धनी हैं, वे पिताजीको व्यवसायका भागी बनाना चाहते हैं, पर पिता धार्मिक वृत्तिके व्यक्ति हैं और व्यापारमें अधिक उलझना नहीं चाहते। मुझे अपने चाचा तथा चाचीका स्नेह भी प्राप्त है। उनकी लड़की मेरी ही आयुकी है और मुझसे उसकी अच्छी मित्रता है। वे लोग सागर-तटपर शानदार कोठीमें रहते हैं और वहाँ उनके होटल भी हैं। कभी-कभी मैं उनका मेहमान भी होता हूँ, तब उनका स्नेह मुझे जितना आकर्षक लगता है, उतना ही उनका रहन-सहन विकर्षक है। यह इतना उस समयसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी स्पष्ट लगता रहा है कि मुझमें अपने पिता-माताकी धार्मिक वृत्तिका संस्कार विशेष है।'

हम टहलते हुए नालेके पुलको पारकर दूसरी ओर चढ़ाईपर आ गये हैं। पानी बरस चुकनेके कारण चाँदनी प्रखर रूपसे फैली है। चारों ओरका दृश्य अधिक गहरी छायाओंमें व्यक्त है। यह निश्चित है कि चाँदनी कितनी ही प्रकाशित क्यों न हो वस्तुओंको रंगरूप नहीं दे सकती, केवल छाया-प्रकाशके माध्यमसे आकृतिको अधिक व्यक्त कर पाती है। हाँ, जहाँ पानी भरा या वह रहा है, वहाँ चमक अवश्य है, पानीमें प्रतिबिम्ब ग्रहण करनेकी शक्ति जो है। आकाशमें चाँदनीका ऐसा प्रवाह है कि तारे धूमिल होकर बहे जा रहे हैं। वनप्रान्तर, समतल प्रदेश तथा धान-खेतोंपर चाँदनी उमड़ पड़ी है। निकटवर्ती धानके खेत हवाके झोंकोंमें चमक जाते हैं। वृक्षोंका समूह घनी कालिमामें आकृति ग्रहण कर खड़ा है। क्या बाईं ओरका दूर-वर्ती सर्पफन शिखर, क्या दाहिनी ओरकी हस्तिपीठ पहाड़ी और क्या पीछेका वृक्षोंसे आच्छादित सेण्ट स्टेनिसलॉस कॉलेज और उसकी पृष्ठभूमिमें खड़ी हुई हरी घाटीकी श्रेणी जिसका एक पार्श्व मानो कॉलेजके ठीक ऊपर उसकी रक्षा कर रहा हो, सबके-सब काली घनी छायाओंमें स्पष्ट व्यक्त हैं। हम दोनों अब नगरकी ओरसे आनेवाली मुख्य सड़कपर आ गये हैं। और हम उसपर होकर घाटीकी ओर लौट पड़ते हैं, जैसा कहा गया है मुख्य सड़क कॉलेजकी बाईं ओरकी बाउण्डरीको छूती हुई पिंजरापोलके पाससे गुज़रती है। हम उसी सड़कसे लौट रहे हैं। हम अतीतके इतिहासमें आत्मविस्मृतसे चले जा रहे हैं, बुल्के भाई सुना रहे हैं और मैं सुन रहा हूँ।

'आगे सबकी इच्छानुसार मैंने लुवेन विश्वविद्यालय इञ्जीनियरिंगकी डिग्रीके लिए ज्वाइन किया। विज्ञानकी पढ़ाईके साथ मैं अधिकाधिक गम्भीर और चिन्तनशील होता जा रहा था। मेरे मनमें अनेक तर्क-वितर्क उठते रहते और मैं अपने धर्मपितासे इस विषयमें परामर्श करता रहता। मैं अपने मनकी शंकाओं, विश्वास सम्बन्धी ऊहापोह तथा धार्मिक चिन्तनोंको उनके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सामने स्पष्टतः रखता और वह ईसाके पवित्र जीवनके माध्यमसे उनका समाधान करते। इसी स्थितिसे मेरे मनमें ईसाके पवित्र जीवन का आकर्षण बढ़ता गया। जब मैं अपनी डिग्रीके तीसरे वर्षमें था, ईसाके पवित्र जीवनमें प्रवेश करनेका मेरा संकल्प भी दृढ़ हो चुका था। मैं अपना संकल्प अपने धर्मपिताके सम्मुख व्यक्त करता हूँ। वह मेरे इस संकल्पकी प्रशंसा करके भी शान्त चित्तसे सोचने-समझनेकी राय देते हैं। वह सच्चे मार्गदर्शककी भाँति इस पथकी कठिनाइयोंका निर्देश भी करते हैं और सांसारिक कर्तव्योंका स्मरण भी दिलाते हैं। उन्होंने मुझको अध्ययनके लिए पुस्तकें भी दीं। पर जब मेरा निश्चय अन्त तक उन्होंने दृढ़ देखा तो उन्होंने संघमें प्रवेश करनेकी आज्ञा दे दी। वह मेरी आन्तरिक प्रसन्नताका दिन था।'

'अब मेरे सामने यह समस्या थी कि मैं अपने माता-पिताके सामने अपना संकल्प किस प्रकार व्यक्त करूँ। मैं छुट्टियोंमें घर गया हूँ, सारा परिवार प्रसन्न था। हम लोग एक दिन माँके साथ ताश खेल रहे थे। खेल चल रहा था और मैं सोचता हूँ यही उपयुक्त समय है। खेलके बीचमें एकाएक मैं कह देता हूँ—'माँ, मैंने संघमें प्रवेश करनेका निश्चय कर लिया है।' मैंने देखा हाथमें ताशके पत्ते लिये हुए माँ हतप्रभ रह गई हैं। पर उन्होंने अपने धार्मिक विश्वासके बलपर इस आघातको सह लिया, और व्यक्त रूपसे उनके लिए सहज बात हो, ऐसा ही उनके व्यवहारसे प्रकट होता है। रातमें माँ पितासे कह रही हैं—'मैं समझती थी यह जायगा।' पिताने सम्भवतः गहरी 'हाँ' के अतिरिक्त कुछ नहीं कहा। पर माँकी इस संक्षिप्त-सी बातमें और पिताकी गहरी हाँमें न जाने कितनी व्यञ्जना छिपी है, यह उस दिन भी समझ सका था, पर आज और समझनेकी स्थितिमें हूँ। कैथलिक परिवारोंमें लड़कोंके पुरोहित बननेके निश्चयको हर्षपूर्वक उत्सवके रूपमें लिया जाता है। मेरे परिवारमें भी हर्ष प्रकट किया गया और उत्सव मनाया गया, पर मैं समझता हूँ माँका मन अन्दरसे उदास है और इसीलिए वह गम्भीर हैं। हमारे यहाँ पुरोहित होना साधारण बात है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरे छोटे भाईने भी बादमें संघमें प्रवेश किया। पर मैंने जेजुयिट संघमें प्रवेश करनेका संकल्प किया है और भारतमें जानेकी प्रतिज्ञाके साथ, माँके लिए अधिक चिन्ताकी बात यही थी। माँ अपने बड़े लड़केको, जिसकी ममता उनके मनमें शायद सबसे अधिक है, बादमें कभी देख भी नहीं सकेगी, यह बात उनके हृदयको मथती है। पर उन्होंने गम्भीरतापूर्वक अन्त तक सब सहन कर लिया और कभी अपने दुःखको व्यक्त भी नहीं होने दिया।'

'मैंने नोविसियेटके दो वर्ष पूरे किये और बादमें दर्शनके अध्ययनके लिए तीन वर्ष जर्मनीमें (आँखनके पास) रहा। इस बीच घर आनेकी सुविधा रही और घरवालोंको विशेष खला नहीं। नोविसियेट पूरा होनेके समय एक बार फिर मेरे सामने प्रश्न आया कि मैं अपने निश्चयको अभी भी दोहरा सकता हूँ और चाहूँ तो अपने देशमें रह सकता हूँ। मैं अपने भारत जानेके निश्चयपर दृढ़ रहा, वह तो संघमें प्रवेश होनेकी मेरी शर्त ही थी। इस बार माता-पिताने भी अन्तिम रूपसे समझ लिया कि मुझे जाना ही है। पर जब तक मैं जर्मनीमें तीन वर्ष दर्शनका अध्ययन कर रहा था, उन्हें सन्तोष था। फिर एक वर्ष लुवेनमें एन्सटाइनके साक्षेपवादका उच्चतम कक्षाके विद्यार्थियोंके साथ, अध्ययन करता हूँ। वहाँका अध्ययन समाप्त कर मैं घर आया तो सबको पता था कि इस बार मैं अन्तिम रूपसे देशसे ज़ा रहा हूँ। सबके मन भारी और उदास थे, पर मेरी यात्राके शुभके लिए तथा मेरे कार्यकी पवित्रताके कारण सभी अपने मनके भावको सँभाले हुए थे। मुझे सबसे अधिक आश्चर्य माँके व्यवहारको देखकर हो रहा था। वह प्रसन्नचित्त सब काम-काज़ करतीं, मेरी भी तैयारी करतीं थीं। वे अपनी उदासीसे मेरे मनको खिन्न नहीं करना चाहतीं, वे दृढ़तापूर्वक परिस्थितिको सह रही थीं। इन दिनों मेरे परिवारके सभी सदस्य आ गये थे, चाचा, चाची तथा उनकी लड़की (बहन) आदि। काफ़ी चहल-पहल थी और उसके बीच माँ अपनेको छिपाये रहती हैं।'

'मेरी विदाईका अन्तिम दिन आ गया है। मैंने अपने क़स्बेसे ब्रूजस तक साथ चलनेके लिए भी सभीको मना कर दिया है। केवल मेरी चचा-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाद बहेन मेरे साथ वहाँ तक जायँगी। घरसे विदा होनेके समयका दृश्य बहुत करुण है। सब अपने मनको नियन्त्रित कर रहे हैं, पर भावोंको व्यक्त होनेसे रोक पाना सहज नहीं है। मेरी माँ अत्यधिक कठोरतापूर्वक अपनेको रोक रही हैं। मुझे स्वयं आश्चर्य है कि माँ अपनेको इस प्रकार कैसे नियन्त्रित रख पा रहीं हैं। मैं समझ रहा हूँ कि उनके लिए यह असह्य अवसर है। पर माँ अपनी सन्तानके शुभ और कल्याणके लिए सब कुछ कर सकती है। बादमें बहेन (सगी) के पत्रसे ज्ञात हुआ था कि माँके लिए यह सहना बहुत अधिक हुआ और मेरे चल पड़नेके बाद वे मूर्च्छित हो गई थीं। जहाँ तक मेरा सवाल है मेरे मनका संकल्प मुझे अडिग बनाये हुए था। ऐसा नहीं कि मनके अन्दर कहीं कुछ घटित न हो रहा हो। पर मैं सब सहकर प्रसन्नतापूर्वक सबसे विदा ले रहा हूँ। घरके द्वारपर माँ खड़ी हैं और मैं उनके हाथ चूमकर विदा लेता हूँ, मुझे एक क्षणके लिए लगता है कि मन उमड़ रहा है, पर माँ शान्त हैं और प्रसन्नतापूर्वक मेरे शुभके लिए प्रार्थना करती हैं। पिताजी अपने-आपको छिपाकर गम्भीरताके साथ इस स्थितिको सहन कर रहे हैं। वे मौन रहकर सहन कर लेते हैं।'

'ब्रूसेलसे मुझे पैरिसके लिए ट्रेन पकड़नी है। यहाँ तक इष्ट-मित्रोंके साथ बात-चीतमें लगे रहनेके कारण देश छोड़नेका मुझे विशेष भान नहीं हुआ। ब्रूसेलसे जब ट्रेन चली तो मैं अकेला रह गया हूँ। यहाँसे ट्रेनके आगे बढ़ते ही मुझे वास्तवमें अनुभव हुआ कि मैं अपने देशको, अपने स्वजनोंको शायद सदाके लिए छोड़ रहा हूँ। मैं देख रहा हूँ भागती हुई ट्रेन देशकी हरी-भरी नाचती हुई भूमिको पीछे छोड़ती जा रही है। हमारे देशके सुन्दर क़स्बे पीछे छूट रहे हैं। और यह सब छूट रहा है कभी न मिलनेके लिए। मेरा मन भर आता है, मेरी आखें भर आती हैं। मेरे कम्पार्टमेण्टमें एक वृद्ध महिला यात्रा कर रही हैं। वे ब्रूसेलसे ही मुझे देख रही हैं, सम्भवतः मेरे विषयमें वे जान भी गई हैं। मुझको देखकर उनकी आँखोंमें आँसू आ गये हैं, उनका माँ हृदय इस प्रकार द्रवित हो गया है। वृद्ध महिलाके आँसू

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखकर मुझे माँकी याद आ जाती है, विशेषकर उनकी वेदनाका ध्यान आता है। और मुझे अपने उमड़ते हुए आँसुओंको रूमालमें सँभालना पड़ता है।'

अपने कामिल दादाकी यह कथा मुझे अभिभूत कर लेती है। हमलोग सड़कपर होकर तालाबके पास आश्रमकी वाउण्डरी पारकर न जाने कबसे बाँधके पुलपर बैठे हुए हैं। तालाबका पानी चाँदनीमें चमक रहा है। आज न जाने क्यों यहाँके दादुर मौन हैं। परन्तु वातावरणमें किटी-किटी टी-टी चिरिप-चिरिप आदि न जाने कितनी ध्वनियाँ मिली हुई हैं और इनके बीचमें कभी-कभी कोई जलपक्षी भी बोल उठता है। एक क्षणके लिए कभी सारी ध्वनियाँ रुक जाती हैं, जैसे वातावरणने सबको पी लिया हो। और यह ऐसा शून्य लगता है, मन प्राणोंको भी पी जायेगा। हमारे दाहिनी ओर वृक्षोंकी सघन काली छायामें सब कुछ मिट गया है। सामने चट्टानशिखर अपनी काली छायामें खड़ा है, मौन और उदास। बाईं ओर चढ़ते हुए पठारी विस्तारके सिरेपर हस्तिपीठ पहाड़ी काली आकृतिमें व्यक्त है। मैं इस नीरवताके बीच बुल्के भाईके समीप बैठा सोच रहा हूँ—'यही हैं जिन्होंने असंग भावसे सब कुछ अपना छोड़ दिया है और जिनमें इतनी ममता है, स्नेह है।'

बुल्केजी कह रहे हैं—'रघुवंश, तुम यह क्यों सोचते हो कि मैंने सब कुछ छोड़ दिया है। सचमुच तो मैंने अपनत्वकी परिधि विस्तृत कर ली है। मैंने इतना बड़ा देश पाया है, इतने स्नेही आत्मीय पाये हैं। और यह ऐसा भी नहीं है कि मेरे संघमें अपने देश जानेकी कोई मनाही हो या अपने परिवारके लोगोंसे मिलने-जुलनेमें कोई बन्धन हो। यह तो मैं अपनी ओरसे नहीं चाहता कि मेरे कारण संघका बहुत-सा पैसा खर्च हो। जब तक कोई विशेष कारण नहीं होगा मैं यूरोप नहीं जाऊँगा। पर हो सकता है रोमकी ओरसे ही कभी बुलावा हो, तब मैं यूरोप जाकर अपने देश भी जा सकूँगा और माँ तथा पिताके दर्शन भी कर सकूँगा। वैसे इस कल्पनाको मैं पालता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं, संन्यासीको मोह नहीं करना चाहिए। फिर पता नहीं यूरोप जाकर भी कभी मैं माँके दर्शन कर सकूँगा, क्योंकि बहेनके पत्रमें उनकी बीमारीका समाचार मिलता रहता है। और यदि कभी मैं माँके न रहनेपर यूरोप जा सका तो मुझे वहाँ जाकर आन्तरिक कष्ट ही होगा।' आज सवा नौ बज चुका है और कमरेमें पहुँचनेपर बिजली नहीं मिल सकेगी, हमको टार्चकी रोशनीमें काम करना होगा। हम जल्दी-जल्दी बाँधको पारकर वृक्षोंकी घनी छायाकी ओर बढ़ रहे हैं।

बुल्केजी मेरा बिस्तरा ठीक कर मुझसे रातभरके लिए विदा लेकर अभी गये हैं। कमरेमें अँधेरा है, बाहर पेड़ोंकी छायामें चाँदनी झाँक रही है। मुझे नींद नहीं आ रही है। खिड़कीके सामने कुरसी डालकर मैं बैठा हूँ और बाहरकी छाया प्रकाशकी आकृतियोंको नीरव भावसे देख रहा हूँ। मेरे मनमें बेल्जियमके वेस्ट फ़ैलण्डरसका एक गाँव है। यहाँ एक माँ रहती है जिसने आजसे पन्द्रह वर्ष पूर्व अपने प्रिय पुत्रको चार-पाँच हज़ार मील दूरके एक अपरिचित देशके लिए विदा दी थी। विदाका अवसर इतना पवित्र था कि माँ अपने हृदयकी व्यथाको व्यक्त भी नहीं कर पाती है, क्योंकि उसका पुत्र प्रभु ईसाके पवित्र जीवनमें भाग लेने जा रहा है। पर मैं देख रहा हूँ, अनुभव कर रहा हूँ कि माँके हृदयमें उस दिनकी वेदना आज भी व्याप्त है। इन पन्द्रह वर्षोंमें उसने निरन्तर अपने इस पुत्रकी मौन भावसे प्रतीक्षा की है और अपनी अन्तिम साँसों तक वह प्रतीक्षा करती रहेगी। वह चुपचाप उस अलमारी तक जाती है जहाँ उसने अपने पुत्रके आज तकके समस्त पत्र, चित्र, उसकी सारी कृतियोंको सजा-सँवारकर रखा है। अलमारी खोलकर वह सबपर अपनी कोमल दृष्टि डालती है और फिर अपने पुत्रकी उन कृतियोंपर धीरे-धीरे अपना हाथ फेरती है, जिन्हें वह कभी पढ़ नहीं सकी। इस स्पर्शमें माँकी ममता है। और फिर वह बहुत धीमे स्वरमें कहती है—'मैं समझती थी वह जायगा।'

चाँद आकाशमें चढ़ता जा रहा है, बाहरके छाया-प्रकाशसे यह अनु-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मान लगाया जा सकता है। रात बढ़ती जा रही है। इस सूने प्रदेशमें आकाशको छोड़कर समयकी गतिका अन्दाज लगानेका कोई उपाय नहीं है और मेरे सामने पेड़ोंके बीचसे केवल आकाशका एक छोटा-सा टुकड़ा झाँक रहा है जिसके चाँदनीमें धूमिल हो गये तारोंसे क्या कहा जा सकता है? मुझे नींद नहीं आ रही है। अब प्रार्थना समाप्त करके बुल्के भाई सो चुके होंगे। मेरा मन वेस्ट फ़ैलण्डरससे वापस आना ही नहीं चाहता। मेरे मनमें बुल्केजीका परिवार है, जैसे मैं उन्हींके बीचमें हूँ। मुझे उनके पिताकी याद आ रही है। उन्होंने क्या अनुभव किया होगा? उनका एक पुत्र सात समुन्दर पार यहाँ आ गया है। और दूसरा छोटा लड़का वहीं संन्यासी है। कहते हैं धर्मप्राण बेल्जियम देशमें ऐसा अनेक परिवारोंमें है। शायद पिताको इस बातका गर्व हो। उस भाईकी कल्पना करना चाहता हूँ जो अपनी पत्नी और बच्चोंके साथ है, पर जिसने इतने दिनोंसे अपने स्नेही बन्धुको नहीं देखा है। बच्चोंने केवल फ़ोटोसे अपने ताऊको पहिचाना है, फिर भी उनके पत्र आते हैं। और वह बहेन जिसने अपने विचित्र स्वाभिमानी स्वभावके कारण न तो किसीको विवाहके लिए वरा और न किसी धर्म-संघमें ही प्रवेश किया। उनके जीवनका उद्देश्य जैसे माता-पिताकी सेवा हो गया हो। उन्हींके पत्रोंसे बुल्केजीको घरके अधिकांश समाचार मिलते हैं, वैसे माँ भी पत्र लिखती हैं। और सब तो लिखते ही हैं। बुल्के भाई माँके पत्रोंके उत्तर देनेमें सबसे अधिक सतर्कता बरतते हैं। उनकी चाचाकी लड़कीकी याद आती है, हम उम्र होनेके कारण जिनसे अधिक सौहार्द्र रहा है। वे अपने परिवारके साथ सुखी हैं और उनके पत्र भी आते रहते हैं।

इन सबके बीच मुझे माँकी याद ही अधिक घेर रही है। सबके पास अपने-अपने काम हैं, कर्तव्य हैं, अपनी व्यस्तता है, लेकिन माँ अपने जीवन-के इस शून्यको किस प्रकार भरनेमें समर्थ होती होंगी। शायद धार्मिक विश्वास तथा आस्थाके सहारे। लेकिन मेरे मनमें विद्रोहके भाव उठते हैं। क्या धार्मिक जीवनका यह बन्धन, यह संन्यास मानवीय स्नेह और ममतासे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहीं ऊँचा माना जा सकता है ? क्या किसी काल्पनिक बड़ी चीज़को पानेके लिए आवश्यक है कि यथार्थ जीवनकी छोटी-छोटी चीज़ोंको छोड़ा ही जाय ? क्या इन छोटी समझी जानेवाली वस्तुओं और भावनाओंने ही मनुष्यको मनुष्यका संस्कार नहीं दिया है ? कहा जा सकता है कि सबको प्यार करनेके लिए अपनेकी सीमासे उठना ही होगा। बड़े कर्तव्यके निर्वाहके लिए छोटे-छोटे कर्तव्योंसे ऊपर उठना ही होगा। पर क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि मनुष्य अपने सहज परिवेशको ही इतना विस्तार दे दे कि उसकी छोटी सीमाएँ भी विस्तृत हो जाँय ? क्या यह ऐसा नहीं हो सकता कि मनुष्य अपने छोटे-छोटे कर्तव्यमें ही जीकर बड़े-से-बड़े कर्तव्यको सिद्ध कर ले ? क्या ऊँची-ऊँची बातोंके लिए ऊँची-ऊँची इमारतें, मन्दिर, मस्जिद अथवा चर्च बनाने ही होंगे ? संघ और मठोंकी आवश्यकता होगी ही ? मनुष्यके लिए मनुष्यत्वकी उपलब्धिका कोई सहज उपाय नहीं हो सकता ?

जब मैं इस प्रकारके तर्क-वितर्कमें व्यस्त हूँ, मेरे सामने कामिल दादा-का व्यक्तित्व आ जाता है। वह स्नेह और ममताके साथ कह रहे हैं—'रघुवंश, यह ऐसा नहीं है कि मैंने संन्यास लेकर प्यार करना छोड़ दिया हो। हमारे प्रभु तो प्रेमका सन्देश लेकर अवतरित हुए हैं। केवल प्रेमको व्यापक आधार देनेके लिए सांसारिक सम्बन्धोंके मोहको छोड़ना होता है।' उनकी स्नेहमयी मुसकानके सम्मुख निरुत्तर हूँ; पर क्या मेरे मनका विद्रोह शान्त हो सका ?

आज जब हम रात्रिका भोजन करके उठे तो देखते हैं कि आकाशमें हल्के-हल्के बादल इधर-उधर बिखरे हुए हैं। हम कॉलेजके बरामदेको पारकर नोविसियेटकी ओरसे नीचे उतरकर टहलने जा रहे हैं। एकाएक बुल्के भाई बच्चोंकी तरह चिल्ला उठते हैं—'रघुवंश, देखो यह क्या है ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सामने आकाशमें उनके इंगितके सहारे देखता हूँ तो पूरे आकाशमें अर्द्धवर्त्ताकार इन्द्रधनुष फैला है। हम दोनों आश्चर्यसे चकित हैं कि रातमें इन्द्रधनुष ! पूर्णिमाका चाँद आकाशमें ऊपर चढ़ चुका है। सूर्यके प्रकाशमें इन्द्र-धनुष सबने देखा है, पर यह चाँदके प्रकाशका इन्द्रधनुष अद्भुत है ! अपने सभी स्पष्ट रंगोंमें पूरा इन्द्रधनुष निखरा हुआ है और हम चकित खड़े हैं। हम कहते हैं कि क्या किसीने प्रकृतिका यह सौन्दर्य देखा है ? इन्द्रधनुष वैसे ही कोमल सुन्दर माना जाता है, पर जब किसी कविको यह ज्ञात होगा कि यह चाँदनी रातमें बादलोंकी छायामें भी देखा जाता है, तब उसकी कल्पना कैसी उड़ान भरेगी ? हम दोनोंने निश्चय किया कि अपने सभी परिचितोंसे पूछेंगे कि क्या किसीने ऐसा इन्द्रधनुष देखा है ? मनमें बच्चों जैसा भाव है कि शायद ही किसीने देखा होगा। (पर बादमें ज्ञात हुआ कि यह ऐसा अक्सर होता है)।

इस इन्द्रधनुषकी चर्चाके उत्साहमें हम दूर तक चले जाते हैं। अब हम नालेके पुलके समीप पहुँच गये हैं। हमारी बातचीत धार्मिक विश्वासोंकी ओर मुड़ गई है। साधारणतः हम धर्मकी चर्चा केवल सन्दर्भोंमें ही करते हैं, धर्मविशिष्टकी चर्चा नहीं करते। दो भिन्न धर्मावलम्बियोंके लिए यह नीतिकी बात है और शालीनताकी भी। पता नहीं कब जाने या अनजाने ही दूसरेके विश्वासपर आघात पहुँच जाय। हमारे सम्बन्धमें यह बात इस रूपमें नहीं है। मैं समझता हूँ कि शायद हम एक दूसरेकी स्थितिको समझते हैं और पूरी सहानुभूति रखते हैं, अतः इस प्रकारकी चर्चाकी गुंजाइश नहीं रह जाती। बुल्केजी भारतके पूर्वजन्म तथा पुनर्जन्मके विश्वासपर विचार कर रहे हैं। उनको आश्चर्य है कि इतना बड़ा जनसमाज इस बातपर सहज भावसे विश्वास करता आ रहा है। मैं कहता हूँ यह हमारे लिए बहुत आसान है। जिस प्रकार हवा-पानीपर विश्वास करनेकी आवश्यकता नहीं होती, हम इस बातपर इसी प्रकार विश्वास करते आये हैं। वैसे ही समझें जैसे यूरोपमें कब्रमें आत्माओंके सोनेकी बातपर विश्वास किया जाता रहा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। भारतमें इस बातके अनेक उदाहरण भी बताये जाते हैं कि अमुक बच्चेको अपने पूर्वजन्मका स्मरण है। उन्होंने आश्चर्यसे पूछा कि क्या मैं इस बातपर विश्वास करता हूँ। ऐसी बातोंकी वैज्ञानिक खोज ही कहाँ होती है। मैं कहता हूँ—'आपका कहना ठीक है। पर वास्तवमें जब मैं पूर्व-जन्मकी बातपर विश्वास करता हूँ, तो मेरे लिए इन उदाहरणोंके विषयमें विशेष कौतूहल होता भी नहीं।' मुझे लगता है मेरे विश्वासकी स्थितिसे बुल्के भाई सन्तुष्ट नहीं हैं, पर वह कहते कुछ नहीं।

इसी प्रकार हम आगे बढ़ते जा रहे हैं और फिर नगरकी सड़कपर आकर पिंजरापोलकी ओर मुड़ भी जाते हैं। रास्तेमें झींगुरों और क्रिकेटकी ध्वनियोंके अतिरिक्त नीरवता व्याप्त है। बीच-बीचमें ये ध्वनियाँ भी कुछ क्षणके लिए रुक जाती हैं। और तभी हमारा ध्यान भंग हो जाता है। फिर किटी-किटी टिरीटिरी चिरिप-चिरिप शुरू हो जाती है और हम अपनी बात-चीतमें व्यस्त हो जाते हैं। इधर मैंने कई ईसाई सन्तोंकी जीवनियाँ पढ़ी हैं। उनकी चर्चा करते हुए बुल्केजीने पूछा—'तुमको कैसी लग रही हैं।' मैं कहता हूँ—'उनके जीवनके साधना पक्षसे मैं अविभूत हो जाता हूँ। उनका उत्कट प्रेम सचमुच मनको प्रभावित करता है। पर एक बात और है जिसकी ओर मेरा ध्यान इन जीवनियोंके पढ़नेके बाद जाने लगा है। मुझे लगने लगता है कि अनेक बातें हैं जो बुद्धिवादसे सिद्ध न होनेपर भी ठीक हो सकती हैं। श्रद्धा और विश्वासकी भी अपनी शक्ति होती है। अब तक मैं अपने भारतीय सन्तोंके जीवनसे सम्बन्धित अनेक आश्चर्यजनक बातें केवल अन्धविश्वास मानता रहा हूँ, पर यूरोपके सन्तोंकी इन जीवनियों-को पढ़नेपर लगता है कि विश्वासका एक स्तर ऐसा भी हो सकता है जहाँ ऐसी बातें भी सम्भव मानी जा सकती हैं।' बुल्केजी मेरी बात सुनकर आश्चर्यसे कहते हैं, उनकी वाणीमें मेरी समझके प्रति सन्देह व्यञ्जित है—'क्या यहाँके सन्तोंके जीवनके सम्बन्धमें जो जनश्रुतियाँ हैं, उनपर भी विश्वास किया जा सकता है? तुम्हारे कहनेसे लगता है तुम उनपर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विश्वास करते हो। जहाँ तक हमारे सन्तोंका प्रश्न है, उनके विषयमें पूरी खोजबीन करके निश्चय किया जाता है। रोममें एक कार्डिनल रहता है जो इस प्रकारकी खोजके लिए पूरा आफ़िस चलाता है। वर्षोंकी वैज्ञानिक खोजके बाद तथा साक्षियोंको जुटानेके बाद सन्त होनेकी घोषणा की जाती है।' मैं अनमने भावसे उत्तर देता हूँ—'पर यहाँ यदि इस प्रकारकी खोज नहीं की जाती, तो इससे यह भी नहीं सिद्ध होता कि इन सन्तोंका अलौकिक चरित्र मात्र अन्धविश्वास है। फिर जब इनके जीवनकी पद्धति और विश्वासका स्तर ईसाई सन्तोंकी कोटिका है, तब दोनोंके चरित्र-की अलौकिकता एक साथ सिद्ध क्यों न मान ली जाय।'

हम तालाबके बाँधकी पुलियापर बैठे हैं और हमारी विश्वास सम्बन्धी चर्चाने अन्य मोड़ ले लिया है। हम चाँदनीमें स्नान करते हुए एक दृष्टिसे प्रकाशमें चमकते हुए तालाबके जलको देख लेते हैं और फिर सामने चाँदनी-में उद्भासित चट्टानशिखरको देखने लगते हैं। यह साराका सारा वातावरण रहस्यमय लगता है और हम दोनों भी इस रहस्यके अंग हों जैसे। पानी-में तैरते हुए सफ़ेद जलपक्षी अपनी केंकाकेंकासे हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं, मानो जलपरियाँ विहार कर रही हों। फिर मेरी कल्पनामें उड़ती हुई ये जलपरियाँ पहाड़ी चोटियोंपर पहुँच जाती हैं और वहाँ नृत्य करती हुई आमन्त्रित करती हैं। मेरा मन इस वातावरणमें इस प्रकार बहा जा रहा है कि किसी तर्कको अथवा विचारके सूत्रको सँभाल नहीं पा रहा है।

बुल्केजी आन्तरिक विश्वासके साथ कह रहे हैं—'रघुवंश, हम ऐसा नहीं मान सकते कि यह भी सत्य है और वह भी सत्य है। यह तो ऐसा ही हुआ जैसे कहा जाय सत्य भी सत्य और असत्य भी। सत्य एक ही होगा, यदि एक बात सत्य है तो उसके विपरीत बात असत्य ही होगी। तुम्हारा यह मानना कि यह सत्य हो सकता है और यह भी सत्य हो सकता है, सन्देहकी स्थिति मात्र है। पर जब तक तुम धर्मको और ईश्वरको मानते हो····।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लगता है चौंक पड़ा हूँ। नहीं, नहीं बुल्के भाई, यह ऐसा नहीं है। आप मुझको समझ नहीं पा रहे हैं। मैं मात्र सन्देहमें नहीं जी रहा हूँ। यदि कहीं सन्देह है तो वह भी मेरा विश्वास ही है। मैं एक रेखामें, एक पद्धतिसे, एक परम्परामें चलनेपर ही विश्वास नहीं करता। मेरे लिए न मनुष्य इतना सीमित है और न असीम ही। न ऐसा है कि मनुष्य सत्यका पूर्ण साक्षात्कार कर सकता है और न ऐसा ही कि वह सत्यके किसी अंशको ग्रहण ही नहीं कर सकेगा। इसीलिए मेरे लिए यह कठिन नहीं है कि मानूँ कि मेरा विश्वास सत्यपर है और फिर यह भी मान सकूँ कि दूसरेका विश्वास भी, जो मेरे विपरीत-सा लगता है, सत्यपर आधारित है। मेरे लिए इस स्थितिमें कहीं कोई विरोध नहीं है। दूसरेकी बात यदि न भी समझ सकूँगा, तो केवल इसीलिए उसे ग़लत नहीं मानता। उसके मानव-विवेक-पर, उसकी आस्थापर विश्वास करता हूँ। इसलिए जब कहता हूँ—मैं ठीक हूँ और वह भी ठीक है, तो मेरा भाव रहता है कि मैं अपने विवेककी दृष्टिसे सत्यके पक्षमें हूँ और दूसरा व्यक्ति अपने विवेककी दृष्टिसे सत्यके पक्षमें है।

अपने कमरेमें हूँ, अभी बिजली चली गयी है। आराम-कुरसी-पर लेटा हुआ हूँ और हाथमें गीता ले रखी है। अभी एक पृष्ठ खोला था और अब सोच रहा हूँ। बुल्के भाई अपनी अत्यधिक सहानु-भूतिके बावजूद मुझे समझ नहीं पाते, मेरी बात उनको भ्रामक ही लगती है। यद्यपि उन्होंने स्नेह तथा शालीनतावश कुछ कहा नहीं है। पर उनकी अभिव्यक्तिसे यह स्पष्ट है। तभीसे उद्विग्न हूँ, यह कैसी बात है बुल्केजी जैसा व्यक्ति भी उदारता और मानव सहानुभूतिके उस स्तर तक नहीं पहुँच पाता जहाँ अपनी दृष्टिके साथ दूसरेकी दृष्टिको भी स्वीकार किया जा सके। बहुत देर तक मैं ख़ाली-ख़ाली मन बाहरके पेड़ोंकी छायाओंमें घूमता रहता हूँ। मेरे मनमें उभरता है कि मनुष्यकी सबसे बड़ी ट्रेजेडी यही है कि क्या धर्ममें, क्या राजनीतिमें, क्या समाजमें और क्या दर्शनमें,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह एक ही सत्य अर्थात् सत्यको एक ही दृष्टिसे देखनेका अभ्यासी है। वह इस सहज बातको ग्रहण कर नहीं पाता कि प्रभुने किसी एक मनुष्यमें अवतार ग्रहण नहीं किया है, प्रभु-पुत्र कोई एक व्यक्ति नहीं है, वरन् सम्पूर्ण मानवता उसका अवतार है, सभी मनुष्य उसके पुत्रके रूपमें जन्मे हैं। पर संस्कार कौन छोड़ पाता है, क्या संन्यासी ! क्या गृहस्थ !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आत्मसाक्षात् और आत्ममन्थन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: ११ :

आज ७ जुलाईके रात्रि-भोजनके समय हम दोनोंने कलसे तीन दिनके लिए शुरू होनेवाले मौनव्रतके बारेमें सारी बातें निश्चित कर लीं हैं। आनेके बाद ही मनमें तै कर लिया था कि इस वर्ष कुछ दिनका मौनव्रत यहाँ करूँगा। मानसिक अन्तर्द्वन्द्वकी कई स्थितियोंमें मैंने पहले भी इस प्रकारके मौनव्रत किये हैं। पहले इसके लिए किसीसे कोई-निर्देशन नहीं लिया, सदा कुछ दिनों मौन रहकर अपने ढंगसे चिन्तन-मनन-की योजना बना ली है। इस प्रकारके मौन आत्म-चिन्तन-से कभी कोई पथ खोज पाया हो, इतना ही हुआ है कि आत्म-मन्थनकी उत्तेजनाओंमें मन स्थिर होकर शान्ति पा सका है। इधर मनका संघर्ष कई स्तरोंपर एक साथ चलता रहा है, ऐसा द्वन्द्व और मन्थन इससे पहले मैंने कभी नहीं झेला। वर्ष डेढ़ वर्षसे मेरे अन्दर जो चल रहा है, उसे मात्र दो विचारों या सिद्धान्तोंके संघर्षके रूपमें नहीं समझा जा सकता। वह जैसे मेरे ही पिछले व्यक्तित्वसे मेरे अन्दर उगते हुए किसी भिन्न व्यक्तित्वका संघर्ष है, जो ऐसी संक्रान्ति है जिसमें कुछ टूटेगा, नष्ट होगा और कुछ पनपेगा, उगेगा। इस बीच ऐसे आँधी-तूफ़ानका अपने अन्दर अनुभव करता रहा हूँ, जो पुराने जर्जरको उजाड़ने-उखाड़नेके लिए कृतसंकल्प होता है।

बुल्केजीसे अपने मनके इस भावको व्यक्त किया था, और उन्होंने सहमति दी थी कि यहाँके निवासके अन्तमें तीन दिनका मौनव्रत कर सकता हूँ। यह भी उन्होंने स्वीकार किया था कि इस प्रकार आत्मचिन्तन करनेसे मुझे लाभ ही होगा। इस बार इस विषयमें उनका निर्देशन भी मिल रहा है, उन्होंने व्रतके दिनोंका कार्यक्रम बनाया, स्वाध्यायके लिए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुस्तकोंके चयनमें सहायता दी और अपने धार्मिक मौतव्रतकी पद्धतिके बारेमें भी बताया। वह मेरे मौनव्रतको लेकर उल्लसित हैं, इसलिए कि उनकी आन्तरिक इच्छा है कि मैं यहाँसे अधिक प्रसन्न, अधिक स्वस्थ तथा अधिक प्रकृतिस्थ वापस लौटूँ। उनको इस बातका एहसास है कि मैं इस सबको शुद्ध धार्मिक भावसे नहीं ले रहा हूँ, पर वह यह मानते हैं कि किसी भावसे आत्मचिन्तन तथा मौन मेरे लिए हितकर होगा। अन्ततः अगले तीन दिनोंका कार्यक्रम बना लिया है और व्रत सम्बन्धी चिन्तनकी पुस्तक (जिसे मैंने यहाँके पुस्तकालयसे प्राप्त किया है) के अतिरिक्त मनन तथा आत्म-चिन्तनके लिए चार पुस्तकें चुनी हैं—गीता, ईशोपनिषद् (गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित), सेवियर (बुल्केजी द्वारा बाइबिलसे संकलित ईसाका जीवन-चरित्र) और थामस कैम्पिसका इमीटेशन ऑफ़ क्राइस्ट।

कलसे भोजनकी मेज़पर बातचीत नहीं करूँगा, इस कारण बुल्केजी अधिक उत्साहसे बातचीत करते रहते हैं। मैं कहीं अन्दरसे तीन दिनके इस एकान्तसे जैसे आतंकित हूँ, फिर भी ऊपरसे उल्लसित हूँ। चाहता हूँ ख़ूब-ख़ूब बात कर लूँ, हँस लूँ। ऐसा लगता है जैसे सबसे विदा लेकर कहीं जा रहा हूँ। फ़ादर मिनिस्टर इस बीच आ जाते हैं और मेरे व्रतकी व्यवस्थाके बारेमें पूछते हैं, सारे घरकी व्यवस्थाका भार उनपर जो है। वह जानना चाहते हैं कि मुझे इस बीच किसी वस्तुकी आवश्यकता तो नहीं होगी। मौनव्रत उनकी पवित्र धारणाका अंग है और उसके बारेमें चिन्ता करना वह धार्मिक भावसे लेते हैं। वैसे वह अतिथिके रूपमें मेरी कम चिन्ता नहीं करते। बुल्केजीने उनको समझा दिया कि हम लोगोंका कार्यक्रम यथावत् ही चलेगा। इसके बाद वह कुछ देर हँसी-मज़ाककी बातें करते रहते हैं और अन्तमें भोजन समाप्त होनेके बाद यह कहकर कि किसी दिन मुझे उनकी मौनों (मधुमक्खियों) से मुलाक़ात करना है, उन्होंने विदा ली और हम अपने रात्रिभ्रमणके लिए चल पड़ते हैं।

आज आकाश खुला है और अभी चन्द्रमाके उदय होनेमें कुछ देर है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फिर भी तारोंका प्रकाश सारे वनप्रान्तरको स्पष्ट व्यक्त कर रहा है। हम दोनों अपने परिचित नित्यके मार्गपर आगे बढ़ते जा रहे हैं और अपनी बातोंमें व्यस्त हैं। अब हम यहाँके रास्तों, वृक्षों, तालाबों, नालों और दूरके पहाड़ी शिखरोंसे ख़ूब परिचित हो चुके हैं। इनके बीच घूमते हमारा ध्यान इनकी ओर जाता भी नहीं और हम इनकी निकटता तथा आत्मीयताका अनुभव करते रहते हैं। वृक्षोंपर जुगुनुओंका नृत्य देखकर हम नहीं देखते, पानीकी कलकल छलछल घलघल ध्वनियोंको सुनकर नहीं सुनते, झिल्ली तथा क्रिकेटकी किटीकिटी टिरीटिरी चिरपचिरपका निरन्तर चलनेवाला गान ध्यान आकर्षित किये बिना वातावरणमें व्याप रहा है। और हम दोनों बन्धु अपने-आपमें आत्मविस्मृत सड़कपर नीचे उतरते चले जा रहे हैं।

कलसे शुरू होनेवाले मौनव्रतके बारेमें हम सारी व्यवस्था करके निश्चिन्त हो चुके हैं। अब हमारी बातचीत अतीतकी न जाने कैसी और कितनी गलियोंको पार कर मेरे व्यक्तिगत जीवनपर आ गयी है। बुल्केजी मेरे बहुत निकट आकर मेरे आत्मीय जन हो चुके हैं। वैसे भी मुझे कभी नहीं लगा कि जीवनमें कुछ गोपनीय होता है जिसे अपने तक ही रखना चाहिए। पर अपने-आपको प्रकट करनेके लिए मेरे अपनेमें रुचि लेनेवाला स्नेहीजन तो चाहिए। कोई मुझमें क्यों रुचि लेगा, मैं किसीपर अपने-आपको क्यों लादूँ, दूसरेके लिए मैं महत्त्वपूर्ण नहीं हूँ और मेरा जीवन, मेरा संघर्ष जो अर्थ मेरे लिए रखता है, वह दूसरेके लिए नहीं रख सकता। इस आत्मचेतनाने स्वाभिमानके रूपमें दूसरोंके सामने अपनेको खोलनेमें मुझे संकुचित किया है। मैं कहीं मानता हूँ—मेरी समस्या अपनी है, वह मेरा निजी संघर्ष है, उसे झेलना मेरा काम है। किसीके सामने इसे रखनेसे अपनेको छोटा बनाना जैसा लगता है। पर जब कभी किसीने आत्मीयताके स्तरपर उसे जाननेका प्रयास किया है, तो मैंने मुक्त होकर निर्बाध रूपसे अपनेको खोलकर रख दिया है। ऐसा भी है कि मैं अपने-आपमें बहुत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सचेष्ट रहा हूँ, अपने बारेमें सदा सोचता आया हूँ, इस कारण जब बात उठती है तो अपना ही गहरा और विस्तृत आख्यान करने लगता हूँ। ऐसी स्थितिमें अनेक बार मेरा विस्तार दूसरे आत्मीय-जनके लिए भी रोचक रह पाता है, इसमें मुझे सन्देह है। बातके बीचमें मुझे इसका भी एहसास हो जाता है और श्रोतासे पूछ भी लेता हूँ कि मैं बोर तो नहीं कर रहा हूँ। यह जानते हुए भी कि इस स्थितिमें शायद ही कोई यह स्वीकार करेगा, मैं इससे अधिक चिन्ता नहीं कर पाता। और एक बार बाँध टूट जानेपर रुकना कठिन हो जाता है। फिर विवश जैसी स्थितिमें अपने-आपको अपने जीवनके बारेमें संसक्त पाता हूँ। जब ज्वार समाप्त हो चुकता है, तभी सोच पाता हूँ कि दूसरे व्यक्तिका बहुत समय और ध्यान लिया है। इसके बारेमें बादमें अपने कई मित्रोंसे सीधा प्रश्न किया है, पर उनका कहना है कि तुम्हारी यह संसक्ति दूसरेके लिए रस हो जाती है, इस कारण बोर होनेका शायद सवाल नहीं उठता।

जन्मसे मेरे हाथ ठीक नहीं हैं, हाथोंसे मैं पंगु हूँ। मेरी इस असाधारण स्थितिके प्रति लोगोंका आकर्षित हो उठना सहज है, आज यह समझ सका हूँ। पर इस प्रकार उनकी उत्सुकता, उनका घूरने लगना, आपसकी कानाफूसी और मुझसे पूछना—"का लकवा मारिगा है ? जनमेंसे तोहार हाथ अस है? का ई गहन क मारा है ? का तोहार हाथ पेटन सन अस है इया बादि माँ मारि गवा है ?" मुझे असह्य स्थितिमें डाल देता है। अब इन स्थितियों-को ऊपरसे सह लेता हूँ, पर यह दूसरोंकी दया आज भी अन्दरसे कहीं चोट पहुँचाती है। यही कारण है कि शालीनता, भद्रता, सौजन्य अथवा स्नेह-के नाते अनेक लोग अपनी उत्सुकताको दाब जाते हैं और असुविधाकी स्थितिसे मेरी रक्षा कर लेते हैं। इसका भी जब आभास मिल जाता है, तब अन्दर हल्की-सी चोट लगती है। पर बुल्केजी प्रारम्भसे उन लोगोंमें रहे हैं जिन्होंने मेरी सारी असाधारणताको सहज ही स्वीकार कर लिया है—जैसा है सहज है, प्रत्यक्ष है—इस भावसे। उन लोगोंकी जिज्ञासाका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्तर भिन्न रहा है। उन्होंने जब कभी प्रश्न उठाया है, तो मेरी समस्याका, और वह भी आत्मीयताके सघन वातावरणमें।

बुल्के भाईने किसी ओरसे मेरे प्रारम्भिक जीवनका प्रसंग छेड़ दिया है। और अब मैं अपने उस अनुभव तथा संघर्षकी व्याख्या करनेमें व्यस्त होता जा रहा हूँ। प्रारम्भमें सतर्क हूँ कि सीमामें रहना है, उचित सूचनाओं तक अपनी बातको रखना है। पर बुल्केजी अपनी तन्मय उत्सुकतासे इस प्रकार प्रेरित करते हैं कि सब कुछ भूलकर अपनी बात कह रहा हूँ, कुछ ऐसे भावसे कि मैं अपने ही गत जीवनका तटस्थ वक्ता हूँ। मेरी संसक्ति अपनेपनकी न होकर कथाकारकी है, इसी कारण जो कहता हूँ वह मेरे लिए साफ़ और स्पष्ट है। मेरा बचपन, मेरा कैशोर्य, मेरा सारा अतीत मेरे लिए व्यतीत है। आज उनसे हज़ारों लाखों क्षण दूर हूँ, इसी कारण उनके प्रति असम्पृक्त और तटस्थ भी। पर उन्हींमें मेरे जीवनके वे अनेकानेक क्षण भी हैं जिनका मैंने सघनतासे अनुभव किया था और यदि कहीं मेरा जीवन पिछले जीवनसे सम्बद्ध है तो इन्हीं अतीतके अनुभूत क्षणोंके माध्यमसे। पर आज यह तटस्थता उन अनुभूत क्षणोंके प्रति सहज हो गयी है।

कह रहा हूँ, और घने नीले आकाशमें चमकते हुए संख्यातीत तारों-के धूमिल प्रकाशके नीचे बुल्केजी लगभग चुपचाप सुन रहे हैं।—बच्चा हूँ, केवल चार-पाँच वर्षका। अपनी विवशताका एहसास होता है, पर अपनी पंगुताका कोई ज्ञान नहीं है। ये माँ और जीजी इस प्रकार आच्छा-दित किये रहती हैं कि मुझे अपनी विवशताका अनुभव होने न पाये। वे ही क्यों परिवारके सभी लोग सतर्क और तत्पर रहते हैं कि मुझे इच्छा-नुसार सभी कुछ सुलभ होता रहे, मेरे सभी काम पूरे होते रहें, इसके पहले कि महसूस करूँ कि कहीं कुछ कर सकनेमें असमर्थ भी हूँ। उन सबके इन प्रयत्नोंसे समझता हूँ कि इन लोगोंके कारण ही मैं असहाय हो गया हूँ। खीझता हूँ, झुँझलाता हूँ, अपने भरसक विद्रोह भी करता हूँ। मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाहता हूँ, मुझे हर काम करनेकी वैसी ही स्वाधीनता दी जाय जैसे मेरे हर साथीको, हर बच्चेको प्राप्त है।*

माँसे उस राजकुमारकी कहानी सुनी है, खेलते समय जिसका गेंद विमाताको लग जाता है और फिर उसे देश निकाला दे दिया जाता है। माँने वह कहानी भी सुनायी है जिसमें राजाकी रानी लेटे-लेटे गौरैयाको गौरैयेके साथ घोसला बनाते देखती है, फिर गौरैया अण्डा देती है, फिर न जाने किस प्रकार वह नहीं रहती, फिर गौरैयेके साथ दूसरी गौरैया आती है। रानी रोज़ लेटे-लेटे देखती है, नयी गौरैया पहलीके अण्डे निकाल फेंकती है और रानीके आँसू उमड़ आते हैं। वह राजासे पूछती है कि मेरे न रहनेपर क्या तुम भी दूसरी रानी लाओगे और क्या वह इसी प्रकार मेरे राजकुमारको भी निकाल देगी।....इसी प्रकार माँसे एक और कहानी सुनता हूँ—ध्रुवकी। राजा उत्तानपादके दो रानियाँ हैं। विमाताने ध्रुवका अपमान किया है, पिताकी गोदमें चढ़नेका वह अधिकारी नहीं है। बालक ध्रुवको माँ समझाती है कि भगवान् प्रार्थना करनेपर सबकी सुनते हैं। फिर सबके आग्रहपूर्वक मना करनेपर भी ध्रुव जंगलमें जाकर तपस्यामें रत हो जाता है और अन्ततः भगवान् प्रकट होकर वरदान देते हैं। मेरी माँ उत्तरमें चमकनेवाले नक्षत्रको दिखाकर कहती यही ध्रुव है जिसे भगवान्ने अचल पद दिया है।

माँसे पूछता हूँ कि क्या माँ प्रार्थना करनेपर भगवान् सबके सामने प्रकट होते हैं और वरदान देते हैं? माँ बिना समझे शायद हाँ कर देती हैं। और मैं अपने-आपमें व्यस्त हो जाता हूँ। सोचता रहता हूँ कि ध्रुवके समान मैं भी जाऊँगा वन, मुझे भी भगवान्से मिलना है। अभी अपने हाथोंकी पंगुताका बोध नहीं है, अधिक प्रत्यक्ष है अपनी विवशता जिससे मैं मुक्त होना चाहता हूँ। और भगवान्से मुझे, कहना भी है

---

* इस सम्बन्धमें लेखकके कई संस्मरण प्रकाशित हुए हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यही। मैं तितली पकड़ना चाहता हूँ, अपने आप सबकी तरह खाना खाना चाहता हूँ, मुक्त भावसे गेंदके खेलमें सबके साथ भाग लेना चाहता हूँ, यह भी क्या बात है कि सब खेलनेमें सुविधा दें और मैं खेलमें दूसरोंकी दयाका पात्र बना रहूँ। माँको कुछ ज्ञात नहीं है, मैं अपने-आपमें उलझना बचपनसे सीख गया हूँ। पूछता हूँ—'माँ जंगल कैसा होता है? किधर जानेपर जंगल मिलता है?' माँ मेरे इस सवालका उत्तर ठीक नहीं दे पाती हैं। केवल कहती रहती हैं कि जंगल बहुत-बहुत दूर होता है, उसमें बहुत घने पेड़ होते हैं। बहुत दिनतक जंगल जानेके ऊहापोहमें रहा, पर वहाँ जानेका कोई उपाय नहीं निकाल सका। ध्रुवकी तरह तपस्या करके भगवान्से क्या माँगूँगा? यह मेरे लिए बहुत स्पष्ट नहीं है, फिर भी अपनी विवशताओंसे मुक्ति पानेके लिए ध्रुवके समान मेरे मनमें निश्चय जन्म ले रहा है।

अब तक हम दोनों ढलानपर नीचे उतरते हुए नालेके पुलको पार कर फिर ऊपर चढ़ने लगे हैं। दोनो ओर फैली हुई श्यामलताके बीच सड़क स्पष्ट होकर चढ़ती गयी है। हमारा बहुत कम ध्यान इस ओर है। मैं बताता जा रहा हूँ—पढ़ाई शुरू की है, माँने 'रामचरितमानस'की चौपाई याद करानी शुरू की हैं—सवाल है कि जब हाथ ठीक नहीं हैं तो लिखाई कैसे सीखूँ! अब ठीक अपनी बात समझने लगा हूँ। जानता हूँ मेरे हाथ औरों जैसे नहीं हैं, इसी कारण औरों जैसे ठीक सभी काम नहीं कर पाता हूँ। लेकिन अब भी मेरा भाव है कि काम कर भी सकता हूँ, पर ये सब बहुतसे काम मुझे करने नहीं देते। ज़िद करके अपनी बात रखना न जाने क्यों मुझे छोटी बात लगती है, पर चाहता हूँ मुझे अपना काम करनेके लिए छोड़ दिया जाय। अकेलेमें कोशिश करके कुछ सफलता पा भी जाता हूँ, यह ठीक है कि औरकी तरह काम नहीं कर पाता और जिस प्रकार करनेकी कोशिश करता हूँ, उसमें मुझे बहुत परिश्रम करना होता है। फिर भी कर लेता हूँ, इससे क्या? छिपकर गोली जैसा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

खेल भी खेलता हूँ, मेरी बहुत-सी रंग-बिरंगी शीशे तथा लाखकी गोलियाँ लड़के जीत लेते हैं तो भी क्या ?

मेरे लिए अब यह असह्य हो गया है कि कोई मेरी विवशताका दया भावसे उल्लेख करे—बेचारा, ठीकसे खा नहीं पाता, उसे खिला क्यों नहीं देतीं। बेचारा मुँह नहीं धो पा रहा है, राजे उसका मुँह क्यों नहीं धुला देती। बेचारा, खेल नहीं पाता तो क्या, उसे साथ ले लो।....यह इसी तरह बेचारा बेचारा बेचारा, हर बार इससे चोट खाकर तिलमिलाता हूँ, अन्दर-ही-अन्दर घुटता हूँ, पर कुछ नहीं कहता और कहूँ भी क्या ? सोचता हूँ मैं कर सकता हूँ सब कुछ और नहीं ही कर पाता तो भी क्या ? क्यों हूँ बेचारा, नहीं हूँ, नहीं हूँ, कभी नहीं हूँ मैं बेचारा। फिर मेरी पढ़ाई-को लेकर भी यही बात है। माँ लालाजीसे कहती हैं—'यह क्या पढ़-लिख सकेगा ! बिना लिखाईके होगा क्या ? भगवान् क्या होगा ? कैसे करेगा बबुआ।' समझ लेता हूँ कि माँका भाव बेचारा कहनेका ही है। सभीका यही भाव है, माँका भी यही भाव है, बस वे केवल औरोंकी तरह मुखर नहीं होतीं। मन-ही-मन कहता हूँ कि मैं पढ़ूँगा, पढ़ूँगा और पढ़ूँगा।.... मैंने सहज ही एक दिन लिखनेका आविष्कार कर ही लिया और फिर मेरी पढ़ाई-लिखाई नियमसे चल निकलती है। माँ बहुत दिन नहीं रहीं, पर मैं जैसे यही भाव लेकर आगे बढ़ता रहा हूँ कि माँको पढ़कर दिखा ही दूँगा, तब तो नहीं कहेंगी इस तरह—बेचारा बबुआ !

अब हम चौराहेपर आ गये हैं, यहाँसे हमको लौटना है। बिना सोचे ही पिंजरापोलकी ओरसे पहाड़ीकी ओर जानेवाले मुख्य रास्तेपर हम हो लेते हैं। बुल्केजी पूछ लेते हैं कि स्कूल जीवनमें दूसरोंसे मुझे कैसा व्यवहार मिला। यहाँ मुझे सामरसेट मॉमके उपन्यास 'ऑफ़ ह्यूमन बॉण्डेज़'के नायक फ़िलिपकी याद आ जाती है। मैं कहता हूँ कि या तो यह अन्तर इङ्गलैण्डके स्कूली जीवन और हमारे देशके स्कूली जीवनका है अथवा केवल दो भिन्न परिस्थितियोंका अन्तर स्वीकार किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फ़िलिपकी पंगुता मेरी अपेक्षा बहुत साधारण है, पर उसे अपने साथियोंकी क्रूरताका प्रायः शिकार होना पड़ा है। इसके विपरीत मेरे शिक्षक, मेरे साथी मेरे प्रति सदा स्नेहशील रहे हैं। मुझे याद नहीं किसीने मेरे प्रति मेरी पंगुताको लेकर व्यंग किया हो। ऐसा भी नहीं कि मैं अलग-अलग रहता था। एक प्रकारसे मैं सबके बीचमें घुसता-रहता था, हर काममें, हर खेलमें। मैंने स्कॉउटिंगमें भाग लेना चाहा और स्कॉउट मास्टरने जो कुछ मैं कर सकता था उतना ही करनेकी छूट देकर मुझे दाखिल कर लिया। फिर मैंने उसके दो पदक भी पाये। इसी प्रकार सातवीं कक्षा तक हाकी जैसा खेल भी खेलता रहा, बादमें मुझे स्वयं ही इस प्रकारके खेल-में भाग लेना हास्यास्पद लगने लगा। पर मेरे किसी साथीने इसके लिए मेरी हँसी नहीं उड़ाई। यही नहीं उन्होंने यथासम्भव सहज रूपसे ही खेलने दिया। दोनों ही पक्ष मुझे स्वीकार करनेको तैयार हो जाते थे। यह इतना मैं समझता था कि मेरे खेलनेसे किसी पक्षका कोई लाभ नहीं है, फिर भी मैं खेलको अपने लिए सहज रूपमें स्वीकार करना चाहता था और मेरे साथी इसमें मेरी सदा ही सहायता करते रहे।

बुल्केजी भी स्वीकार करते हैं कि सम्भवतः इस देशमें धार्मिक मनो-भावका एक यह रूप भी है, लोगोंके मनमें ऐसी स्थितिमें सहायताकी भावना उठती हो। और यह भी है कि मनमें संस्कार हो कि ऐसी स्थितिमें किसी-की हँसी उड़ाना पाप है। पर वे इस बातपर भी बल देते हैं कि मेरी, अपनी स्थितिको सहज रूपमें ग्रहण कर लेनेकी, भावना भी इस प्रकार दूसरोंके व्यवहारका कारण रही है। प्रायः ऐसी स्थितिमें व्यक्ति अपने-आपके प्रति इतना सचेष्ट हो जाता है कि वह दूसरोंके सामने अपनेको स्वयं ही हास्या-स्पद बना देता है। वह अपनी कमीको छिपानेके प्रयत्नमें अपने-आपको अतिरंजित रूपमें प्रकट करता है।

अब हम अपने अहातेके इस ओरके तालाबके पुलपर बैठे हुए हैं और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बुल्केजीको बता रहा हूँ कि लगभग तेरह-चौदह वर्षकी अवस्थामें मैं 'रामचरितमानस' के आधारसे 'गीता'के आधारपर आ गया हूँ। अब मैं 'मानस' की भक्तिसे, उसके समर्पण भावसे सन्तुष्ट नहीं हूँ। 'गीता'के कर्म-वादकी चर्चा सुनता हूँ, उसके बारेमें तिलक और गाँधीके विचार पढ़ता हूँ। फिर उसमें अपने अनुसार कुछ खोजता हूँ, दूसरोंकी टीकाओंसे मुझे अपने-आप अपना रास्ता खोजना अधिक रुचिकर लगता है। धीरे-धीरे मैंने 'गीता' से अर्थ ग्रहण करना और उसके अनुसार जीनेकी पद्धति विकसित करना सीखा है। पर शिक्षाके क्रममें ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहा हूँ, मुझे अपनी पंगुताकी विवशताका एहसास अधिकाधिक तीखा होता जाता है। परीक्षाओं-में वे विद्यार्थी मुझसे आगे हो जाते हैं, जिनसे मेरी कोई तुलना नहीं। मेरे लिए यह अधिकाधिक कष्ट और वेदनाका विषय होता जाता है। मुझे दूसरोंपर आश्रित रहना भी अब खलता है। इन्हीं दिनों मेरा नीत्शेसे परि-चय होता है और मैं उससे अभिभूत हो जाता हूँ। उसकी हीरोकी परि-कल्पनासे भी अधिक मुझे उसका क्रिश्चियन पिटीके प्रति आक्रोश आकर्षित करता है। मुझे लगता है बहुत दिनोंके बाद अपने भावको व्यक्त करने लायक सिद्धान्त मिला है। मुझे दयासे चिढ़ रही है और नीत्शेके पिटीके सिद्धान्तमें उसीका गरिमामण्डित रूप मुझे मिल गया है।

लेकिन यह भी बहुत दिन नहीं चल सका, इस मनःस्थितिमें सारे व्यक्तित्वपर जैसे बहुत भारी बोझा पड़ता है। नीत्शेके समानान्तर टॉल्स-टायका साहित्य मनोयोगसे पढ़ता जा रहा हूँ। फिर उसके जीवनमें रुचि लेने लगता हूँ। मैंने अपने अन्दर दो व्यक्तित्वोंको धारण कर रखा है, जो एक-दूसरेसे नितान्त विरोधी हैं। मैं एक ओर नीत्शेके जीवनको देखता हूँ और दूसरी ओर टॉल्सटॉयके। एकका संघर्ष दार्शनिक स्तरका है और दूसरेका सर्जनात्मक कोटिका। शायद यह टॉल्सटॉयकी सर्जनात्मक प्रतिभा थी जिसने मुझे धीरे-धीरे अपनी ओर कर लिया और नीत्शेके व्यक्तित्वके विध्वंसक प्रभावसे मुझे मुक्त होनेमें भी सहायता दी। इसी बीच गांधी आ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाते हैं और उनका कर्मवाद मेरे लिए टॉल्सटॉयके सर्जनात्मक संघर्षका जैसे पूरक हो।

और फिर आगेके वर्षोंका मेरा अधिक गहन जीवन-संघर्ष शुरू होता है, यह संघर्ष मेरे वैयक्तिक जीवनके सभी पक्षोंको आक्रान्त कर लेता है। मैं बढ़ता रहता हूँ, झेलता रहता हूँ। यह इतना उलझा और अस्पष्ट रहा है कि नहीं कह सकता कि मैं कैसे चलता आया हूँ। विश्वास, अविश्वास, आस्तिकता, नास्तिकता, आस्था, अनास्था, नैतिकता, अनैतिकता कौन-सा आधार रहा है, कौन-सा पक्ष रहा है? ऐसे सीधे सरल ढंगसे कहना कठिन ही नहीं ग़लत भी होगा।

तालके पुलपर नीचे पैर लटकाये हम बात कर रहे हैं। पुलके नीचे पानीकी कई धाराएँ घल-घल करती हुई नीचेकी ओर गिर रही हैं। उनका तीखा नाद अब तक हमारी बातचीतमें डूबा हुआ था। मैं मौन हो जाता हूँ, मुझे लगता है इसके आगे मैं क्या कह सकता हूँ? जो कहा जा सकता है वह बहुत पीड़ाको झेलकर व्यक्त किया जा सकता है। और पीड़ाको झेलकर उससे मुक्त होकर कह पाना क्या ऐसा आसान है। बुल्केजी भी मौन हैं, वे मेरे भावका स्पर्श कर पा रहे हैं। उनकी दृष्टिका अनुसरण कर मैंने पाया, वे हरी घाटीके एक पार्श्वकी पहाड़ी शृंखलामें खोये हुए हैं। मैं अनुमान लगा पाता हूँ, वे मेरी शेष कथाके अनुभवको इस प्रकार पूरा कर रहे हैं। फिर उन्होंने एकाएक अपनेको सँभालते हुए चलनेका प्रस्ताव किया। हम दोनों तालाबके किनारे चल पड़ते हैं। बुल्के जी रास्तेमें कहते हैं—"कलसे तुम्हारा व्रत शुरू होगा और प्रार्थना करूँगा कि मेरे भइयाको जीवनकी ठीक दृष्टि मिल सके।" मेरा ध्यान जाता है कि एक स्नेही आत्मीय जन मेरे सारे संघर्षके बीच सहारा देनेके लिए अपनी सारी ममताके साथ प्रस्तुत है।....लौटनेपर साढ़े नौ बजनेमें इतना कम समय रह गया है कि रोशनी जानेके पहले कठिनाईसे सब काम समाप्त कर सकता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आज आठ जून है। सुबह नींद नित्यकी भाँति चार बजे खुल गयी है और कुछ मिनट मन एकाग्र करनेके बाद नित्य-कर्ममें लग जाता हूँ। दिन-भरका सारा कार्यक्रम अन्य दिनोंके समान है, केवल मौन भावसे एकाग्र रहकर या तो चिन्तन करना है या मनको यथासम्भव शान्त रखनेका प्रयत्न करना है—विचारहीन स्थितिमें। स्वाध्यायके लिए चुनी हुई पुस्तकों-के लिए समयका विभाजन कर लिया है। नित्यक्रियासे छुट्टी पाकर घूमनेके लिए चल पड़ा हूँ। अपने मनसे जीवनकी सारी चिन्ताओंको अलग कर देना चाहता हूँ, गत आगतके क्रमसे विच्छिन्न करके जीनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। चारों ओरकी प्रकृति—दोनों ओर फैले हुए जंगल, आगे-पीछेकी उझकती हुई खसकती और साथ-साथ चलती हुई पहाड़ी चोटियाँ, घाटीका हरा-भरा विस्तार····इस सबसे अपने-आपको खींच लेना चाहता हूँ। यह ऐसा आसान नहीं है, फिर भी एक उपाय निकाल पाया हूँ, मैं समस्याओंमें अपनेको डाल देता हूँ और उनके साथ बहने लगता हूँ।

आदमीने धर्मका, साधनाका यह सारा विस्तार फैलाया है। उसने नित्य, अनश्वर, शाश्वत, अमरकी कल्पना बार-बार की है। एक ओर जीवनकी क्षणभंगुरता है, नश्वरता है, मृत्यु है। और मनुष्य है कि उनसे बचनेके लिए, शायद भयभीत होकर कामना करता रहता है अमरत्वकी। आत्मा और ब्रह्मकी सारी कल्पना क्या इसी जीवनकी क्षणिकतासे पलायन नहीं है। जब कहा गया कि जिनके प्राण गत हैं और जिनके प्राण अभी नहीं गये हैं, उन दोनोंके लिए शोक करना व्यर्थ है, उस समय क्या शोकसे बचनेकी भावना प्रधान है? इन्द्रियोंका विषयानुभव शीतोष्ण, सुख-दुःखमय, क्षणभंगुर तथा अनित्य मानकर यह मोक्षकी कामना करनेका प्रयोजन क्या है? दुःख-सुखके आवर्तनमें पड़ा हुआ मनुष्य उनको समभावसे ग्रहण करनेका आग्रह क्यों प्रकट करता है? यह क्या है कि मनुष्य नहीं मानना चाहता कि सत् तत्त्वका अभाव हो सकता है और इसीलिए जिसका अभाव हो सकता है ऐसे पदार्थका अस्तित्व स्वीकार नहीं करना चाहता, उसे सत्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं मानता। क्या यह अपने अभावोंको अस्वीकार करना नहीं है ? शरीर नाशवान् है, शरीरके नश्वर धर्मसे हम इतने आतंकित हैं कि बार-बार आत्माकी अमरताका उद्घोष करते नहीं थकते।

सेण्ट स्टेनिसलॉसकी सीमाके बाहर निकलकर आगे पहाड़ीकी ओर बढ़ रहा हूँ। सारा वातावरण इतना परिचित है कि बिना प्रयत्नके मन बिखर कर भी उससे असम्पृक्त है। मैं अपने चारों ओरके सारे दृश्यबोधमें हूँ भी और नहीं भी हूँ। क्या यह होना और न होना एक ही स्थितिके दो पक्ष नहीं हैं। होनेका सघनतम अनुभव और न होना एक ही तो है। यह पहाड़ी श्रेणी, शृंखलाके उठते-गिरते शिखर, दूरकी हरी शृंखला और उसके बीच-की घटाटोप हरियालीसे आच्छादित घाटी सब मेरे अत्यन्त परिचित हैं। पीछे सर्पशिखर और हस्तिपीठकी आहट इतनी जानी समझी हो गयी है कि आज इन सबका बोध मेरे सारे अस्तित्वका अंश बन गया है। फिर मुझे अपना ध्यान एकाग्र करनेमें क्या कुछ परिश्रम करना पड़ रहा है ? वरन् इनके बारेमें यह इतना सोचना भी मेरे चिन्तनका अंग है।

मनुष्य है कि वह अपने अस्तित्वसे बँधा रहना चाहता है, कुछ अपने पास ऐसा मानना चाहता है जो उसके होनेको अनश्वर सिद्ध कर सके ! यह आत्मा है जो वस्त्रोंके समान शरीर बदलती रहती है। क्या यह मनुष्य-की जीवनके प्रति आसक्ति ही नहीं है ? शरीरका यह मोह ही नहीं है जो आत्माके अनेकानेक आवरणकी कल्पनामें प्रतिघटित होता है। कैसी बात है जीवनकी इतनी बलवती आकांक्षा और साथ ही उसके अनिवार्य दुःख-सुख-से बचनेकी बलवती कामना। नहीं तो गीताकार क्यों शोक न करनेपर बल देता नहीं थकता—**जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च। तस्माद-परिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।** किसी-न-किसी तरह शोकसे मुक्त होना चाहता है। वह सदा जनमनेवाला तथा सदा मरनेवाला है, तो भी शोक व्यर्थ है और यदि जनम लेनेवाला मरेगा और मरनेवाला जनमेगा, तो भी शोकके लिए गुंजाइश नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घाटीमें आ गया हूँ। बाईं ओर चट्टानशिखर उभरता आ रहा है और दाहिनी ओर हरी घाटीका विस्तार फैला है। अनजान ही इस सबपर मैं फैला हूँ। इस हरी घाटीने मेरे अस्तित्वको इन दिनों कुछ अपना भी दिया है और आज मौनव्रतके आत्मचिन्तनमें भी इन दिनोंका यह उगा हुआ मेरा अंश आग्रहशील हो उठा है। शरीर अनश्वर है और आत्मा अमर है, कभी इस विश्वासने मेरे मनको बल दिया है। अविनश्वर आत्माकी आस्थाके आधारपर मैंने आँधी-तूफ़ान भी झेले हैं। ठीक अर्थ क्या है? इसपर बिना विचार किये भी मैंने अपना जो भी अर्थ लिया है, उससे बड़ा भरोसा रहा है। पर आज वह सब वैसा नहीं लगता। बहुत दिनोंसे इन प्रश्नोंपर अपने ढंगसे सोचता-समझता आया हूँ। पर इधर जो अपने अन्दर आमूल बदलता हुआ अनुभव कर रहा हूँ, उसने जैसे इन प्रश्नोंकी मेरी पहली पकड़को ढीला कर दिया हो। पहलेका यह आत्मविश्वास कि मैं हूँ आत्मवान् अविनाशी, और यह शरीर मेरे असंख्य आवरणोंमें एक है। क्या चिन्ता है इसकी, यह जैसा भी है क्षणिक है, परिवर्तनशील है। मैं मृत्युंजयी हूँ, जन्म-मरण मात्र मेरा लीला आवर्तन है। मैं असंख्य जन्मों और मृत्युओंको झेलकर भी उनसे असम्पृक्त हूँ।

आज ऐसा नहीं है। वैसा विश्वास नहीं है। अपनी आस्थासे जैसे हिल गया हूँ। नदीकी तीव्र धारमें जमे हुए पैर उखड़ने लगते हैं। घाटीके अन्दर प्रवेश करता जा रहा हूँ और अपने-आपमें उलझता जाता हूँ। यह स्वधर्म क्या है? इसको बहुत कुछ पहले भी समझने जाननेकी कोशिश की है। कर्तव्यकी प्रेरणाका स्रोत मैंने सदा इसीको माना है। यह क्या है जिसकी पुकार गीताकार बार-बार करता नहीं थकता—**'श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।'** क्या है स्वधर्म जिसमें मरना भी श्रेयस्कर हो जाता है। यह अनासक्त होना ही क्या स्वधर्म है? एक ओर अनासक्त भाव है और साथ ही—**'सततं कार्यं कर्म समाचर'** की आज्ञा भी है। यह अनासक्ति कैसी है जिसमें भले-बुरेका भाव बना भी रहता है। यह कर्म है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्योंकि स्वयं प्रभु कर्ममें स्थित है, यज्ञ कर्म है, कर्म बिना लोककी व्यवस्था नष्ट हो जायगी। मनुष्य है तो उसे कर्मका आचरण करना ही है। कर्मोंका अनारम्भ तो निष्क्रियता है, वह वांछित नहीं। मनुष्य प्रकृतिसे कर्म करता है, एक क्षण भी नहीं जाता जब वह बिना कर्मके स्थित रह सकता हो।

स्वधर्म ! कर्म ! अनासक्ति ! यह आसक्ति ही है जो मनमें सुख-दुःख, लाभालाभ, जयाजयका द्वन्द्व उत्पन्न करती है। घूमकर प्रश्न फिर दुःख, शोकसे मुक्ति पानेका उठ खड़ा होता है। इनके प्रति सम भाव रखना होगा और यह सम्भव तभी है जब कर्मके प्रति अनासक्त दृष्टि हो, सिद्धि और असिद्धिके प्रति समान बुद्धि हो। इस दृष्टिसे व्यक्ति राग-द्वेष, शुभ-अशुभसे मुक्त हो जाता है। कर्म है तो फल होगा, फलके प्रति आसक्ति भी होगी। कर्म प्रकृति है तो फल और आसक्ति प्रकृति क्यों नहीं है ? लेकिन गीताकार इसीके प्रति संन्यास वृत्तिका उपदेश करता है और वह यह अन्तिम समाधान भी प्रस्तुत करता है—**'मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्म-चेतसा।'** सम्पूर्ण कर्मोंका प्रभुके प्रति समर्पण करना होगा, फिर अनासक्त होना सहज सम्भव हो जायगा।

लेकिन फिर अपना क्या है ? वह धर्म, वह कर्म और वह अनासक्ति ! जब सब कृष्णार्पित ही है, तब अपना रह ही क्या जाता है। यह दुःखसे, शोकसे बचनेके लिए अपने-आपको इस प्रकार अस्वीकार कर देना ही तो है। क्या हम केवल माध्यम हैं ? यह अपनेको माध्यम बना देना ही क्या समत्व योग है ? लेकिन फिर क्या रह जायगा जीनेके लिए ? यह दायित्वका बोध कि हम हैं, हम जीते हैं, हम दुःख-सुख सहते हैं, हम द्वन्द्वोंमें, लाभालाभ, जय-पराजय और सिद्धि-असिद्धिमें फलके भोक्ता हैं—क्या हमको सार्थक अर्थवान् नहीं करता ! यह दुःख, पीड़ा, शोक क्या हमारे जीवनका आस्वाद्य नहीं है ? क्या मृत्यु जीवनकी ही उपलब्धि नहीं है ? फिर क्यों है कि हम अमरताके लिए, शाश्वतके लिए अर्थात् मृत्युके भयसे, क्षणिकताके आतंकसे जीवनको नकार जाना चाहते हैं ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सोचना कठिन होता जा रहा है। मनका ऊहापोह उलझता-बढ़ता मनके चिन्तन-क्रमको अस्थिर कर देता है और मनमें सब मिल-जुलकर अपने-आप मिट जाता है। अब मैं केवल अनुभवकी स्थितिमें हूँ। अब मैं घाटीके नीचेके अन्तिम बिन्दुसे वापस लौट रहा हूँ। अपने चिन्तनके सारे सूत्रोंके तनावको ढीला करके छोड़ देता हूँ और सारे विचार-तन्तु अपने-आप बिखर कर फैल जाते हैं। उनके फैलावके साथ हल्का हो चुका हूँ, जैसे मैं उनसे अनायास ही मुक्त हो गया हूँ। इस मुक्तिमें अनुभवकी स्थिति भी ऐसी है जिसमें रंगका, रूपका, ध्वनिका गोचर एहसास नहीं होता, केवल होनेका अनुभव शेष रह गया है।

कमरेमें वापस आनेके बाद जब लगे हुए बाथरूमके दरवाजेके निकट पहुँचता हूँ तो वहाँ देखता हूँ कि पल्लोंके बीचमें एक सर्पका सारा धड़ लटक रहा है। मैं ठिठक जाता हूँ, पर दूसरे ही क्षण दृष्टि पड़ती है कि एक ओर उसका सिर कटा हुआ पड़ा है। फिर समझनेमें देर नहीं लगी कि पल्लोंको रातमें (अँधेरेमें) जब मैंने भेड़ा होगा, उसी समय इस स्थितिमें पड़कर इनकी गिलोटिन हो गयी है। किंचित् समयके लिए मनमें उठता है कि इससे भिन्न भी कुछ हो सकता था। पर मुझे एकाग्र रहना है, यह सोचकर बिना अधिक सोचे-विचारे स्नानादिकमें संलग्न हो गया हूँ। फिर नहाने-धोने तथा सन्ध्या-पूजामें सचमुच ही ऐसा व्यस्त हो गया कि मुझे बुल्केजीके आनेपर ही सर्प-प्रसंगकी याद आई। बुल्केजीने बिस्तर आदि-की व्यवस्थाके साथ उसकी भी सफ़ाई कर दी है। दैवी संयोगपर प्रसन्नता प्रकट करनेके अतिरिक्त मेरे मौनव्रतके कारण वह कोई चर्चा नहीं करते। नाश्ता हम दोनों प्रतिदिनके समान साथ-साथ करते हैं, पर बिलकुल मौन। साधारण आवश्यकताओंको व्यक्त करनेके अतिरिक्त हमारे बीच कोई बात-चीत नहीं होती। मैं अपना ध्यान यथासम्भव साधारण जीवनके क्रमसे हटा कर एकाग्र करनेका उपक्रम करता हूँ। सफलता कितनी मिल पाती है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह प्रश्न अलग है। पर इतना तो होता ही है कि सब ओरसे मन हटाने-पर अपने-आपमें सहज ही केन्द्रित हो जाता है।

नाश्तासे लौटनेके बाद मैंने 'गीता' और 'इमीटेशन ऑफ़ क्राइस्ट'में दो घण्टे लगाये। इसके बाद कुछ समयके लिए एकान्त चिन्तन करने पीले बँगलेके सामने माता मरियमके बाग़ीचेमें जाता हूँ। सड़कके दूसरे ओर ही छोटी-सी फटकियाको खोलकर अन्दर प्रवेश करता हूँ। उसकी सड़क, पटरियों और रविशोंपर टहलता हुआ अपने-आपको घेरना चाहता हूँ। नीचे फूलोंकी क्यारियोंमें नीली तथा गुलाबी लिली ही अधिक हैं और क्रोटन-के सुन्दर पौधे हैं। ऊपर आम, जामुन, युकिलिप्टस, टीक तथा सेमल-के बहुत ऊँचे वृक्ष हैं। छायाके नीचे-नीचे घूम रहा हूँ। यहाँ एकान्त और शान्त है। पर अपने मनको इससे भी अलग करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

ही दैट फ़ालोथ मी, वाक्थ नाट इन डार्कनेस—दूसरे प्रभुका कथन है। वहाँ समर्पण है, तो यहाँ प्रभुके जीवन तथा वचनोंका अनुकरण है। यह हृदयके अन्धकारसे मुक्तिका प्रश्न वैसा ही है। जीवनको सार्थक बनानेके लिए प्रभुकी कृपा और महिमाका अधिकारी बनना होगा। यह अहंकार, यह मोह, ये आकांक्षाएँ जीवनको वर्तमान क्षणके योग्य बनाती हैं, भविष्य-को विस्मृत कर देती हैं। दृश्य-जगत्से हृदयको हटाकर अदृश्यकी ओर उन्मुख करना ही जीवनकी सार्थकता है। निरन्तर यह भान होना चाहिए कि हम निर्बल हैं, और यदि हमको अनन्त सुख और शान्तिका भागी बनना है तो प्रभुको पुकारकर कहना होगा—'हे प्रभु, तू अपनी अनन्त कृपामें अपने साथ मुझे एक कर ले।' जीवनमें सब कुछ अपूर्ण है, इसका सारा ज्ञान, विज्ञान तथा उन्नति अनिश्चित है। यहाँ केवल निश्चित वस्तु है ईश्वरीय मार्ग।

सर्वत्र यही भाव है। यही चिन्ता है कि अनिश्चितसे निश्चित, नश्वर-से अनश्वर, क्षणिकसे शाश्वत तक किस प्रकार पहुँचा जाय। संसारके पाप,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ताप, दुःख और वेदनाओंसे मुक्ति किस प्रकार प्राप्त की जाय। और इस मुक्तिके लिए सहज संवेगोंको रोकना होगा, इच्छाओंको मिटाना होगा, कामनाओंका त्याग करना होगा, भोग तथा वासनाओंको विसर्जित करना होगा। यही नहीं अपना विश्वास छोड़ना होगा, मनुष्यके विश्वासका सहारा त्यागना होगा और संसारमें जो कुछ आकर्षक है, मोहक है उससे दूर रहना होगा। यह होगा कैसे? अपनी इच्छाको प्रभुके आधीन कर दो, अपने अपनत्वको प्रभुके प्रति विसर्जित कर दो और ईश्वरके प्रति सम्पूर्ण हृदयका समर्पण कर देनेके बाद, वह सारा दायित्व अपने ऊपर ले लेगा।

हवाके झोंकोंसे वृक्षोंकी लम्बी डालियाँ हरहराकर सारे वृक्षको झँकझोर देती हैं। सारा बागीचा इस प्रकार झूमते हुए वृक्षोंसे आलोड़ित हो रहा है। ऊपर दो-चार पत्तियाँ गिर जाती हैं और मनकी उलझनमें व्यस्त हूँ। इस उलझनसे निकलकर मनको शान्त स्थितिमें लानेका प्रयत्न करता हूँ। सोचता हूँ कि मौनव्रतका यह आज पहला दिन है। इन तीन दिनोंमें आत्मचिन्तनसे मानसिक सन्तुलन मिल सकेगा। आगे अधिक दृढ़तासे बढ़ सकूँगा। पर यह तो प्रारम्भमें ही मन न जाने कितने ऊहापोहोंमें लग गया है। मनको स्थिर करनेके लिए जिन आधारोंको ग्रहण करना चाहा है, वे आधार ही लगता है हिलने लगे हैं। अब क्या होगा?

कभी दुःखसे, पीड़ासे, क्लेशसे, मृत्युसे, नाशसे और जीवनकी क्षणभंगुरतासे व्याकुल हुआ हूँ, घबराया हूँ, रोया हूँ, चिल्लाया हूँ। उनसे मुक्त होनेकी बलवती आकांक्षासे उद्वेलित हुआ हूँ। लगता रहा है बहुत अकिंचन हूँ, अपदार्थ हूँ, तुच्छ हूँ। फिर बन्धनसे मोक्ष, क्षणसे शाश्वत, लघुसे महत्की कामना करने लगा, अपनी ही हीनता, अपने ही दुःख-क्लेश और अपनी ही क्षणिकतासे भयभीत और आतंकित होकर। मैं मुक्तिकामी रहा हूँ, मैंने अमरत्वकी साधना की है, मैंने शरीरके ऊपर आत्म-तत्त्वको स्वीकार किया है। मैं पापी हूँ, मैं मोही हूँ, मुझमें लोभ-क्रोध-काम-ईर्ष्या-द्वेष सभी कुछ तो है। फिर इनको त्यागना होगा, मनकी वृत्तियोंको शासित और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नियोजित करना होगा। बिना इन वृत्तियोंको त्यागे मनमें स्थिरता कैसे आ सकेगी ? मनके निरोधके बिना····।

पर इस प्रकार क्या नहीं त्यागना होगा ? आदमीके जीवनमें है क्या ? दुःख-सुख, हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश—जीवन इनका ही संयोग है। जीवनमें लोभ-मोह, ईर्ष्या-द्वेष, काम-क्रोधके बिना चलेगा कैसे ? इसीसे जब त्यागकी बात शुरू होती है तो उसकी परिणति संसार त्याग अर्थात् जीवन त्यागमें ही होगी। इसके पहले रुकना सम्भव ही नहीं है। जीवनका आग्रह ! वह भी कम नहीं है। जीवनका मोह छूटकर भी नहीं छूटता, उसके आकर्षणसे मुक्त हो पाना ऐसा आसान नहीं है। इसीसे प्रभुकी कृपाका आश्रय लेना होता है। बार-बार पाप स्वीकार करना पड़ता है। फिर उसके अनुग्रहसे ही आश्रय मिलनेकी सम्भावना भी है। समर्पण ! प्रभुके प्रति समर्पित होना, पूर्ण हृदयका समर्पण, कर्मका, फलका और जीवनकी सब इच्छा तथा आकांक्षाओंका समर्पण। इसके बिना यहाँ चलता ही नहीं।

बुल्केजीके साथ दोपहरका खाना खानेके बाद अपने कमरेमें आ गया हूँ। मेजपर हम मौन रहे हैं। बीच-बीचमें एक-आध बार उन्होंने किसी वस्तुके लिए पूछ लिया और बस। नित्यके कार्यक्रमके अनुसार आराम करनेका समय है। स्प्रिंगके पलंगपर लेटा हुआ हूँ। मनको एकाग्र करता हूँ जिससे आधा घंटा सो सकूँ। रोज ही ऐसा होता है। परन्तु आज मनके बाँधनेमें अधिक प्रयत्न करना पड़ रहा है। नींद नहीं आ सकी, केवल मनसे सारे विचारोंको निकालनेके प्रयत्नमें पौन घण्टा बीत जाता है। मस्तिष्कके सारे स्नायु और तन्तुओंको शिथिलकर मनको निष्क्रिय करना चाहता हूँ, जिससे विचारोंका क्रम अपने-आप बिखरकर समाप्त हो जाय और सो सकूँ। पर मन निष्क्रिय हो नहीं पाता, कोई-न-कोई विचार या कल्पनाका सूत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किसी-न-किसी सन्धिसे प्रवेशकर उसपर फैलने लगता है। केवल अलस भावकी तन्द्राका सुख प्राप्त कर सका।

उठ जाता हूँ और नियमके अनुसार 'सेवियर' पढ़ता रहता हूँ। एकाग्रताके साथ पढ़ना चाहता हूँ, पर मन उतना ही अस्थिर है। सामान्य स्थितिमें ध्यान लगाकर पढ़ना जितना आसान था, उतना ही अब यह मुश्किल हो गया है। बस मनको नियन्त्रित कर पढ़ता जाता हूँ, पढ़ता जाता हूँ। तीन बजेसे चार बजे तक प्रार्थनाका समय फिर आ गया है। तीन बार प्रार्थना करनेका समय हमारे कार्यक्रममें निश्चित है। मुँह हाथ धोकर प्रकृतिस्थ चित्तसे चौकीके आसनपर बैठकर पहले मौनव्रतकी प्रार्थना पुस्तकके कुछ अंश सामने रखकर चिन्तन करता हूँ। लेकिन उसके भावपर मन बार-बार अटकता है, किसी-किसी प्रकार उसे पूरा कर स्वयं प्रार्थना करता हूँ। मेरी अपनी प्रार्थनाका रूप विचित्र है, यथासम्भव सारे दृश्य जगत्की मनमें कल्पनाकर उसमें परिव्याप्त सत्तासे एकमेक या एकरस होनेका प्रयत्न करता हूँ। इस प्रकारका काल्पनिक चिन्तन मेरे लिए आसान है।

पुनः माँ मरियमके उपवनमें घूम रहा हूँ। इस बार उनकी मूर्ति और उसके बाईं ओर बनी हुई कृत्रिम गुफामें अंकित ईसा-जन्मकी कथाके समीप टहल रहा हूँ। किस प्रकार ईसाका जन्म हुआ, उसका सारा दृश्यविधान वहाँ है। एक ओर भेड़ चरानेवाले गड़रिया हैं और उनके सामने देवदूत सन्देश देनेकी मुद्रामें खड़ा है। दूसरी ओर माँके बगलमें चरनीमें शिशु क्राइस्ट लेटे हैं और चारों ओरसे गड़रिया एकत्र हैं, उनके मुखपर आश्चर्य और आह्लादका भाव है और उनकी भेड़ें भी लगभग इसी भंगिमामें अंकित की गयी हैं। उपवनमें कई स्थलोंपर मरियमकी अन्य मूर्तियाँ भी हैं। किनारे-किनारे चारो ओर घूमती हुई सड़कपर घूम रहा हूँ।

ईसा-जन्मकी कथाको कवि कल्पनाका योग मिला है। मेरी और जोसेफ़को सम्राट् अगस्टसकी प्रचारित आज्ञासे नेज़रेथसे बेथेलम नगर जाना पड़ता है। वहाँकी सरायमें क्राइस्टका जन्म होता है, सरायमें भीड़ इतनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है कि शिशुको चरनीमें लेटाना पड़ा है। देवदूत मैदानमें जागनेवाले गड़रियोंको यह सन्देश देता है और वे सरायमें प्रभु ईसाको उसी प्रकार चरनीमें लेटा पाते हैं। धार्मिक श्रद्धा इस सबको इतिहासके रूपमें ही ग्रहण करनेका आग्रह करती है। पर क्यों हम इतिहासको इतना महत्त्व देते हैं? शायद हम समझते हैं कि इतिहास सत्य है, अतः उसका साक्ष्य हर चीज़का दृढ़ आधार हो सकता है। पर इतिहासका तथ्य सत्य तो है ही नहीं, वह उसका प्रतिनिधित्व कर सके यह भी कभी ही होता है। हम क्यों तथ्योंका इतना आग्रह लेकर चलते हैं?

क्या यह पर्याप्त नहीं है कि ईसाकी कथामें मानवीय कल्पनाका सत्य है, उसकी भावनाका आधार है। उसके यथार्थपर क्यों है यह आग्रह? यथार्थ! यथार्थ ही क्या इतना है जितना हम जानते हैं? क्या हमारी इन्द्रियाँ यथार्थको पूरा-का-पूरा ग्रहण कर पानेमें समर्थ होती हैं? आज विज्ञान यह सिद्ध करता जा रहा है कि हमारा प्रत्यक्ष बोधका सारा क्षेत्र ही सीमित है, सापेक्ष है। हम जितना इन्द्रियोंसे ग्रहण कर पाते हैं, वह है ही कितना। उसके ज्ञानकी सीमाएँ अधिक विस्तृत हैं, उसके यथार्थ ग्रहण करनेकी सम्भावना तो और भी अनन्त है। फिर ईसा ऐतिहासिक पात्र हैं या नहीं, उससे क्या आता जाता है। यह प्रश्न ही असंगत है। वह कल्पना भी यथार्थ है, शायद साधारण प्रत्यक्ष बोधसे कहीं अधिक यथार्थ, जिसने इस व्यक्तित्वकी उद्भावना की है। उनका जन्म, उनका पालन, उनका पुनः प्रकट होना, पुरोहितोंकी उनकी आलोचना, उनकी निर्भीकता, उनकी सत्यनिष्ठा, उनकी करुणासे पाप-तापमें मग्न प्राणियोंका उद्धार यह सब मानवीय सत्य हैं, यथार्थ है। फिर इसकी क्यों चिन्ता की जाय कि नेज़रेथके दाऊद वंशमें जोसेफ़की वाग्दत्ता कुमारी मेरीने वेथालेममें जिन परिस्थितियोंमें ईसाको जन्म दिया उनकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता क्या है? और यह आग्रह उनका सबसे अधिक है जो उनको शब्दशः प्रभुपुत्र मानते हैं!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अब कमरेमें लौट आया हूँ। एक घण्टा प्रार्थनामें फिर लगाना है। मन-ही-मन कह रहा हूँ—ईश्वरको प्रेम करनेके लिए धन्यवाद कभी नहीं दे सकता, क्योंकि वह विवश है, प्रेम करना या न करना उसकी प्रकृतिसे सम्बद्ध है। अपने ऊपर मुक्तिदाताको, अपने प्रेमकी किरणोंको फैलाते तथा अपने कोमल गीतके शब्दोंको अंकित करते देखता हूँ....मैं दूरवासी ईश्वर नहीं हूँ, मैं सखा और बन्धु हूँ, मैं तुम्हारे हृदयमें रहता हूँ, और तुम मुझमें रहते हो, देखो ! हम एक हैं, सारे अशुभको विस्मृत करके और बिना प्रतिकारकी चाहनाके। तुम ईश्वर बनो, और फिर तुम्हारा क्या आनन्द होगा ! तुम आसवके हर सिपमें ईश्वरको पियोगे। इस जगत्में ध्वनिहीन कुछ भी नहीं है, ईश्वर समस्त रची हुई वस्तुओंमें अपनी ही प्रतिध्वनि तथा अपना यश सुनता है।

धीरे-धीरे कमरेमें अन्धकार होने लगा है, पर खुली हुई खिड़कीसे सामनेके पेड़की घनी होती हरियालीके ऊपरके आकाशके बदलते रंगको देखता हुआ सोच रहा हूँ, शायद यह एकाग्र होकर सोचना ही मेरी प्रार्थनाका रूप है।....देखो, मेरा प्रिय पर्वतोंको पार करता, पहाड़ियोंसे गुज़रता हुआ आ रहा है। मेरा प्रिय कहता है, मुझसे कहता है—उठो, मेरे प्यारे, मेरे सुन्दर सखा और मेरे साथ चलो। क्योंकि देखो, अब जाड़ा बीत चुका है, पानी बरसना समाप्त हो चुका है। पृथ्वीपर फूल प्रकट हो गये हैं और चिड़ियोंके गानेका समय आ गया है। अंजीरमें हरे अंजीर निकल आये हैं, अंगूरी लतरोंसे सुगन्ध आ रही है। मेरे प्यार, मेरे मधुर मित्र आओ चलें। ओ मेरे प्रिय, हम पर्वतके तीखे शिखरोंपर, गुप्त ढालोंपर एक दूसरेके आमने-सामने हैं, अपना मुख देखने दो, अपनी वाणी सुनने दो, क्योंकि तुम्हारी आवाज़ बहुत मीठी है, तुम्हारी आभा बहुत सुन्दर है।

मन अब अधिक व्यवस्थित होकर बहने लगा है, धीरे-धीरे टटोल-टटोल कर बढ़नेके स्थानपर प्रवाहित हो चला है। यह सारा दृश्यादृश्य जगत् सब उसी प्रभुमें अवस्थित है, सर्जनेके सारे क्रममें उसीकी व्याप्ति है। यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकृति, उसका सारा विधान, उसकी सारी प्रक्रिया उस ब्रह्म तत्त्वमें स्थित है।....धीरे-धीरे यह क्रम अधिकाधिक सघन और केन्द्रित हो जाता है।*

हम दोनों फिर खानेकी मेज़पर मिले हैं। दिन-भरके मन्थनके बाद संध्या समयकी एकाग्रताने मनके उद्वेगको शान्त कर दिया है और मेज़पर प्रकृतिस्थ हूँ। चुपचाप खा रहा हूँ, बुल्केजी मेरी चिन्ता कर रहे हैं, बस बीच-बीचमें पूछ लेते हैं—और, इतना, एक और, बस। और इस इतनेसे न जाने कैसी तृप्ति मिल रही है। दिन-भरमें केवल इतने ही शब्द दूसरोंसे मिल सके हैं। भोजनके बाद हम नित्यकी भाँति टहलनेके लिए निकलते हैं। यह इस प्रकार टहलना भी विचित्र है, पहले दिनोंसे इसका कितना विरोध है। अपने-आपमें रहना, लगता है कितना कठिन है, साधना ही है निश्चय। इस प्रकार बिखरते हुए मनको फिर घेरना होगा, मैं व्रतमें हूँ। इस घूमनेमें अपनेको केवल खाली रख सकनेका प्रयत्न करता हूँ। यह इस प्रकार सम्भव हो पाता है कि अपनेको चारो ओर फैलानेका उपक्रम करता हूँ, और इस समय सारी प्रकृतिपर फैले हुए धूमिल अन्धकारमें छायाकृतियोंके सहारे अलस भावसे छा जाना आसान लगता है। कभी-कभी बीचमें बुल्के भाईकी ओर ध्यान जाता है। मेरे अलस भावमें उनकी ममता और उनका सौहार्द मिल-जुल गया है।

साढ़े आठ बजेके लगभग वापस आया हूँ। इस समय उपनिषद्का अध्ययन करना है और फिर सानेके पूर्वका चिन्तन! **ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।** इस सृष्टिमें, चराचर, जो भी है, वह ईश्वरसे आच्छादित है।....संसारमें कर्म करते हुए ही सौ वर्ष तक जीनेकी इच्छा करो, इस प्रकार मनुष्यको कर्म लिप्त नहीं होते और इससे भिन्न अन्य

*** इस चिन्तन-क्रममें गीता, बाइबिल, ईशोपनिषद्, साँग आफ़ सोलेमन तथा अक्वेना, हरवर्ट, ब्लैक, ऐन्जिलस सेलेसिपस आदिके कथन मुक्त रूपसे आ गये हैं।**

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोई मार्ग नहीं है।....आत्मघाती अन्धतमसको प्राप्त होते हैं....ब्रह्म अचल होकर भी मनसे अधिक वेग वाला है....सभी सृष्टिके गतिशील पदार्थोंका गति-में उल्लंघन कर जाता है, वह गतिशील है, वह निश्चल भी है, वह बाहर-भीतर सर्वत्र परिव्याप्त है। जो सम्पूर्ण प्राणियोंको आत्मा रूपमें देखता है और सब प्राणियोंमें उसी ब्रह्म तत्त्वको देखता है, वही संशयमुक्त है।

इसी प्रकार पढ़ता जा रहा हूँ, अब मनकी स्थिति ऐसी है कि पाठ करता हूँ और अर्थ ग्रहण करता हूँ। मनमें पग-पगपर ऊहापोह नहीं हो रहा है। मनमें इतना आभास अवश्य बना रहता है कि ईशोपनिषद्में गीता के वचनोंका मूल आधार है। सम्पूर्ण सृष्टिमें परमात्म तत्त्वको देखनेवाला एकत्व भावसे मोहमें नहीं पड़ता। कार्य और कारण, ज्ञान और कर्मके संतुलनका प्रश्न गीतामें भी उठाया गया है। इसी प्रकार शरीरकी क्षण-भंगुरता तथा आत्माके अमरत्वका सवाल है।

अब साढ़े नौ बज रहा है और अभी रोशनी चली जायगी। अतः सोनेका प्रबन्ध करके विस्तरपर अन्तिम प्रार्थनाके लिए प्रस्तुत हूँ।

प्रातः उठ गया हूँ और आजका क्रम कलकी अपेक्षा अधिक व्यवस्थित है। अपने निश्चित कार्यक्रमके अनुसार चल रहा हूँ, और वैसी अस्थिरता मनमें नहीं है। आज मनको बार-बार घेरना नहीं पड़ रहा है। जब स्वाध्यायके लिए किसी निश्चित ग्रन्थको खोलता हूँ तो उसके अर्थमें और भावमें मन लग जाता है। प्रार्थना करते समय निर्धारित पद्धतिमें यान्त्रिक तल्लीनता आ जाती है। पर चिन्तनके समयकी सघनता जितनी बढ़ गयी है, उतना ही आत्ममंथन भी अधिक हो गया है। कल दूसरेके सहारे आगे बढ़नेका उपक्रम कर रहा था, उसमें अटपटाहट थी, शिथिलता थी, अनिश्चय और संशय भी था, पर आज प्रवाह-सा उमड़ रहा है; मन संशय, सन्देह, अनास्थासे उद्वेलित हो उठा है। कल भी बाँधको रोकनेका निरन्तर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रयत्न करना पड़ रहा था, पर आज बाँध जैसे टूट गया है और ऊँची उत्ताल तरंगोंमें सैलाव फैल गया है, धारामें बड़ा तीखा प्रवेग है।

घाटीमें घूमने गया हूँ और अन्दर डूबा हुआ हूँ। आदमीने धर्म और साधनाके न जाने कितने मार्ग आविष्कृत किये हैं, पर आज भी वह वहीं हैं, जहाँसे उसने प्रारम्भ किया था। कह सकते हैं कि हर प्रयत्न आदमीको आगे बढ़ता आया है और यह भी कह सकते हैं कि हर आदमी-को अपनी समस्याका समाधान अपने-आप करना होता है। लेकिन ये दोनों बातें न समान हैं और न पूरक हैं। फिर हर धर्म तो दावा करता है कि उसने आगे आनेवाले सभी मनुष्योंका अर्थात् मनुष्य-मात्रकी समस्याका समाधान प्रस्तुत किया है। लेकिन इन सबसे हुआ क्या ? न आदमीने अपने लिए कभी जूझना छोड़ा और न उसे किसीके सीधे रास्तेका सहारा ही मिला !

पर मिला भी। न जाने कितने भक्तों, सन्तों, साधकों, चिन्तकोंने अपने-अपने धर्मोंसे और अपने महापुरुषोंसे, अपने महान् ग्रन्थोंसे प्रेरणा प्राप्त की है, अपने जीवनको उनके अनुसार बनानेका प्रयत्न किया है और अपने उदात्त जीवनसे उन मार्गोंको और भी प्रशस्त किया है। यही भारतने सिद्ध किया है—गौतम, कणाद, याज्ञवल्क्य, वसुबन्धु, नागार्जुन, शंकर, रामानुज, कबीर और तुलसीके माध्यमसे और यूरोपने—सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, सन्त पीटर, सन्त पाल, सन्त अगस्टिन, सन्त थेरसा, सन्त फ्रांसिस आदिके माध्यमसे।····लेकिन इसमें कहीं बहुत बड़ा भ्रम है। या तो इन्होंने सब कुछको झेलकर अपना मार्ग स्वयं खोजा है और या अपनी मूल समस्याको ही भुला दिया है। इन्होंने अपनी समस्यासे, अपने जीवनसे ही पलायन किया है। किसी महापुरुष, किसी धर्मग्रन्थका सहारा लेकर आगे बढ़ जाना फिर भी कोई बात है, लेकिन अपने निजी अन्वेषणको उसकी व्याख्याके अन्तर्गत समाहित कर देनेका क्या अर्थ हो सकता है ? इन्होंने अपने व्यक्तिगत संघर्ष और द्वन्द्वको परम्परासे सम्बद्ध कर आगे आनेवालोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संघर्षको सुगम बनानेके बजाय मुश्किल ही किया है। हर आगे आनेवाले अन्वेषकको पहले विद्रोह कर इन परम्पराओंको तोड़ना जो पड़ता है !

फिर यह ऐसा क्यों है कि हर अन्वेषकने सारा संघर्ष झेलनेका श्रम करके और समस्त आत्ममन्थन सहकर भी दूसरोंके लिए, आगे आनेवाले पथ-खोजियोंके लिए एक निश्चित परम्परा, एक व्यवस्था छोड़ जानेकी भूल की है। हर परम्परा रूढ़ि होकर जड़ बन जाती है, हर व्यवस्था दृढ़ होकर बन्धन हो जाती है। फिर हर आगे आनेवालेके सामने परम्पराओंकी भव्यता, व्यवस्थाओंकी गरिमा कौंध-कौंधकर उसकी दृष्टिको चमत्कृत करती रहती है। हर क्रान्तिकारी विचारकने, द्रष्टाने बहुत आत्ममन्थनके बाद, बहुत पीड़ा और व्यथा झेलनेके बाद अपना सवाल हल किया है, अपनी दृष्टि पायी है। पर हल पा लेनेके बाद, दृष्टि पा लेनेके बाद, उसने दूसरोंकी समस्याको हल करनेका दायित्व क्यों ओढ़ लिया ? दूसरोंको दृष्टि देनेकी मसीहाई क्योंस्वीकार कर ली है ? क्यों नहीं यह ऐसा है कि हर व्यक्तिको अपनी समस्याका हल अपने-आप ही ढूँढ़ना होगा ? अपनी दृष्टि आदमीकी आप ही मिलती है, यह बात क्यों नहीं आई समझमें बार-बार वही घटित होनेपर भी।

आदमी अकेला नहीं है, वह दूसरोंको छोड़ नहीं पाया है। वह अपनी मुक्तिसे सन्तुष्ट नहीं होता। वह दूसरोंकी मुक्तिका मार्ग प्रशस्त भी करना चाहता है। शायद इसीलिए वह मुक्तिकामी होकर सन्तुष्ट नहीं रहा, वह मुक्तिदाता भी होता है। वह अपने झेलनेमें, अपनी वेदनामें, अपने संघर्षमें, अपने क्रास ढोनेमें दूसरोंको ग्रहण कर लेना चाहता है। दूसरोंको अपने ऊपर ले लेना चाहता है। उसकी करुणा, उसकी दया-मया ही इन मार्गोंके प्रवर्तनकी प्रेरणा है। लेकिन यही दूसरोंके बन्धनका कारण भी हो जायगी, क्या यह कल्पना उसके मनमें कभी उठी है ?

ये लोग, ये भेड़ें, ये जन और इन गतानुगतिकोंके लिए क्या कोई समस्या है ? शायद इनके लिए परम्पराका, व्यवस्थाका महत्त्व है। शायद इन्हींको परम्पराओंकी भव्यता, व्यवस्थाओंकी गरिमा आकर्षित करती है। पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनके लिए सत्य, खोज, अन्वेषण, उपलब्धि क्या है ? समस्या नहीं है, तो उसके हलका संघर्ष, और उसे झेलनेकी अनुभूतिका क्या अर्थ होगा ? दूसरेके सत्यको कोई किस प्रकार ग्रहण कर पाता है, दूसरेकी दृष्टि कोई किस तरह पा सकेगा ? यही कारण है कि सत्यको, दृष्टिको, हलको विशाल जड़ आकार दिया जाता है, उनको नाना उपकरणोंसे आकर्षक तथा चमत्कृत बनाया जाता है। मार्गका अनुसरण करनेवाले मिरेकिलोंके चमत्कारके सहारे आगे बढ़ते हैं। यही तो, यूरोप और भारतके सन्तोंके जीवनमें सत्यसे अधिक उनकी अद्भुत ईश्वरीय शक्तिपर बल दिया जाता है। और यही नहीं इन मिरेकिलोंके सत्यासत्यपर विवाद चलता है। सत्य अर्थात् घटित अघटितकी दृष्टिसे। सत्यको ग्रहण करनेकी यह दृष्टि कितनी संकुचित है। इस भौतिक शक्तियोंके अजस्र पुंज विश्वके घटित अघटितके तथ्यातथ्य निरूपणसे किस समस्याका समाधान होगा ? इस प्रकार मनुष्यके जीवनकी कौन-सी समस्या आज तक हल हो सकी है ?

नाश्ताके समय आज अधिक डूबा रहा हूँ, बुल्केजीने इस ओर ध्यान दिया है और शायद वह समझ रहे हैं कि मैं आत्म-चिन्तनमें एकाग्र हो सका हूँ। उनको इसका क्या अनुभव हो सकता है कि मैं कितने आत्ममन्थनकी स्थितिसे गुज़र रहा हूँ। वह एक प्रकारसे प्रसन्न हैं कि इस प्रकार अधिक प्रकृतिस्थ हो सकूँगा, अधिक मानसिक शान्ति पा सकूँगा। मेरा ध्यान आज बरबस इस आश्रमकी ओर जा रहा है। यहाँ अनेक बूढ़े विदेशी फ़ादर लगभग अवकाशका जीवन बिता रहे हैं। इनके आन्तरिक सन्तोषसे मैं सदा प्रभावित हुआ हूँ कि जीवनभर अपने विश्वासके मार्गपर चलकर ये शान्तिपूर्वक अपने अन्तकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ऐसा नहीं कि मुझे उनके जीवनके प्रति पहले कभी जिज्ञासा उठी न हो, पर आज मनमें एक संशय उठा है। क्या यह इनका जीवन वास्तवमें अनुभूत, उपलब्ध जीवन है ? क्या वास्तवमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उन्होंने जीवनमें कोई हल प्राप्त किया है ? क्या सचमुच इन्होंने कुछ खोजा या पाया है ? क्या इनके सन्तोषमें अपना क्रास स्वयं उठानेकी मुक्ति है ?

स्वाध्याय और प्रार्थनाके बाद मरियमके बाग़ीचामें आत्मचिन्तनके लिए घूम रहा हूँ, पर पुनः आत्ममन्थन शुरू हो जाता है। आजका सारा स्वाध्याय मुझे अपनी विचार-श्रृंखलामें बाँध नहीं पा रहा है। अपनी भावनामें बहा नहीं पाता, जैसे लगता है यह सब मुझे जितना डूबकर अन्दर पैठना चाहता हूँ, उतना ही मथ रहा है। इमीटेशन ऑफ़ क्राइस्ट और गीता, ईशोपनिषद् और सेवियर कहीं मुझे बाँध नहीं पाते। उनका सन्देश, विचार, चिन्तन और उनकी दृष्टि आज मुझे किसी स्तरपर उद्वेलित ही करती है। यह कर्म, यह समर्पण, यह दूसरेका जीवन जीना, यह अपनेको छोड़ना, यह अमरता और क्षणिक जीवनसे शाश्वत जीवनका परिवर्तन ! क्या है यह सब ? इधर मनमें सन्देहने कई बार जन्म लिया है, पर आज जैसा विद्रोह कभी क्या जगा है ? यह जो मनमें घुमड़ रहा है, मात्र संशय नहीं हो सकता ! यह विद्रोह जैसा निश्चयात्मक है।

यह समर्पित जीवन है, यह जिया नहीं गया। अपना जीवन किसीके सहारेपर छोड़ दिया गया। किसीको अपना मुक्तिदाता स्वीकार कर लिया गया। यह जीवनकी क्या पद्धति है ? अपनेको इतिहासके किसी जड़ क्षणसे बाँध देना जैसा ही है। अतीतका हर क्षण वर्तमानके लिए एक प्रतीक हो सकता है, इससे अधिक कुछ नहीं। पर यह प्रतीकको इतिहासके यथार्थसे जोड़कर वर्तमान जीवनके यथार्थको उसपर उत्सर्ग कर देना क्या है ? आज यह कह देना, या यह दावा पेश करना, या यह सिद्ध कर देना क्या मानी रखता है कि अमुक घटना इतिहास है, इतिहासका यथार्थ है। फिर इसी-लिए आज वह हमारे जीवनका सत्य हो सकती है, गतका कोई सत्य हमारा सत्य किस प्रकार है या हो सकता है। हमको उस घटित सत्यका अनुकरण करते रहना है और उसीसे हम सार्थक और उपलब्ध हो सकेंगे, यह कैसी बात है ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर्म और फल ! प्रभुको समर्पित हों ! पाप, ताप, बन्धन, मृत्यु, क्षण, यह सब समर्पित हो, क्योंकि अपने प्रभुके साथ महत्ताका अनुभव करना है, मुक्तिका अनुभव करना है, शाश्वत अमरताका अनुभव करना है ! प्रभुके साथ जीनेके लिए अपनेको विस्मृत करना होगा, मायाको, मोहको, ममताको। फिर अपना जीवन क्या होगा ? इस जीवनका क्या होगा ? मृत्युका यह भय कैसा है कि हम जीनेको अस्वीकार कर रहे हैं।....मैं सोचता जा रहा हूँ और अपने-आप ही जैसे उमड़ता चला आ रहा है यह सन्तोंका जीवन, यह अस्वीकरणका जीवन ! लेकिन यह सब कुछका स्वीकार भी हो सकता है। प्रभुके माध्यमसे सब कुछ जीवनका वापस मिल भी सकता है। पर वह दुःखहीन, पापहीन, मोहहीन, ममताहीन कैसा वेस्वाद जीवन होगा।

भोजनके बादका क्रम चलता रहा—आराम, स्वाध्याय, प्रार्थना, सब यथावत् पूर्व निश्चयके अनुसार। इस सबके बीच एक बार फिर मैंने प्रयत्न किया है कि अपने उद्दाम प्रवेगको नियन्त्रित कर सकूँ, मनको व्यवस्थित कर सकूँ—भगवान्‌ने पार्थसे कहा था कि यह मन बड़ा चंचल है, उसको रोकना होगा, नियन्त्रित करना ही होगा, इन्द्रियाँ इसीके माध्यमसे....। पर अब जब फिर टहल रहा हूँ, तो फिर विद्रोह ! इस बार जान-बूझकर बाग़ीचामें न जाकर आश्रमकी सीमा-रेखाके सहारे चलनेवाली सड़कपर आ गया हूँ। लाल सड़क रामबाँसकी कटीली ऊँची झाड़ोंके सहारे चल रही है। बाईं ओर आमके बाग़ हैं और आगे चलकर बड़ा-सा तालाब है।

सर्जनकी प्रक्रियाके बिना आदमीका महत्त्व क्या होगा ? कहा गया है—आदमी ईश्वरका प्रतिरूप है, इमेज है। ईश्वर रचनामें अपनी सार्थकता ढूँढ़ता है, फिर आदमी ! वह भी रचनामें ही सार्थक होगा और यह सर्जन ही उसकी उपलब्धि होगी। लगता है, जब वह प्रवाहित होता है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुक्त रहता है, उपभोग और कर्ममें जीता है तभी उसकी यह सर्जन शक्ति सक्रिय भी होती है। ये बन्धन, यह मुक्ति, यह समर्पण, यह अमरता उसकी इसी शक्तिको सबसे अधिक विजड़ित करती है। सर्जन मौलिक होता है और श्रद्धा—आस्था अनुकरणको जन्म देती है। शायद यही कारण है कि सर्जन विद्रोही होता है। वह परम्पराको तोड़ता है, प्रतीकोंको नया अर्थ देता है!·····फिर जब कोई नया अन्वेषी आता है तो उसके लिए ये प्रतीक पग-पगपर बन्धनका कारण बन जाते हैं। वे उसकी मौलिक सर्जन-शक्तिको कुण्ठित और बाधित करते हैं। उनका अपना मोह और आकर्षण उसे घेरता है। लेकिन इन आकर्षणोंसे वह अपनेको मुक्त कर इन प्रतीकोंके परम्परागत रूपको तोड़ता है, उनको विघटित करता है और फिर उनको नये सन्दर्भमें, नये अर्थबोधके साथ प्रयुक्त कर अपनी रचना करता है, अपनी समस्याका हल प्राप्त करता है।····यह ऐसा ही होता है, हुआ है। लेकिन अपनी उपलब्धिको अनेक बार परम्परासे बाँध देनेका मोह उसे क्यों होता है? और या अपने ही अन्वेषणको स्थापित मूल्यके रूपमें परम्परा बना जानेका लोभ उसे क्यों होता है?

भोजन करनेके बाद बुल्केजीके साथ टहलने निकलता हूँ। प्रकृतिके शान्त वातावरणमें और एक साधु प्रकृति आत्मीयके सामीप्यमें भी मेरा मन अशान्त है, उद्वेलित है। यह मेरे समीप जीवन है, अनन्त सम्भावनाओंका, अनेक निहित शक्तिओंका! जिसमें ममता है, संवेदन है, भावना है, कल्पना है, मौलिकता है और सर्जनका अजस्र स्फुरण भी। पर वह समर्पित है, उसकी गति निर्धारित है, उसकी सारी सम्भावना ऐसी नियोजित है कि उसकी सारी उपलब्धि इतिहासके सत्यमें समाहित हो जायगी। एक प्रतीकको यथार्थ सिद्ध करनेमें यह सारा जीवन चुक जायगा। जीवन चुकने, बीतनेके लिए नहीं है। बीतना यथार्थ हो सकता है, सत्य नहीं। सत्य संवेदित होकर, सृष्टिके रूपमें, उपलब्धिके रूपमें ही आता है। वह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीवनको गरिमामण्डित, महिमामय और अमृतमय नहीं बनाता, वह तो केवल उसे अर्थवान् कर देता है।

हर जीवन अपना है, उसको किसीको दिया कैसे जा सकता है। यह देना उसे अस्वीकार करने जैसा है। क्यों बार-बार जीवनको सिद्ध और सार्थक करनेके भ्रममें अस्वीकारा गया है? और ऐसा कई बार उन्होंने भी किया है जिन्होंने जीवनको पानेके लिए कर्मका सारा संघर्ष स्वयं ही झेला है, जिन्होंने अपना क्रास स्वयं ढोया है। यह क्या उनका अपना अन्ततः अहंकार है! या अपने संघर्षोंके प्रति आतंककी भावना है! मैंने झेला है भयानक संघर्ष! मैंने असह्य पीड़ा, कष्ट, वेदना झेली हैं और तब पाया है यह सत्य! फिर क्यों न इस सत्यको औरोंके लिए सुगम बनाया जाय, क्यों न औरोंको रास्ता दिखा दिया जाय? यही भ्रम सिद्ध होता है। इससे अधिक इस रास्तेपर कोई भी आगे नहीं ले जा सकेगा कि वह संकेत कर दे, अपने संघर्षकी प्रक्रिया दूसरोंको बता दे और घोषित कर दे कि अन्ततः हर आदमीको अपनी समस्याका सामना खुद करना होगा, बिना जूझे कोई इसे हल नहीं कर सकता। मिलेगा तो वह अपना नहीं होगा, दूसरेका उतारन हम ओढ़ सकते हैं संवेदित नहीं कर सकते।

सोनेके पहले प्रार्थना करने बैठा हूँ। लेकिन इस प्रकार कुछ दुहराते रहना यान्त्रिक लग रहा है। मनमें दिनभर जो विद्रोह चलता रहा है उसने ऊपरके बाँधनेके प्रयत्नको शिथिल कर दिया है। जब मनको बाँधकर शब्द-अर्थके एक निश्चित शृंखला-क्रममें डालना चाहता हूँ, तो वह उस घेरेको तोड़-फोड़कर निकल भागता है।....सोच रहा हूँ—यह जीवन है तो पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म, लाभालाभ, मोह-त्याग, अहंकार-उदारता, क्रूरता-करुणा, ममता-द्वेष सभीको मानना होगा, सबको मानकर चलना होगा। निरन्तर पाप स्वीकार करते रहनेसे, मद-मोह-लोभ-ईर्ष्या-द्वेषसे भयभीत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और आतङ्कित रहनेसे क्या सारा जीवन निषेधात्मक नहीं हो जाता ? इन सबका निषेध करनेमें क्या प्रेम, दया, उदारता, करुणाका भी निषेध अपने-आप नहीं हो जाता ? इस भावको ग्रहण कर आत्मतत्त्वकी उपलब्धिको भारतमें इतना महत्त्व प्राप्त है। आत्मा निर्विकार, सभी भावाभावोंसे मुक्त तत्त्व है।

यहाँ हम वहीं आ जाते हैं जहाँ मृत्यु, क्षण, नाशके भयसे हम जीवनका निषेध करेंगे, शून्यका साक्षात्कार करनेको उपलब्धि मानकर चलेंगे।....आदमीको जीवन मिला है, उसके साथ उसका सारा ताप-पाप भी उसे ग्रहण करना ही होगा ! माया-ममता, शोक-मृत्यु, मोह-अहंकार, इन सबको भी हमें अपनाना होगा। जब पूरा जीवन भोगनेका सवाल आता है, तब कुछ भी त्यागनेसे उसकी पूर्णता खण्डित होती है। किसीका या तो पूरा ग्रहण या पूरा त्याग ही सम्भव है।....यह भय है ही क्यों ? फिर क्या इनसे कोई बचा भी है ? कोई ऐसा भी हुआ है जो मरा न हो, जिसको शोक हुआ ही न हो ? मान लेनेपर भी आदमी भटकता रहा है न जाने किस अमर तत्त्वकी खोजमें ! लेकिन यह पलायन है, अस्वीकरण है। जो क्षणको भोगेगा नहीं वह जीवनको क्या जान सकेगा ? जो मृत्युका वरण नहीं करेगा, वह जिएगा कैसे ? जो दुःख-को, शोकको, पीड़ाको, वेदनाको झेलेगा नहीं, वह संवेदित करेगा क्या ? जो पाप, ताप, वासना, इच्छा और आकांक्षाओंसे उद्वेलित होगा नहीं वह जीवनको अर्थ दे नहीं सकेगा। और न जीवनमें कोई हल पा सकेगा।

जीवनकी इससे बड़ी माँग क्या हो सकती है आदमी जिए।....मैं जीना चाहता हूँ, मैं जीवनको भोगना चाहता हूँ, उसके सुख-दुःख, उसके पाप-ताप, लाभालाभ, जयाजय सभीको, सभीको....मेरे लिए सब कुछ है, सब भोग्य है,....ज्वाला मैं सहूँगा, दाह मैं सहूँगा, वेदना....जो जीवन है वह मेरा है, मैं सबको ग्रहण करूँगा,। मुझे नींद आ रही है। रोशनी गये देर हो चुकी है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आज तीसरा दिन है। कल की हलचल आज अपने-आप थम रही है। कलका मन्थन धीरे-धीरे अपने-आप बिखरकर शान्त हो रहा है। अब प्रयत्नकी ज़रूरत नहीं रही। लग रहा है, जो तूफ़ान चलता रहा है, अब थमता जा रहा है, प्रकृति स्वतः स्थिर हो रही है। जिसके लिए कल अथक परिश्रम किया था, वह आज सहज ही घटित हो रहा है, मैं स्वयं ही चकित हूँ। सुबह जबसे अपना दैनिक कार्य-क्रम शुरू किया है, अनुभव करता हूँ, अन्दर कुछ घटित हुआ है और मैं बदला हुआ हूँ। रातके-रात कोई बदल सकता है, यह विचित्र अनुभव है। वैसे इस घाटीमें बिताये हुए दिनोंमें बराबर आभासित होता रहा है कि मेरे भीतर कहीं कुछ घटित हो रहा है, जो मुझे आमूल कहींसे बदल-सा रहा है। पर आज सुबहसे जो अनुभव कर रहा हूँ, वह उससे बिलकुल भिन्न है।

घाटीके अन्दर घूमता रहता हूँ। आज न स्वयं सोचनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, और न मनमें स्वतः कोई उमड़न ही है। जो मनमें चल रहा है, जैसे मात्र उसका तटस्थ द्रष्टा हूँ ''''आन्तरिक संघर्ष करनेवालोंने पुराने प्रतीकोंको तोड़कर नई अर्थवत्तासे युक्त किया है।''''क्राइस्ट वास्तवमें किसीको कुछ नहीं सिखाते, केवल उसके सामने प्रस्तुत किये जानेसे कोई कुछ बन जाता है। और हर व्यक्तिको उसके सामने प्रस्तुत होना है, यह पूर्व निश्चित है। कमसे कम एक बार हर आदमीको अपने जीवनमें ईसाके साथ चलना होगा।''''यह जीवन ही है जिससे सामना होनेसे हम बच नहीं सकते, जीवनमें हर व्यक्तिको अपने-आपको सार्थक करनेका अवसर मिलता ही है।''''तुमने चाहना की है मनुष्यके स्वतन्त्र प्रेमकी, मुक्त प्रेमकी, जिससे वह तुम्हारा अनुकरण मुक्त भावसे कर सके। पर इस अनुकरणमें वह तुम्हारे आकर्षणसे खिंचा हुआ और तुम्हारा बन्दी है, यह क्यों तुम भूल जाते हो। आजसे प्राचीन रूढ़िवादी क़ानूनका पालन करनेके स्थानपर, केवल तुम्हारी प्रतिछविको मार्गप्रदर्शनके लिए सामने रख कर मनुष्य अपने स्वाधीन हृदयसे अच्छे-बुरेका निर्णय करे। तुम क्राससे इस कारण नीचे उतरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं थे कि लोग कहेंगे—"क्राससे नीचे आओ, हम विश्वास करेंगे कि तुम प्रभु हो।" और न इसलिए ही कि तुम मिरेकिलसे आदमीको गुलाम बनाओगे, तुमने स्वाधीन इच्छासे प्राप्त आस्थाकी मात्र कामना की। तुमने मुक्त प्रेमकी कामना की, सेवकके निम्न उल्लासकी नहीं।'

'क्रूसित सत्य किसीको विवश नहीं करता, और न किसीको आतंकित करता है, यह तो स्वाधीन इच्छाकी स्वीकृति है, और इसपर आस्था करना स्वाधीन इच्छाका सवाल है। स्वाधीन आत्माओंके लिए ही इस सत्यका प्रत्याख्यान होता है। शक्तिसे ईश्वरीय सत्यकी विजय आदमीकी आत्मिक स्वतन्त्रतासे संवादी नहीं हो सकेगी; ईसाकी कथाका रहस्य आदमीकी स्वतन्त्रताका ही रहस्य है। जब-जब आदमीने क्रूसित सत्यको मानवीय इतिहासमें प्रतिरोधक सत्यके रूपमें बदलनेकी कोशिश की, उसने क्राइस्टके मौलिक सिद्धान्तके प्रति विश्वासघात किया है।'

'मैं एक स्वप्न देख रहा हूँ—एक लकड़ीकी नीची छतके चर्चमें, लगभग लड़केकी उम्रका युवक है। छोटी मोमबत्तियाँ लाल घेरोंमें सन्तोंके पुराने चित्रोंके सामने चमक रही हैं। चर्चके अन्दर धुँधले अन्धकारमें हरएक अकिंचन लौके चारो ओर रंगीन रोशनीका वृत्त है।....चारो ओर वसन्तकी बयारमें पकी हुई गेहूँकी बालोंमें उठती हुई तरंगोंके समान एकत्र किसानोंकी भीड़ उमड़ रही है।....और एकाएक पीछेसे कोई व्यक्ति मेरे बग़लमें आकर खड़ा हो जाता है। मैं उसकी ओर मुड़ा नहीं, पर अकस्मात् अनुभव करता हूँ यह क्राइस्ट है। संवेग, कौतुक, आतंक मुझे आक्रान्त कर लेता है, मैं कोशिश करके अपने बग़लके व्यक्तिको देखता हूँ।....यह तो इसका चेहरा सभी अन्य लोगोंके चेहरों जैसा ही है। आँखें किंचित् ऊपरकी ओर शान्त तथा साभिप्राय देख रही हैं। ओंठ बन्द हैं, पर सम्पीड़ित नहीं, ऊपरका नीचेवालेपर टिका भर है, छोटी-सी दाढ़ी दो भागोंमें विभक्त है। हाथ स्थिर और बँधे हुए हैं, और उसके कपड़े दूसरों जैसे हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'—यह कैसा क्राइस्ट है ? ऐसा साधारण, साधारण आदमी ? ऐसा कदापि नहीं हो सकता ।'' मैं सोचता हूँ । मैं मुड़ गया, पर मुश्किलसे आँखें फेरी थीं कि पुनः मैंने अनुभव किया कि मेरे पास खड़ा हुआ व्यक्ति क्राइस्ट के अलावा कोई दूसरा हो नहीं सकता ।····मैं फिर अपनेआप समझनेकी कोशिश करता हूँ, और फिर वही औरोंके समान चेहरा····। अकस्मात् मेरा मन उदास हो गया, मैं आत्मलीन हो गया । और केवल तभी मैंने अनुभव किया—क्राइस्टका चेहरा सभी दूसरे लोगोंके चेहरे जैसा है ।'

मैं उनकी बात सोच रहा हूँ जिन्होंने क्राइस्टको प्रतीक माना है, एक जीवित प्रतीक बनाया है । उसके माध्यमसे अपनेको स्वीकारा है, अपने संघर्षको अर्थ देनेका प्रयत्न किया है । उनके लिए आस्था, विश्वास, श्रद्धा जीवनकी सक्रिय उपलब्धिका सवाल है और इसीलिए उनका अपना व्यक्तिगत सवाल है । कहींसे पाया जा सकता है, ग्रहण किया जा सकता है, अनुकरणसे सीखा जा सकता है, इन्होंने नहीं माना है । शायद यही वह आधार है जिसपर आगे बढ़ा जा सकता है, मेरे लिए बढ़ना आसान हो सके ।*

वापस लौटते हुए घाटीके बीचमें आ गया हूँ । अपनी मनःस्थितिमें पुनः सहज होता जा रहा हूँ । पिछले दो दिनसे जैसे घाटीको देखा ही न हो । आकस्मिक रूपसे मेरे ध्यानमें हरी घाटीका सारा विस्तार आ गया है, मैं अपने-आपको रोकता समेटता नहीं हूँ, फैलने-बिखरने देता हूँ । मुझे अनुभव हो रहा है, जैसे घाटी पिछले तीन-चार सप्ताहसे मेरे अस्तित्वके साथ रही है, उसने जो अनुभूति तथा संवेदन दिया है, वह मेरे व्यक्तित्वका अंश हो गया है । कुछ क्षणोंके लिए इस घाटीका सारा पूर्व घटित मेरे

*** यहाँ टालस्टाय, दास्तेवस्की, आस्कर वाइल्ड, विक्टर ह्यूगो, वार्दीव तथा तुर्गनेव जैसे कई विचारकों तथा साहित्यिकोंके विचारोंको मुक्त रूपमें स्वीकार किया गया है ।**

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अस्तित्वमें संवेदित और व्यंजित हो उठता है। मुझे लगता है, मैं फिर उसी अस्तित्वसे सम्बद्ध होकर सहज स्थितिमें आ गया हूँ।

मनका उल्लास वापस आ रहा है, बुल्केजीने नाश्ताके समय इसको समझ लिया है। उनके अपने उल्लाससे यह व्यंजित है। मैं प्रार्थना करता हूँ और लगता है केवल मौन हूँ, मनसे भी। किसी प्रकारके शब्द कहीं मेरे अस्तित्वमें ध्वनित नहीं होते, कोई अर्थ मेरे लिए बोधका विषय रह ही नहीं गया है। मैं केवल अनुभव कर रहा हूँ, अपने होनेका। मैं हूँ जो प्रार्थना कर रहा हूँ। मैं हूँ जो शब्दोंके माध्यमसे, उनके अर्थकी व्यंजनासे कुछ अपने इस होनेकी विशिष्टताको ही पकड़नेका उपक्रम कर रहा हूँ। क्योंकि हर शब्द मेरे अस्तित्वका अभिन्न अंग है, उसका अर्थ मेरे इसी अस्तित्वके सन्दर्भमें अनुभूत है, यह सारा शब्दार्थ मेरा है, मेरे हीं इस क्षणके जीवनका है। फिर प्रभु मैं हूँ, मैं ही हूँ प्रार्थना, भक्ति, समर्पण। मैं हूँ, केवल और शुद्ध मैं हूँ।

स्वाध्यायमें लगा हूँ। पुस्तकोंकी पंक्तियोंके ऊपर दृष्टि तैरती रहती है, पर मन इनमें नहीं है।....'क्राइस्टको ग्रहण कैसे किया जाय—ऐ परिश्रम करनेवालो और पीड़ा झेलनेवालो, मेरी शरणमें आओ, मैं तुमको विश्रान्त करूँगा। प्रभुका सौष्ठव और प्रेम—जितनी बार तुम इस रहस्यानुभवको दुहराते हो या क्राइस्टके प्रतीकको ग्रहण करते हो, उतनी ही बार तुम अपनी मुक्तिका कार्य पूरा करते हो और ईसाके गुणोंके साझीदार होते हो।....ओ मेरे प्रभु, मेरे मुक्तिदाता, प्रायः तुम्हारा संसर्ग पा सकूँ जिससे तुम्हारे इस रहस्यमें मेरा प्रेम और भक्ति तुम्हारे प्रति बढ़ सके।.... अपने-आपको प्रभुके प्रति समर्पित करना है—अपने पापोंकी आन्तरिक ग्लानि है, उनके लिए जीवनभर प्रायश्चित्त करनेको तत्पर हूँ, उनके लिए कष्ट भोगनेके लिए तत्पर हूँ। मुझे माफ़ करो मेरे प्रभु! अपने प्रेम और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पवित्र नामके लिए इन्हें क्षमा करो। देखो मैं तुम्हारी दयाके आधीन हूँ, और तुम्हारे भरोसे अपनेको छोड़ता हूँ।....मनुष्यको क्राइस्टका अकिंचन अनुवर्ती होना है—जो उसके ऐश्वर्यका खोजी है, वह उसकी गरिमासे अविभूत होगा....सभी तर्क और सहज अन्वेषण आस्थाके बादकी वस्तुएँ हैं। ईश्वर परात्पर, अपरिमित और शाश्वत शक्तिसे पृथ्वी और स्वर्गमें महान् और अतर्कित कार्य करता है।'

ऐसे ही चल रहा है, कोई भाव मनको आन्दोलित नहीं करता। ऐसा जान पड़ता है मैं तटस्थ हूँ, इन कल्पनाओं, भावनाओं, संवेगोंका सन्दर्भ भिन्न है और इनसे देश-कालकी अनन्त दूरीमें अवस्थित हूँ। इनका संस्कार मेरा नहीं है, इनका भाव-बोध मेरा अपना नहीं है। उसी तरह पढ़ रहा हूँ, जैसे किसी युगका इतिहास पढ़ता हूँ।—**'ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्'**, ऐसे संसार-वृक्षको जो जानता है, वही सच्चा ज्ञाता है। बिना मोह, मान, आसक्तिके, आकांक्षाओंको जीतकर सुख-:दुखके द्वन्द्वसे आदमी मुक्त हो जाता है....अपने-अपने कर्ममें लगा हुआ व्यक्ति सिद्धिको प्राप्त होता है। अपने कर्मोंसे उसीकी पूजा करके वह सिद्धि प्राप्त करता है। दोषयुक्त अपने सहज कर्मको, हे कौन्तेय, नहीं त्यागना चाहिए।....आसक्ति-रहित व्यक्ति स्पृहाहीन होकर निष्कर्म सिद्धिको पा जाता है।....तू अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध, संग्रहको त्यागकर, ममता छोड़कर शान्त चित्त-वाला हो। मेरे परायण होकर निष्काम भावसे कर्म करनेवाला सम्पूर्ण कर्मोंमें स्थित होकर भी शाश्वत पदका अधिकारी होता है।....हे अर्जुन, तू सब कर्मोंको मुझे अर्पित कर, मेरे परायण होकर समत्व बुद्धिसे निष्काम कर्मयोगमें संलग्न हो। अतः—**'तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।'**

अनवरत पढ़ रहा हूँ, जैसे चलता चला जा रहा हूँ। मैं ऐसे देशों और प्रदेशों, युगों और कालोंसे गुज़रता जा रहा हूँ, जो हमारे इतिहासके शानदार मार्ग रहे हैं, जिनपर मानवीय इतिहास वैभवके साथ चलता आया है। परन्तु यह सब इतिहास है, गत है। मेरे जीवनका यह अंग नहीं है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारे देश-कालसे इसका सम्बन्ध नहीं है। हम जहाँसे गुज़रकर आगे यहाँ आ गये हैं, वही तो हमारा इतिहास है। वह है ही नहीं, वह रहा ही नहीं, यह कौन कहेगा? आज हमारे वर्तमानमें वह वैसा नहीं है, और जो है वह हममें ही समाहित है। आज जो भी अर्थवान् है, वह हममें है, हमारा है। हमारे अस्तित्वको छोड़कर इतिहास ठण्डा और जड़ है।···· पढ़ता जा रहा हूँ और लगता है इस सारी यात्रामें असम्पृक्त हूँ, तटस्थ हूँ।

'····अन्ततः उन्होंने वह मज़ाक समाप्त किया और नारंगी पोशाक उतारकर उसे अपने कपड़े पहिना दिये। और फिर वे उसको क्रूसित करनेके लिए ले चले। और ईसा अपना क्रास स्वयं लेकर चल पड़े उस स्थानके लिए जिसको गोलगोथा कहा जाता है, जिसका अर्थ होता है खोपड़ीका स्थल।····ईसाने अपना पीछा करती हुई रोती-चिल्लाती भीड़से मुड़कर कहा—'यह मेरे लिए तुम्हें नहीं रोना है, वरन् ए ज़ेरूसलमकी पुत्रियो, तुमको अपने और अपनी सन्तानोंके लिए रोना है।····' मैं पढ़ रहा हूँ, अपने इतिहासके रास्तोंसे गुज़रता जा रहा हूँ।

बीच-बीचमें चिन्तन चल रहा है। माता मरियमके बाग़ीचामें टहल रहा हूँ, वृक्षोंकी शाखाएँ हिल झीम रही हैं। लाल और नीली लिली खिलीं हैं। लतरोंमें छोटे नीले फूल छाये हुए हैं। मूर्ति सजीव लगती है, ईसाकी जन्मकथा अधिक संवेदित लगती है। क्यों वह पढ़ना लग रहा था जैसे सूने इतिहाससे गुज़रना हो, और यहाँ यह मूर्त्ति····। यह सब मेरे अस्तित्वसे सम्बद्ध हो गया है, उसी इतिहासको जब अपने अंशमें संवेदित पाता हूँ, तब वह जीवित और सत्य हो जाता है।

एहसास होता है समझ रहा हूँ। इतिहाससे गुज़रकर, अनेकानेक खोजियों और अन्वेषकोंके रास्तोंका अनुशीलन कर अब अपने रास्तेपर आ लगा हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यह भटकना क्या था ? यह भी जीवनकी एक ज्वलन्त कामना ही तो ! फिर इस भटकावने बार-बार अपनेपनको समझनेमें मदद दी है। भटकना भी मेरा है, वह भी मेरे साथ अर्थवान् है। अपने रास्तेपर आकर मुझे लगा है कि मैं किसीसे न पा सकूँगा, और न किसीको दे सकूँगा। मेरी समस्या मात्र जीनेकी है, इस जीनेके आगे-पीछे मेरे लिए असम्बद्ध है, इसीलिए असंगत।

तालके बाँधपर बने हुए पुलपर बैठा हुआ पानीके घलघल नादको सुन रहा हूँ और दूसरी ओर पानी धानके सुआपंखी खेतोंकी लहराती तरंगोंके बीच बहता हुआ विलीन हो जाता है। यह सब केवल देख रहा हूँ और अनुभवमें चिन्तनकी शृंखलाएँ प्रवाहित होकर खोई जा रही हैं। इतिहासका क्रास एक प्रतीक है, अपना क्रास अपने-आप उठाना ही होगा। आजका यह क्रास मेरा होगा, महिमामयी आत्माको ग्रहण करनेका प्रतीक भी नहीं, सीधे-साधे जीवनमें धारण करनेके अर्थमें। इसमें पाप-ताप, सुख-दुःख, काम-वासना, सब कुछ तो समाहित है, इनको धारणकर जीवन अर्थवान् होगा। कर्म हमारा है, उसका फल भी हमारा है। हम न स्वकर्मको छोड़ सकते हैं और न उसके फलको। और आसक्ति ! विना आसक्तिके कैसे चल सकेगा। आसक्ति भी मेरी है, मैं उसे भी जीवनके साथ धारण कर लूँगा।

बुल्के भाईके साथ रातके भोजनके बाद टहलने निकला हूँ। वह मौन हैं। अन्दरसे भी शान्त लग रहे हैं। मैं ऊपरसे मौन होकर भी अन्दर ही अन्दर मुखरित हूँ। मैं वृक्षोंकी सघन काली छायाओंमें और दूरवर्ती पहाड़ियोंके धूमिल छायाभासोंमें खिंच जाता हूँ और क्षणभरके लिए वे मेरे अनुभूत हैं। ऐसे ही, ठीक ऐसे ही इतिहास भी हमारे अनुभूत क्षणमें समाहित हो सकता है।....यह अनासक्त कर्म, क्या अर्थ है गीताकारका ? आज यह मेरे लिए कर्मकी क्षणवर्तिनी स्थिति है, कर्मका प्रवाह अपनी स्थितिमें जब क्षणके रूपमें अनुभूत होता है, तभी यह तटस्थताकी दृष्टि मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या यही अनासक्ति नहीं है। स्व कर्म और प्रकृत कर्मसे मुक्ति नहीं मिल सकती, इसकी घोषणा उस अन्वेषकने भी की है। फिर जीवनका सम्पूर्ण—उसकी आशा-निराशा, दुःख-सुख, लाभालाभ, जयाजय, मोह-अहंकार सभी कुछ—अपने-आप स्वीकृति पा जाता है। फलकी अभिलाषा अर्थात् भविष्य और गतके प्रति आग्रह। गतागत ही है जो वर्तमान क्षणको कर्मकी उपलब्धिसे वंचित कर फलोन्मुखी करता रहता है।....हम हैं, हमारा वर्तमान है, हमारा अस्तित्व है, और हमारे अस्तित्वका प्रत्येक क्षण है। गतागत है ही नहीं, कहाँ है फल? कैसा है वह फल कि जिसकी आकांक्षाका सवाल उठता है! हम निष्फल कर्म, क्षणकी संवेदक स्थितिमें स्थिर हैं, हमारे लिए सारे बन्धन ही मुक्ति हैं। हम सब कुछ अंगीकार कर मुक्त हैं, क्योंकि द्वन्द्वोंको हमने आत्मसात् कर लिया है, और यही हमारी द्वन्द्वातीत स्थिति है।

आज मेरे मौनव्रतका यह अन्तिम दिन है, सोकर जब उठूँगा तो इस व्रतको पार कर चुका हूँगा। अन्तिम बार वह प्रार्थना कर रहा हूँ, जो मेरे लिए इतिहास है। पर यह मेरे नये संस्कारका जैसे अंग होकर नया अर्थ ग्रहण करेगी। सोनेके पहले सोच रहा हूँ कि आदमीका जीवन अन्ततः एक सर्जन है, और उसकी सार्थक उपलब्धि भी अन्ततः सर्जन है। या फिर यह मेरा अपना स्वधर्म है, जिसका आत्मसाक्षात्कार इस आत्ममंथनके बाद हुआ है। मैं कुछ नहीं हो सकता, केवल हूँ। जीकर ही अर्थवान् हो सकूँ, शायद यही सर्जन है।

आज ११ जुलाई है। बीचके तीन दिन बीत गये है, जैसे एक युग बीत गया हो। मन उल्लसित है, आज बोल सकूँगा, बातचीत करूँगा, बुल्के भाईकी ममता पा सकूँगा। वे साथ ही रहे हैं, उतना ही समय साथ बिताया है, जितना प्रायः हम पहले बिताते थे, पर फिर भी मन असंतृप्त

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहा है। आज लग रहा है, मुक्त हो गया हूँ, प्रवाहित होनेका मौक़ा मिल गया है। अभी बुल्केजीसे मिलनेमें डेढ़ घण्टेकी देर है, पर प्रतिबन्ध हट गया है, या अवधि बीत चुकी है, अतः अब जगत्से मेरा सम्बन्ध फिर पूर्ववत् है, सहज और स्वच्छन्द। सोचता हूँ कि यह प्रतिबन्ध स्वयं ही तो लगाया था, फिर क्यों बन्धन जैसा लगने लगा था? आत्मानुशासन भी क्या बन्धन कहा जा सकता है? यह अनुशासन क्यों सहना होगा आदमीको?

नाश्ताकी मेज़पर पहुँचनेकी जितनी जल्दी आज है, उतनी पहले कभी नहीं रही। मनुष्य दूसरेका कितना साथ चाहता है, सामीप्य चाहता है, विचार-विनिमय करना चाहता है, यह आज ही अनुभव कर रहा हूँ। बुल्केजीको कमरेके सामने पाकर लगभग चिल्लाकर नमस्ते करता हूँ और वह भी उल्लसित भावसे नमस्तेका उत्तर देते हैं। वह मेरी दोनों बाँह दाबकर पूछते हैं—'तुम्हारा मौनव्रत पूरा हो गया है, मैंने प्रार्थना की है कि मेरे भइयाको शान्ति मिले और सही मार्ग मिल सके।' मैं उनके भावको समझता हूँ, और अनुभव करता हूँ कि उन्हें भी आज मिलन जैसा सुख मिल रहा है। रास्तेमें वह पूछते हैं—'व्रत ठीक चला?' मैं समझ रहा हूँ, वह क्या पूछना चाहते हैं, कह देता हूँ—'मैंने निश्चय ही कुछ पाया है, इतना कह सकता हूँ। पर यह कह सकना कठिन है कि····।' 'कि' मैंने लगभग मन ही में कहा है, और वह कह उठते हैं—'यह अनुभव पर्याप्त मानना चाहिए, ठीक समझना कठिन ही होता है।' पर कैसे कहूँ कि मैंने जो पाया है, वह शायद प्रचलितके अनुसार खोना ही है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिचयकी सीमा-रेखाएँ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: १२ :

घाटीमें रुकनेके दिनों मेरे सम्पर्कमें ऐसे व्यक्ति आते हैं, जिन्हें आत्मीयताकी परिधिमें लानेपर परिचित कहा जा सकता है। पर मैं यहाँका अतिथि हूँ, अतः सभीने मुझे अपना स्नेह दिया है, यथोचित सत्कार किया है। ब्रदर एण्टोनी और फ़ादर पोनेट इस सीमा-रेखामें मेरे अधिक निकट आ सके हैं, यही कारण है कि मैंने पिछले दिनोंके जीवनमें उनके व्यक्तित्वकी रेखाओंका स्पर्श अधिक किया है। इनके अतिरिक्त दो वृद्ध फ़ादर हैं, एक इस आश्रममें फ़ादर फ़ोर्ड और दूसरे नगरकी पैरिशमें वहाँके प्रीस्टके साथ फ़ादर काइज़र, जिनसे बात करनेका तथा जिनको अध्ययन करनेका मौक़ा मिला है। वे जीवनकी उस सीमा रेखापर पहुँच चुके हैं कि उनसे आत्मीयताका सवाल नहीं उठता। इसके अतिरिक्त एक फ़ादर ख़ज़ांची हैं और दूसरे टेकनीशियन ब्रदर हैं जिनसे केवल नमस्कारका परिचय और सम्बन्ध है, पर उनके व्यक्तित्वकी सीमा-रेखाएँ मेरे सामने तीखी और उभरी हुई हैं। एक दूसरे फ़ादर हैं जो गाँवमें रहते हैं, गेरुआ पोशाक पहनते हैं, वह बुल्केजीके निकट हैं, इस कारण उनसे मेरा परिचय भी अधिक घना हो गया है और उनकी सन्तों जैसी भंगिमा मुझे आकर्षित करती है। फ़ादर मिनिस्टर और ब्रदर क्लॉसन इस आश्रमके अनिवार्य अंग हैं, उनका उल्लेख कर चुका हूँ। और इनसे यहाँ सभीका व्यावहारिक सम्बन्ध रहना अनिवार्य है। फिर यहाँ रेक्टर हैं, सौम्य और मधुर, उनसे दो-तीन बार मिलना होता है, वह यहाँके अधिकारी हैं, वैसे वे घरके संरक्षकके रूपमें अधिक लगते हैं। यहाँ हिन्दी पढ़ानेवाले पण्डितजी भी रोचक लगते हैं, बेतियासे आया हुआ टाइपिस्ट हेलॉरिस भी मधुर है। और भी न जाने कितनी अन्य रेखाएँ सामने आती हैं और बिना स्पष्ट आकार ग्रहण किये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओझल हो जाती हैं। कोई कह सकता है कि इस शान्त आश्रममें भी इतने-इतने व्यक्तित्व और उनकी इतनी उलझी हुई सीमा-रेखाएँ ! पर आदमी शान्तिकी खोज भी आदमियोंके बीचमें ही कर सका है, जंगलोंमें भटका ही है, और अपने-आपसे घिरकर विकल ही हुआ है। पर उसने जो उपलब्ध किया, उसे लेकर आदमियोंके बीच ही वापस आना पड़ा है।

फ़ादर पोनेट बेल्जियमके उसी भागके हैं, जिससे बुल्के आते हैं अर्थात् वेस्ट फ्लैण्डर्स। भरे गोल मुखके और स्वस्थ शरीरके व्यक्ति हैं, लगता है परिश्रम करना उनके लिए कठिन नहीं है। उनके क्लीनशेव मुखपर मुसकान ऐसी जान पड़ती है, जैसे वह कोई शरारत करनेवाले हों, या उन्होंने कोई मज़ाककी बात कही हो। वह यहाँके नोविस मास्टर हैं, और उनका काम बहुत कठिन है। धर्मपिता बननेके लिए आनेवाले विद्यार्थियोंकी दो वर्षकी प्रारम्भिक शिक्षाका मुख्य भार इनपर ही है। जेज़ुइट संघमें इस शिक्षाका संघटन अधिक उच्चस्तरका है, इसी कारण कठिन भी है। इस सेमीनरीमें बहुतसे विद्यार्थी आदिवासी रहते हैं, जिनका निर्देशन और शिक्षण और भी परिश्रम साध्य है। आदिवासी विद्यार्थी अध्ययनशील और अध्यवसायी अधिक हैं, पर उनका स्तर अभी अच्छा नहीं है। अन्य विद्यार्थियोंकी समतामें उन्हें अधिक कठिन श्रम करना होता है, यह उनके चेहरोंपर भी पढ़ा जा सकता है। पर उनमें दृढ़ताकी कमी नहीं है।

फ़ादर पोनेटको अपने विद्यार्थियोंके शिक्षणके अतिरिक्त उनको धार्मिक साधनामें निर्देशन देना पड़ता है और यह कार्य अधिक संलग्नताका है, इसके लिए प्रत्येक नोविसको अलग-अलग सहायता देनी होती है। वैसे भी यह काल इनकी शिक्षामें सबसे अधिक कठिन माना जाता है, क्योंकि यही आधारभूमि है जिसपर उनकी धार्मिक शिक्षा ही नहीं, वरन् उनका साधना-का सारा जीवन प्रतिष्ठित है। साधनाके क्षेत्रकी अनेकानेक कठिनाइयोंके बीचसे उनका मार्ग प्रदर्शन अपने लिए भी बड़ी साधनाका काम है। पहले इसी कार्यको फ़ादर क्विरैनन करते थे, जो आजकल पासके एक आदिवासी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गाँवमें रहते हैं। अपनी प्रकृतिसे वह इस कार्यके बहुत अनुकूल हैं, पर उन्होंने अपनी रुचिसे सेवा तथा साधनाके लिए गाँवमें रहनेकी स्वीकृति रोमसे अर्थात् संघके सुपीरियर जनरलसे प्राप्त की है। अतः यह दायित्व फ़ादर पोनेटको लेना पड़ा है। प्रायः उनको व्यस्त और कार्यमग्न ही पाता हूँ। मुझसे मिलनेपर उनकी भावना रहती है कि मिलकर बातचीत करना चाहता हूँ, पर यह सब करना है, इतना सारा अभी घेरे हुए है।

आते-जाते हमलोग नमस्कार करते हैं, और वह अपनी नीली आँखोंको किंचित् घुमाकर उसी व्यंजनासे मुसकरा देते हैं। फिर वह शीघ्रतासे चले जाते हैं। वह कभी ही बाहर निकलते हैं, निकल पाते है। लेकिन हम कई बार इस बीच मिलकर बातचीत करते हैं। विशेषकर जब नोविसोंका सीनियर क्लास अपना व्रत आदि पूरा करके अन्तिम दीक्षा ले चुका, तो उसको कुछ दिनोंकी छुट्टी दी गयी। और तब नोविस मास्टरका काम अपेक्षाकृत हल्का हो जाता है। नाविसोंके मौनव्रत तथा साधनाके दौरानमें उनकी व्यस्तताका ठिकाना नहीं था। पर इस बीच हम कई बार मिलते हैं और काफ़ी देर तक अनेक विषयोंपर बातचीत होती रहती है।

उनके कमरेमें गया हूँ और वह मुसकराते हुए खड़े होकर स्वागत करते हैं—'ज़रूर आ सकते हैं।' फ़ादर पोनेट भी हिन्दीमें बातचीत करनेका प्रारम्भमें आग्रह करते हैं। वह हिन्दी कुछ जानते हैं, कहते हैं कि सीखनेकी कोशिश कर रहा हूँ। यह उनके बोलनेसे प्रकट है कि बोलनेमें उन्हें प्रयत्न करना पड़ रहा है। वह अपने द्वारा तैयार किया हुआ एक उपदेश दिखलाते हैं, और संशोधन चाहते हैं। शायद यह विज्ञप्ति जैसी कुछ है, जो आदिवासियोंके इलाक़ेमें रहनेवाले कैथेलिक विद्यार्थियोंको धर्म संघमें प्रवेश करनेके लिए प्रेरित करनेके उद्देश्यसे है। सम्भवतः इसका आधार कोई अन्य परिपत्र है। फिर हमलोगोंकी चर्चा हिन्दी भाषापर आ जाती है। उन्होंने बतलाया कि हिन्दीकी संयुक्त क्रियाएँ उनके लिए सबसे बड़ी समस्या हैं। यह क्या है और इसका अर्थ कैसे सिद्ध आप करते हैं—चल पड़ा, उठ खड़ा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुआ, उठ बैठा, चलता चला गया, चलता-फिरता दिखाई पड़ा। कहीं दो भिन्न प्रकारकी क्रियाओंका प्रयोग है, तो कहीं दो विरोधी क्रियाओंका प्रयोग है, कहीं कई भिन्न प्रकारकी क्रियाओंका एक साथ प्रयोग। उठना और बैठना एक साथ कैसे होगा, चलना और पड़ना भी कैसे होगा, आया और गयाका एक साथ प्रयोग क्या विचित्र नहीं है?

देखता हूँ फ़ादरकी दृष्टि भाषाके बारेमें मुझसे अधिक गहरी है। वस्तुतः उन्होंने ही समझाया विदेशी भाषा सीखते समय हम भाषाकी प्रकृतिके सहारे ही आगे बढ़ते हैं, इसके अलावा चारा ही क्या है? और अपनी भाषा प्रयोगके माध्यमसे सीखते हैं, उसका प्रयोग जितना अच्छा हम कर सकते हैं, उससे यह नहीं समझा जा सकता कि हम उसकी प्रकृतिके प्रति सजग हैं या उसके प्रति जागरूक भी हैं। फिर उनके साथ सोचनेका प्रयत्न करता हूँ कि वस्तुतः हमारी भाषाकी इन क्रियाओंका प्रयोग मनोवैज्ञानिक आधार-पर समझा जा सकता है। उठ बैठामें 'बैठा' आकस्मिकताका अर्थ देता है, चल पड़ामें 'पड़ा' कार्यके प्रारम्भ और निश्चयका भाव व्यक्त करता है, चलता चला गयामें 'चला' निरन्तरताका भाव व्यक्त करता है और 'गया' कालका बोध कराता है। इसी तरह समझने-समझानेका प्रयत्न करता हूँ, यद्यपि मैंने स्वीकार किया कि मेरा ज्ञान इस विषयमें कामन सेंस मात्र है, और हमारी भाषामें इस प्रकारके व्याकरण ग्रन्थ अभी तक नहीं बने हैं, पर यह समस्या बहुत महत्त्वकी है। भाषा-प्रयोगके इस प्रकारके विश्लेषणमें हमको रस आ गया है और हम हँस भी रहे हैं।

फ़ादर पोनेट मेरे कमरेमें आये हैं। वह बहुत धीरे-धीरे पल्लेपर थाप देते हैं, द्वार खोलकर पाता हूँ कि फ़ादर संकुचित खड़े हैं। उनको संकोच है कि कहीं उन्होंने मेरे कार्यमें बाधा तो नहीं डाली है। मैं उल्लसित भाव-से उनको आश्वस्त करता हूँ कि मेरे पास ऐसा क्या निश्चित कार्य यहाँ हो सकता है। फिर भी मन-ही-मन विदेशी फ़ादरकी इस भद्रता और चिन्तासे प्रभावित हुआ, एक हम हैं कि इस विषयमें कोई संकोच हो सकता है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जानते ही नहीं। वह आज अपेक्षाकृत निश्चिन्त हैं, ऐसा लग रहा है और कुरसीपर बैठे हैं कि हम कुछ देर बातचीत कर सकते हैं। सम्भवतः मेज़पर पड़ी हुई मेरी पुस्तकोंपर उनकी दृष्टि पड़ी और उन्होंने मेरे अध्ययन तथा मेरी विशेष रुचिके बारेमें प्रश्न किया। फिर साहित्यकी चर्चा चल निकलती है। स्पष्ट ही वह साहित्यमें उच्चता और महत् उद्देश्यके पक्षपाती हैं, पर इस दृष्टिको वह सीमित नहीं मानते। उनका कहना है कि जीवनके यथार्थका चित्रण भी ऐसा किया जा सकता है, जो अन्ततः मनुष्यको उच्च भावनाओंसे प्रेरित कर सके। इसपर मैंने कहना चाहा कि इस दृष्टिसे आपको टाल्सटाय, दास्तेवस्की, विक्टर ह्यूगो जैसे महान् लेखकोंको स्वीकृति देनी होगी। वह मानते हैं कि इन लेखकोंमें जीवनकी सूक्ष्म दृष्टिके साथ उच्च भावनाओंकी प्रेरणा भी है, पर हम मुक्त रूपसे अपने विद्यार्थियोंको इन लेखकोंको भी पढ़नेको नहीं दे सकते। विद्यार्थी अभी कच्ची बुद्धिके होते हैं, और उनको उचित अनुचित, सद् असद्का विवेक धीरे-धीरे ही आ सकता है। इन लेखकोंने इन समस्याओंको जिस स्तरपर उठाया है; उसके लिए प्रौढ़ विवेकी दृष्टिकी अपेक्षा है।

विषयकी गम्भीरताके कारण फ़ादर अंग्रेज़ीमें अपनेको व्यक्त कर रहे हैं, उनके उच्चारणमें इसका प्रत्यक्ष आभास मिलता है कि यह भाषा उनके लिए विदेशी है। काण्टीनेण्टके लोग अंग्रेज़ोंके उच्चारणका अनुकरण करना अपने लिए अगौरवकी बात नहीं समझते। मैं अनुभव करता हूँ, फ़ादरसे साहित्यके दृष्टिकोणपर बहस नहीं की जा सकती, जितना वह स्वीकार कर रहे हैं, उससे अधिक कन्शेशनकी आशा करना भी नहीं चाहिए। ऐसा भी हो सकता है कि इस कथनमें वह मेरे भावकी रक्षा करना चाहते हों। ज़ोला जैसे लेखकोंको वह किसी प्रकार स्वीकृति नहीं दे सकते, और उनके प्रश्न करनेपर अपना दृष्टिकोण रखनेका प्रयत्न तो करता हूँ, पर उनके भाव-को समझकर पक्ष समर्थनके स्थानपर अपना स्पष्टीकरण जैसा ही कर रहा हूँ।—क्या मुख्य बात साहित्यमें दृष्टिग्रहण नहीं है? सम्पूर्ण जीवनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुत्साको अंकित करके भी यदि लेखक पाठकको तटस्थ दृष्टि दे सकता है, तो मैं समझता हूँ वह सफल है। निर्णायक तत्त्व यह माना जा सकता है कि लेखकने उस कुत्साके प्रति अपनी आसक्ति तो नहीं व्यक्त की है ? यदि वह उसके प्रति आसक्त है, तो वह पाठकमें भी अपेक्षित तटस्थता नहीं जगा सकेगा और उसकी कृति साहित्यके स्तरकी मानी नहीं जानी चाहिए। इसलिए नहीं कि वह कुत्साका चित्रण करता है, वरन् इसलिए कि वह अपने साहित्यमें अपेक्षित सौन्दर्यानुभवकी शर्त ही पूरी नहीं कर सका है।.... हम समझ रहे हैं कि कहीं हमारा मौलिक मतभेद हैं, अतः दोनों ही विषय-के विशेष ऊहापोहमें जानेसे कतरा जाते हैं।

फ़ादर पोनेटने कहा है कि आज आठ बजेके बाद वह मुक्त हैं और यदि समय दे सकूँ तो अच्छा रहे। मैं स्वयं उनके कमरेमें आनेका वचन दे देता हूँ, पर पहुँचनेमें आध घण्टाका विलम्ब हो गया है। क्षमा माँगकर कमरेमें प्रवेश करता हूँ, वह उसी प्रसन्न मुद्रामें स्वागत करते हैं। प्रारम्भमें तो हमारी चर्चा भाषासे शुरू होती है। उन्होंने कुछ वाक्योंको संशोधनके लिए मेरे सामने रखा, पर जब मैंने अपने ढंगसे उन्हें ठीक किया तो प्रश्न उठता है कि इस प्रकारकी व्यंजना धर्मके विशिष्ट सन्दर्भमें ठीक नहीं बैठ रही है। किसी प्रकार हम दोनों मिलकर इस अनुवादको ठीक करते हैं। इसके बाद हमारी बातचीत अनेक चर्चाओंके बीचसे धार्मिक विश्वासोंकी ओर मुड़ जाती है। सामान्यतः फ़ादर पोनेट भी मुझसे धार्मिक विश्वासपर बहस करना पसन्द नहीं करते, यह उनके शालीन व्यवहारसे समझता हूँ। पर उनको यह विश्वास किसी प्रकार हो गया है कि बिना बहसमें पड़े यह विषय भी चलाया जा सकता है। उन्होंने मुझे कुछ सन्तोंकी जीवनियाँ पढ़नेके लिए पुस्तकालयसे दी हैं और उन्हींके बारेमें प्रश्न करते हैं कि उनका मुझपर क्या प्रभाव पड़ा है, मुझे कैसी लगी हैं ? मैं कहता हूँ कि उनका साधना पक्ष मुझे अधिक प्रभावित कर सका है, कभी-कभी उनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साधनामें संघर्ष मुझे प्रतीकात्मक लगा है और प्रतीकार्थ अधिक सक्षम और सम्भाव्य लगा है। जहाँ तक मिरेकिल पक्षका सम्बन्ध है, मुझे अपने भारतीय सन्तोंका स्मरण आता रहा है। वह कह उठते हैं कि क्या भारतमें भी ऐसे सन्त हुए हैं? मुझे उनकी वाणीमें वही सन्देह ध्वनित लगा जो उस दिन अनायास ही बुल्केजीने व्यक्त किया था। हम दोनों इस प्रसंगको टाल जाते हैं, अपनी-अपनी दृष्टिमें एक दूसरेकी सीमा समझकर।

नोविस मास्टरको कहीं आभास मिल गया है कि मैं भारतीय धर्मकी दृष्टिको कहीं किसी स्तरपर महत्त्व देता हूँ। वह मेरे इस विश्वासकी गहरी टोह लेनेके भावसे भारतीय धर्मके बारेमें चर्चा चलाते हैं। चर्चा चली है, तो अपनी बात उनकी भावनाका पूरा ध्यान रखकर भी कहूँगा। उन्होंने बात जिज्ञासु भावसे उठाई है। प्रश्न है क्या मैं किसी निश्चित धर्मको मानता हूँ? शायद अन्य परिस्थितिमें इस प्रश्नका उत्तर इतना स्पष्ट नहीं देता या दे पाता। पर मुझे लगता है यह मेरे धार्मिक भावके प्रति चुनौती है, यद्यपि बातचीतमें ऐसा कहीं कुछ नहीं है। कह देता हूँ कि मेरा यदि कोई धर्म है तो वह हिन्दू ही कहा जा सकता है। जैसे फ़ादरने इस स्थलपर घेर पाया हो। उनकी दूसरी जिज्ञासा है—क्या मैं अपने धर्मके निश्चित मूल तत्त्वोंका उल्लेख कर सकता हूँ अर्थात् हिन्दू धर्मके तत्त्व क्या हैं जिनको अलग करके सर्वमान्य रूपसे रखा जा सकता है? मैंने इस प्रकार कभी सोचा नहीं है, हमारे यहाँ नास्तिक दर्शन तक हैं, हर प्रकारकी साधना है, हर कोटिका विश्वास विद्यमान है। पूर्वजन्म, कर्मवाद, आत्मवाद—टटोलता रहता हूँ, पर स्वयं ही समझ लेता हूँ कि इनमें कोई सिद्धान्त सर्वमान्य नहीं कहा जा सकता है। ज्ञान भी है, भक्ति है और कर्म है। आकस्मिक प्रश्नसे हतप्रभ हूँ? लेकिन अन्दर छटपटाहट भी है कि उत्तर है और देना है। समय काफ़ी हो चुका है, मैंने यह कहकर विदा ली कि इसका उत्तर अगले दिन दूँगा।

वापस आकर अन्दरसे अशान्त हूँ। मैंने इस रूपमें इस समस्यापर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कभी विचार नहीं किया। साधारण स्थितिमें स्वयं मानता हूँ कि मैं धार्मिक हो सकता हूँ, पर किसी धर्मको स्वीकार नहीं करता। लेकिन मैं हिन्दू हूँ, यह मेरा धर्मसे अधिक संस्कार है। जैसे भारतमें जन्म लेकर भारतीय हूँ, लगता है वैसे ही हिन्दू परिवारमें जन्म लेकर हिन्दू भी हूँ। यह भी जैसे मेरे स्वाभिमानका प्रश्न हो। हम दूसरे धर्मोंको मान्यता देते हैं, आदर भी देते हैं। पर यह नहीं कि हम अपने धर्मको अनादर, असम्मानकी दृष्टिसे देख सकते हैं। वह हमारा धर्म है, हमारे पूर्वजोंका धर्म है। हो सकता है, दूसरे इसे प्रकृतिपूजकोंका धर्म कहकर अवहेलना करें, पर हमारे चिन्तकोंने, हमारे दार्शनिकोंने, हमारे साधकोंने अपने चिन्तनों, विचारों और साधनाओं-से इसे सम्पन्न किया है। जिस धर्मके पीछे इतने महान् पुरुषोंकी स्वीकृति हो, वह बिना किसी दृढ़ आधारके हो नहीं सकता! पर वह कौन-सा आधार है? वह कौनसे उसके तत्त्व हैं?

यह मन्थन मनमें राततक चलता रहता है, इसी चिन्ता और व्यग्रतामें टहलता हुआ सोच रहा हूँ। धीरे-धीरे एक बात मनमें आती है। मेरे मनमें कई बार उठ चुका है कि साम्यवादी पद्धतिका अधिकांश ढाँचा संघ धर्मोंसे लिया गया है, विशेषकर लगता है कैथलिक संघके अनुकरणपर उसका संघटन किया गया हो। यह ठीक है कि उनके आन्तरिक भाव तथा उद्देश्योंमें अन्तर है। फिर याद आता है कि चीनसे कैथलिक मिशनरी कम्यूनिस्टोंके आतंकसे हट रहे हैं। धर्म राजनीतिका यह संघर्ष, इतना तीखा संघर्ष क्यों? धर्म तो व्यक्तिगत विश्वास और श्रद्धाका क्षेत्र कहा जाता है! वस्तुतः यह दो संघबद्ध विचारधाराओंकी टकराहट है।

मेरे हाथमें चिन्तनका सूत्र आ गया है। हिन्दू धर्म संघपर प्रतिष्ठित धर्म नहीं है, यह धर्मके क्षेत्रमें व्यक्ति-स्वातन्त्र्यको स्वीकार कर चलनेवाला धर्म है, यह विश्वासोंकी, साधनाकी, प्रतीकोंकी पूर्ण स्वाधीनताका धर्म है। यही कारण है कि हमारे परिवारोंमें एक ओर सूक्ष्म तत्त्वपर विश्वास करने-वाला आत्मवादी है तो उसके साथ ही वृक्षोंकी पूजा करनेवालोंका विश्वास-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्तर भी है। विश्वास और श्रद्धा व्यक्तिगत उपलब्धिकी ही समस्या है, और उसको हमारे धर्मने उसी रूपमें उपलब्ध करनेको स्वाधीनता दी है।.... अर्थात् मैं फ़ादरसे दूसरे दिन कहता हूँ—यह हिन्दू धर्ममें ही सम्भव है कि मेरा जैसा विद्रोही व्यक्ति भी उसके अन्तर्गत सहज ही विकसित हो सकता है। फ़ादरको मेरा यह तर्क अधिक प्रत्यक्ष लगता है कि यदि कभी कम्यूनिस्ट इस देशमें आ ही गये तो हमारे धर्मको उससे ख़तरा नहीं है, वह उनके मिटाये भी नहीं मिटेगा और उन्होंने पहले ही मान भी लिया है, धर्म न रहनेसे किसी धर्मका रहना अच्छा है।

फ़ादर मिनिस्टर प्रायः खाकी पोशाकमें रहते हैं। उनकी भूरी घनी दाढ़ी-मूँछ उनकी हास्यप्रियताको किसी प्रकार घेर नहीं पाती। उनकी आँखोंका प्रारम्भिक चतुराईका भाव पहले मुझे आकर्षक नहीं लगा था, पर धीरे-धीरे उसमें आत्मीयता तथा खुलेपनका भाव व्यंजित है। वह प्रायः काम-काजकी देख-रेखमें रहते हैं, परन्तु उनके भावसे यह कभी नहीं लगता कि अत्यधिक व्यस्त हैं, फ़ुरसत नहीं है। इसके विपरीत उनको सदा इस भावके साथ मिलते पाया जा सकता है कि यदि आपको फ़ुरसत हो तो वह कुछ गप-शप कर सकते हैं, अन्यथा वह डिस्टर्व नहीं करना चाहते। आश्रम-के प्रबन्धका सारा दायित्व उनपर है, पर वह इसे इस रूपमें लेते हैं कि हर एकको कार्यकी सुविधा देना ही उनका प्रधान काम है। कभी वह कमरेमें आकर मुझसे हाल-चाल ले जाते हैं कि किसी प्रकारका कष्ट तो नहीं है। उनको इस बातका संकोच है कि मुझे घर जैसा भोजन यहाँ नहीं मिल रहा है। इसी प्रसंगमें एक बार उनका प्रस्ताव होता है कि मैं किचनमें काम करनेवाले ब्रदरको पूड़ी बनाना सिखा दूँ तो एक दिन सारे आश्रमको पूड़ी खिलाई जाय।

फिर क्या है, एक दिन फ़ादरके साथ किचन जाता हूँ। किचन वस्तुतः भोजनालयके बगलके पुस्तकालयके नीचे है। खानेके हाल और पुस्तकालयके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीचमें गेलरी है और उसीके पास ज़ीना आकर खानेके हालके पास खुलता है। खानेकी सामग्री लाई जाकर यहाँ काउंटरपर सर्व करनेके लिए लगा दी जाती है। इधरकी ज़मीन नीची है, इस कारण किचनका धरातल एक मंज़िल नीचा हो गया है और उसकी छत सारी इमारतकी कुरसीके बराबर आती है। हम लोग बाहरकी ओरसे किचनमें प्रवेश करते हैं। देखता हूँ एक आदमी मुर्गियोंकी गरदन काट काट कर डालता जा रहा है और वे छटपटा रही हैं। मुझे यह दृश्य अपनी ओर खींचता है, मनमें कष्ट होता है, विशेषकर उनका इस प्रकार छटपटाना देख कर। ये लोग ऐसा क्यों करते हैं? फिर किचनमें ब्रदरको पूड़ी बनानेकी पद्धति अपने सैद्धान्तिक ज्ञानके आधारपर बताता हूँ। ब्रदर पूड़ी बेलनेके स्थानपर एक बहुत बड़ी-सी रोटी बेलवाकर गोल-गोल कटवाकर पूड़ी तैयार करना अधिक आसान मानते हैं, मैं कहता हूँ कि इस प्रकार कुछ अन्तर पड़ सकता है, पर सुविधाके ख्यालसे ठीक है। घी खौलाकर जब पूड़ियाँ निकाली जाने लगीं तब वापस आता हूँ। फ़ादर मिनिस्टरकी योजनापर बुल्केजी हँसते हैं। लोगोंने पूड़ियोंकी तारीफ़ की, पर समझता हूँ हमारी पूड़ियोंका स्वाद इससे कहीं अच्छा होता है और बुल्केजी अपने अनुभवके आधारपर स्वीकार करते हैं।

फिर मिनिस्टरका आग्रह है कि मुझे एक दिन उनकी पालिता मोनों (मधुमक्खियों) को ज़रूर देखना है। उन्होंने मोनपालनपर इलाहाबादसे प्रकाशित पुस्तक देखी है, इसी कारण वह मधुमक्खियोंका नाम मोन ही जानते हैं। बतलाता हूँ कि पहाड़ी इलाक़ेमें मोन कहा जाता है, हम लोग इस नामसे विशेष परिचित नहीं है। शायद लेखक पहाड़ी इलाक़ेसे सम्बद्ध होगा। मैं उनके साथ उनके द्वारा तैयार किये छत्तोंको देखने जाता हूँ। यह ज्ञात नहीं था कि ये तो हमारे इस पीले बँगलेके सामनेवाले बग़ीचेमें ही हैं। यह छोटा-सा फलोंका बाग़ है जिसमें शफ़तालू, आड़ू, लीची तथा चेरी आदिके पेड़ हैं। बीच-बीचमें फूलोंकी क्यारियाँ भी हैं। फ़ादर मुझे पेड़ोंके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नीचे ले जाते हैं, वहाँ स्टैण्डपर लकड़ीके बाक्स हैं। वस्तुतः ये ही कृत्रिम छत्ते हैं। फ़ादर एकको खोलकर दिखाते हैं, उसमें बीच-बीचमें लकड़ीके खाने बने हैं, जो इस प्रकार व्यवस्थित हैं कि अलग भी किये जा सकते हैं। फ़ादर खानोंको उठा-उठाकर दिखाते हुए समझा रहे हैं कि किस प्रकार इनकी योजना की जाती है और किस प्रकार इन्हींमें मक्खियाँ आकर अपना छत्ता लगाती हैं। मैं देख रहा हूँ कि मधुमक्खियाँ मोम लाकर एकत्र कर रही हैं, जिससे छत्ताका आकार पूरा होगा और जिसके कोष्ठोंमें दूसरे छत्ते में फ़ादरने दिखाया मधु एकत्र हो रहा है। फिर अन्य छत्तेमें दिखाते हैं कि अण्डे भरे हैं जो जब मक्खियाँ हो जायेंगे तो एक नये छत्तेकी व्यवस्था करनी होगी। मैं हैरान हूँ कि फ़ादर छत्तोंको इस प्रकार छू रहे हैं और उठा-उठाकर दिखा रहे हैं, पर मधुमक्खियाँ सचमुच मौन हैं, उनको जैसे हम लोगोंका आभास भी न हो। वे अपने-अपने काममें व्यस्त हैं। फ़ादर ऑवेल मेरी मुद्रासे समझते हैं, उन्होंने कहा—'ये मेरे दोस्त हैं, इनसे डर नहीं है।' और सचमुच वह इसी प्रकार उनसे व्यवहार कर रही हैं।

इसके बाद हम दोनों घूमते रहते हैं और फ़ादर ऑवेल मोनपालनके अनेक विस्तार अत्यन्त रुचिके साथ बता रहे हैं, जिनमें मेरी किंचित् अभिरुचि नहीं है। पर उनके उत्साहसे प्रभावित हूँ, लगभग मुग्धावस्थामें वह मुझे मधुमक्खियोंके स्वभाव, प्रकृति, व्यवहार आदिके बारेमें बतला रहे हैं। सुन रहा हूँ अवश्य, पर मेरा ध्यान अलग है। सोचता हूँ फ़ादर कैसे व्यावहारिक लगते हैं, पर इन मोनोंके प्रति उनका अनुराग किस कोटिमें रखा जा सकता है। शहद प्राप्त करने मात्रका लोभ इस मनोयोगके पीछे नहीं हो सकता। मुझे तो उनका भाव हॉवीसे भी गहरा जान पड़ता है।....फिर फ़ादर ऑवेल सारे आश्रमकी व्यवस्थाकी चर्चा शुरू कर देते हैं। यह बाग़ उन्होंने योजित किया है, कुछ वर्षों बाद इसमें आड़ू आदि पर्याप्त मात्रामें हो सकते हैं। इस आहातेमें उन्होंने कई क़लमी आमोंके बाग़ अभी ही लगवाये हैं, जो पाँच छः वर्षोंमें फल देने लगेंगे और आश्रमको दस बारह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हज़ारकी वार्षिक आमदनी होने लगेगी, खेती करवानेसे यह अधिक सुविधा-जनक है। अभी केवल आमके बाग़ीचेसे दो तीन हज़ारसे अधिकका लाभ नहीं है। पर इसके अतिरिक्त फ़सल भर हमलोगोंको तीन हज़ार आम भी मिलेंगे। वे ही आम मेज़पर प्रायः ही खानेको मिलते हैं। उन्होंने यहाँ पाइनऐपिल भी लगवाये हैं। उनका प्रयत्न है कि आश्रम यथासम्भव स्वाव-लम्बी हो सके। उनकी गोशालामें लगभग चालीस अच्छी गायें और भैंसे हैं, सारा दूध और मक्खनका खर्च उससे चल जाता है। सुअर और मुर्गियाँ भी पली हुई हैं। मुझे अपने कमरेके सामनेसे नित्य निकलते हुए मांसल तथा चमकते शरीरवाले सुन्दर सुअरोंकी याद आ जाती है।

फ़ादर इस सबको बतानेमें उल्लास और गौरवका अनुभव करते हैं। यह भाव उनका आन्तरिक है, यह मैं समझ रहा हूँ। धूपमें घूमनेसे अथवा उत्साहसे उनका मुहासोंसे युक्त गोरा मुख लाल हो गया है और वह जैसे सब कुछ भूलकर केवल अपनी आश्रमकी व्यवस्थामें बिखर गये हैं। मुझे लगता है यह भी आसक्ति नहीं तो क्या है? घर गृहस्थीका त्याग करनेवाले फ़ादर ऑबेलकी यह गृहस्थी नहीं तो क्या है? वह यह सब इस प्रकार कदापि नहीं कर रहे हैं कि यह भी आश्रमकी व्यवस्थाको चलानेके लिए अनिवार्य है, साधनाका जीवन बितानेके लिए यह भी अनिवार्य है। शायद यह ऐसा हो कि वह इस प्रकार सब आश्रमवासियोंको सुख सुविधा प्रदान कर साधनाका सुख पाते हैं, सेवाकी तृप्ति उनकी हो। पर यह तृप्तिसे कहीं अधिक उल्लास है, यह देख रहा हूँ। चुरुट पीते हुए फ़ादर ऑबेलमें कहीं जीवनका मौजीपन भी है, और इसीसे वह इतने बड़े दायित्वका निर्वाह ऐसे करते हैं, जैसे उनके पास करनेको कुछ है ही नहीं।

फ़ादर क्विरैनन हैं जो यहाँ कभी-कभी ही आते हैं। आते हैं तो या कोई महत्त्वपूर्ण पर्व होता है या फिर उनको अपने गाँववासियोंके लिए दवाएँ आदि अथवा अपने लिए कुछ सामग्री ले जानी होती है। बुल्केजीसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनकी निकटता है, इस कारण वह मेरे भी समीप अधिक हैं। वह कम बोलते हैं, बोलते हैं बहुत मधुर। यहाँकी बोली तथा इधरके आदिवासियोंकी भाषा जानते हैं, हिन्दी बहुत रुक-रुककर बोलनेका प्रयत्न करते हैं। उनका यह बोलना भी प्रिय लगता है। दुबला शरीर है, क़द साधारण है, हल्की छोटी दाढ़ी-मूँछ है। देखनेमें शान्त और तन्मय अधिक लगते हैं। उनको देखकर कोमल भावनावाले ईसाई सन्तोंकी सुधि आ जाती है, आन्तरिक प्रेमतत्त्वसे व्यक्तित्वमें ऐसा ही आकर्षण उत्पन्न होता है, ऐसा मनमें भाव जागता है। अपनी विनम्रताके कारण ही जैसे वह कुछ झुककर चलते हैं, तन्मय मुद्रामें सिर झुकाकर चलनेसे ऐसा भासता है। जब उनको यहाँ रुकना होता है, तब वह हमारी ओरके कमरेमें रुकते हैं। इस कारण कभी बातचीत हो जाती है, पर वह बात अधिक करते ही नहीं हैं, उनके पास बैठे रहना ही जैसे बात करना हो। अधिकतर वह इधरके निवासियोंकी जिनमें अधिकतर आदिवासी हैं, चर्चा करते हैं।

फ़ादरका आमन्त्रण है कि हम दोनों उनके स्थानपर भी एक दिन आयें। बुल्केजीने एक दिन वहाँके कार्यक्रमकी घोषणा भी कर दी है। सोचता हूँ यह परिवर्तन रोचक रहेगा। उनका गाँव लगभग चार मील दूर है और वहाँके प्रोग्रामके लिए कम-से-कम चार घण्टे चाहिए, जो रविवारके दिन ही सम्भव माना गया। हम सुबह नाश्ता करके रवाना होते हैं। सोचा है भोजनके समय वापस आ जायेंगे। पहले हम पहाड़ी श्रेणीके बायें पार्श्वसे, जो हरी घाटीके दूसरी ओर पिंजरापोलकी तरफ़ है, सारी शृंखलाको पार करते हैं। जहाँ अन्तिम छोटे शिखरकी उपत्यका है, उसके बायेंसे नीचे उतरते चले जाते हैं। उतरना शुरू करनेपर लगता है यह ऐसा गहरा नहीं है जैसा उस दिन लगा था। और न इसके बीच जंगल ही उतने सघन लगते हैं। जंगलके बीच ढालपर, जो बहुत धीरे-धीरे क्रमशः उतर रहा है, हम चल रहे हैं। बातचीत कम ही कर रहे हैं, क्योंकि आस-पास देखनेको बहुत है। झाड़ियोंमें उलझनेसे बचकर निकलना है, और पगदण्डीपर भी ध्यान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रखना है। यद्यपि बादमें हमको ज्ञात हुआ कि हम ग़लत रास्तेसे ही निकले हैं। कहीं अपरिचित पेड़, पौधे और फूल भी अपनी ओर ध्यान आकर्षित करते ही हैं, और तब हम उनकी चर्चा भी कर लेते हैं।

फिर हम उस छोटी नदीके पास पहुँच जाते हैं, जिसके पेटेकी गहराई चट्टान-शिखरसे दूर तक एक वक्र रेखामें फैली दिखाई दी थी। हम जूता निकालकर उसे पार कर जाते हैं, पतली-सी धार है। पानी साफ़ और नीचेके पत्थरोंके कारण झल-झल चमक रहा है। फिर हम आगे बढ़ते हैं, आगे हमने उधरसे जाते हुए आदिवासीसे गाँवका रास्ता पूछा। कठिनाई है हम एक दूसरेकी भाषासे अपरिचित हैं। फिर फ़ादरको देखकर और फ़ादर क्विरैननसे उनका सम्बन्ध जोड़कर उसने हमको ठीक रास्ता संकेतसे बता ही दिया। आगे हम एक बस्तीसे गुज़रते हैं, बस्तीके जरजर फूसके झोंपड़े देखकर मन खिन्न होता है, पर उनमें सफ़ाई और सुरुचि हैं, बुल्केजी कहते हैं कि यह आदिवासियोंकी बस्ती है। ये लोग अशिक्षित और पिछड़े हुए भले ही हों, पर इनको स्वस्थ तथा सुरुचिसे रहना आता है, यह मेरे मनमें भी स्पष्ट है।

आगे चलकर अपेक्षाकृत बड़ी बस्ती पड़ती है, जिसमें खपरेके मकान हैं, सिवानपर एक प्राइमरी स्कूल भी है। बादमें मालूम हुआ यह स्कूल कभी ही चलता है, क्योंकि गाँवके लोग अपने लड़कोंसे पढ़नेकी अपेक्षा गोरू चरवाना अधिक आवश्यक समझते हैं। और गाँवके स्कूल मास्टरजी जितने रुपये पाते हैं, उसके एवज़में इतना ही कर्तव्य मानते हैं कि कभी-कभी लड़कोंको जुटाकर हाज़िरी आदि ठीक कर लें और मुआयना यदि कभी हो ही तो सब दुरुस्त दिखा सकें; उस समय लड़कोंको जुटा लेना कोई कठिन काम नहीं होगा। इसके बाद ही फ़ादर क्विरैननका स्थान मिलता है जो अपेक्षाकृत गाँवसे अलग और एकान्तमें है।

वह हम लोगोंकी प्रतीक्षामें हैं, क्योंकि यह कार्यक्रम पूर्वनिश्चित था। साफ़-सुथरी जगहमें दो कोठरियोंका एक कॉटेज-सा है, जो ऊपरसे खपरोंसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छाया हुआ है। एक कोठरी फ़ादरके पढ़ने, रहने तथा मिसा करनेके काम आती है और दूसरीमें खाना बनाने, दवा बाँटने आदिकी व्यवस्था है। एक गाँवका आदमी फ़ादरको उनके कार्योंमें सहायता देने आ जाया करता है। वुल्केजीने पहुँचकर घड़ी देखी डेढ़ घण्टा आनेमें लगा है, वह कहते हैं पाँच मीलसे कम दूरी नहीं होगी। हम दोनोंको फ़ादर क्विरैनन तख़तपर बैठाते हैं और स्वयं मोढ़ापर बैठते हैं। फिर अपनी निर्मल हँसीमें पूछते हैं—"तुम लोगोंकी भालूसे भेंट तो नहीं हुई।" हम हँसते हैं, इसपर वह अपनी अटक-अटककर उच्चारित हिन्दीमें बतलाते हैं—"इधर कभी भालू मिल भी सकता है।"

फिर हमारी बातचीत उनके यहाँ रहनेके बारेमें चलती रहती है, उनको क्या असुविधा है, यहाँके लोग किस रूपमें उनको लेते हैं। उनका कहना है कि नगरसे सम्पर्क रखनेवाले लोगोंने उनके बारेमें सन्देह उत्पन्न करानेका प्रयत्न ज़रूर किया है। पर अधिकांश लोग इधर बहुत सीधे और पिछड़े हुए हैं, यहाँ बीमारियोंकी कोई व्यवस्था नहीं है। साधारण बुख़ार, मलेरिया और पेटकी बीमारियोंमें लोग घसिटते रहते हैं, उनका रोग बढ़ता, बिगड़ता रहता है। फ़ादर क्विरैनन इनका उपचार और निर्देशन करके जो सहायता करते हैं, उससे यहाँके लोगोंको काफ़ी सहारा है। उनके आपसी लड़ाई झगड़ोंका निपटारा करनेका प्रयत्न करते हैं, पर ऐसे ही लोग उनकी बात मानते हैं जिनके मनपर धार्मिक भावका संस्कार है और उनको आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। यहाँ ऐसे लोग भी हैं, जो फ़ादरसे सहायता लेते हैं और उनसे विद्वेष भी रखते हैं।

मैंने सहज भावसे कहा कि यह शिक्षा और स्वास्थ्य-रक्षाका दायित्व तो राज्यका प्राथमिक कर्तव्य है। यह तो हमारे राज्यकी आज तककी अयोग्यता है कि अभी तक सारे देशमें उचित प्रबन्ध नहीं हो सका है। अभी तक देश पराधीन था, सम्भवतः अब हम इस दिशामें आगे बढ़नेका प्रयत्न करेंगे। यदि हमारी दिशा ठीक रही, तो कुछ ही दिनोंमें इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकारके कार्योंकी पूरी ज़िम्मेदारी राज्य ले लेगा और····। फिर मुझे एका-एक भान होता है कि मैं कहने क्या जा रहा हूँ। क्या मैं फ़ादर क्विरैननसे कहना चाहता हूँ कि इस प्रकार अब धीरे-धीरे वह व्यवस्था होने जा रही है जब जनताको शिक्षित करना, उनके स्वास्थ्यकी चिन्ता करना, सुरक्षाका प्रबन्ध करना धर्म और सेवाका कार्य नहीं माना जायगा। पर इस प्रकार कहना क्या उचित होगा? फ़ादर मेरी बातका उत्तर देते हैं कि राज्य इन उत्तरदायित्वोंको लेकर भी इनका वास्तविक निर्वाह नहीं कर सकता। बीमारीमें रोगीकी परिचर्यामें आन्तरिक भाव सेवाका होना आवश्यक है, इसी प्रकार जब तक व्यक्तिको धर्मकी, व्यापक अर्थमें, उच्च भावनासे प्रेरित नहीं किया जायगा, शिक्षा सम्पूर्ण नहीं मानी जा सकती। और इस रूपमें हमारा स्थान सुरक्षित है, वह हँसते हुए कहते हैं, उनकी हँसीमें सहज मृदुता है। यह अलग बात है कि राज्य जितनी सुविधाएँ देता जायगा, हमारा काम अधिकाधिक लोगोंको धर्मके सूक्ष्म तत्त्वकी ओर आकर्षित करना रह जायगा। मैं जान-बूझकर इस बहसको आगे बढ़ानेका प्रयत्न नहीं करता।

फिर फ़ादर क्विरैननको एक स्त्री बच्चोंको दिखाने लाती है। फ़ादर उनको देखने बग़लकी कोठरी (कमरा कह सकते हैं, क्योंकि हवाके लिए खिड़की हैं) में चले जाते हैं। मैं देखता हूँ एक सूखा-सा बच्चा माँकी गोदमें है, इसी तरह दूसरा पैरों चलनेवाला लड़का है जिसका पेट निकला है····। सोचता हूँ फ़ादर इनका उपचार कहाँ कर सकेंगे! वह अधिक रोगीको आश्रममें ब्रदरके पास भेज देते हैं जिनको दवाओंका कुछ ज्ञान है····। ध्यान उधरसे हटानेकी चेष्टा करता हूँ, इन स्त्रियों और बच्चोंको देखकर मन खिन्न होता है। इधर इस कमरे (कोठरी ही है) में एक ओर फ़ादरकी पुस्तकें और दूसरी ओर मिसा करनेकी मेज़ है, जिसपर संक्षेपमें वेदिकाका सारा सरंजाम है। कमरेमें कुछ चित्र भी हैं, जिनमें क्रूसित ईसा और माँ मरियमके चित्र प्रमुख हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फ़ादर जल्दी ही काम निपटाकर आ जाते हैं और अब हमारे जानेका समय हो चुका है, साढ़े दस बजा है और डेढ़ घण्टाके लगभग रास्तेमें लगना है। फ़ादर हमको अपने इस छोटेसे आश्रमके चारो ओर दिखाते हैं, एक प्रकारसे सुन्दर स्थान ही इसे कहा जायगा। एक ओर कुछ फूलोंके पौधे लगाये गये हैं और कुछ अन्य वृक्ष भी। इधरसे ही हम घूमते हुए वापस लौटते हैं, फ़ादर क्विरैनन भी कुछ दूर साथ पहुँचाने आते हैं। वापसीमें हम अधिक विश्वासके साथ मार्गपर आगे बढ़ रहे हैं, इस बार हमने ठीक रास्ता समझ लिया है। मैं रास्ते भर सोचता रहता हूँ कि यह इतने एकान्तमें बिलकुल अपरिचितोंके बीच फ़ादर क्विरैनन किस भावनासे रुके हुए है ! जो केवल धर्म-प्रचार मात्र इसका कारण मानते हैं, वे कितनी सतही बात तक पहुँच पाते हैं। कम-से-कम फ़ादर क्विरैननको देखकर ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि वह किसी आन्तरिक प्रेरणाके बिना इस एकान्तमें साधना-मग्न हैं।

यहाँके डेढ़ मासके निवासकालमें आश्रममें रहनेवाले अनेक फ़ादरों, ब्रदर्स और विद्यार्थियोंसे कई स्तरोंका परिचय होना स्वाभाविक रहा है। इन स्तरोंमें एक यह भी रहा है कि वे जानते हैं कि मैं हूँ आगन्तुक जो फ़ादरके मित्रके रूपमें यहाँ आया हूँ, अतः आश्रमका एक सम्मानित अतिथि हूँ। उनकी दृष्टिसे यह भाव ग्रहण किया जा सकता है। और मैं उनको यहाँ रहनेवाले जनोंके रूपमें जानता हूँ। इनमें कुछसे अनायास अभिवादनका आदान-प्रदान भी हो जाता है, विशेषकर जिनसे किसी प्रसंगमें आते-जाते बुल्केजीने मेरा परिचय कराया है। कुछ ऐसे व्यक्तित्व हैं जिनसे मेरा व्यक्तिगत परिचय नहीं है, यद्यपि सम्भव है इतना वे मेरे बारेमें जानते हों कि बुल्केजीके माध्यमसे मैं यहाँ हूँ। पर वे स्वयं ऐसे रहते हैं कि जैसे उन्होंने अपने बाहरको खो दिया है। चलते-फिरते, आते-जाते, अपने काममें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लगकर भी वे डूबे-डूबे रहते हैं। वे शायद आश्रमके किसी भी व्यक्तिके प्रति सजग नहीं हैं। अन्दर-ही-अन्दर किसी भावमें निमग्न रहते हैं। इनमें फ़ादर ख़जांची तथा ब्रदर टेकनीशियनके प्रति ध्यान अधिक आकर्षित होता है।

फ़ादर ट्रेज़रार छोटे क़दके दुबले-पतले वृद्ध फ़ादर हैं, जिनकी आयु सत्तरसे ऊपर है। हल्के क़दमोंसे नपे हुए डगोंमें चलते हुए नज़र आते हैं। पहली दृष्टिमें लगता है, वह गम्भीर व्यक्ति हैं। बुल्केजी पाससे निकलते समय उनका श्रद्धापूर्वक अभिवादन करते हैं, मैं भी अनुकरण करता हूँ, वह उत्तर देते हैं, लगता है जैसे अपने आपसे ही कुछ कह रहे हों। एक-दो बारमें ही अनुभव होता है कि यह उनकी गम्भीरता नहीं है, वरन् आत्म-विस्मरणकी स्थिति है। उनके हाथमें निरन्तर रोज़री (माला) दिखती है और वह उसके साथ आन्तरिक भावसे संचालित होते रहते हैं। फिर उनको आश्रमके चैपल (चर्च) में देखता हूँ। खानेके मुख्य हालके पूर्व काफ़ी लम्बा चैपल पड़ता है जो केवल यहाँके आश्रमवासियोंके लिए है। मैं देखता हूँ कि वह वहाँ कभी-कभी कई घंटे बिता देते हैं। चैपलमें चारो ओर ईसाके जीवनपर आधारित बड़े-बड़े चित्र हैं जो यूरोपके माइकेलएंजलो, रॉफ़ेल जैसे प्रमुख चित्रकारोंकी अनुकृतियाँ हैं। मदर एण्ड दि चाइल्ड, लास्ट सपर, काँटोंके ताजका बादशाह, क्रूसित ईसा, क्रासपर ईसाका पुन-र्जीवन, क्रासपर ईसा और मदर आदि चित्रोंके सामने ध्यानावस्थित दशामें फ़ादरको खड़े देखता हूँ। इसी प्रकार कभी मदरकी मूर्तिके सम्मुख भी उनको देखता हूँ। फ़ादर ट्रेजरारको देखकर मुझे एक ऐसे जीवनकी अनुभूति होती हो जैसे, जो समर्पित है। उनको देखकर समझ पाता हूँ कि इस साधनामें ईसाके अनुकरणका क्या अर्थ है और यह जो मैं ग्रहण कर पाता हूँ, उससे कितना भिन्न है। यह प्रतीकार्थका इतना बड़ा व्यवधान, मुझे इस विस्तृत और शानदार परम्परासे अलग कर देता है।

और दूसरे टेकनीशियन ब्रदर हैं। वह लम्बे और स्वस्थ हैं, यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अवस्था इनकी भी पैंसठकी है। पर शारीरिक परिश्रमका अभ्यास होनेके कारण अभी स्वस्थ लगते हैं। दाढ़ी भूरीसे सफ़ेदीकी ओर है। प्रायः ख़ाकी पोशाकमें ही दिखते हैं। वह सदा मौन तथा किसी भावमें डूबे जान पड़ते हैं। तीसरे पहर जब मैं कुछ देरके लिए प्रकृतिस्थ होनेके भावसे बाहर निकलता हूँ, उस समय नियमसे ब्रदरको छाता बगलमें दाबे टहलनेके लिए जाते देखता हूँ। छाता उनके साथ निरन्तर रहता है, जैसे उनकी बाहर जानेकी तैयारीका अंग हो। यह उनका घूमना मात्र स्वास्थ्यकी दृष्टिसे नहीं है, उनको देख कहा जा सकता है। वह एक सधी हुई साधारणतः तेज़ गतिसे चलते रहते हैं, चारो ओरसे एकदम तटस्थ, असम्पृक्त। चलते रहना उनकी एकाग्रताकी जैसे प्रेरणा हो। कुछ देखते लगते भी हैं तो जान पड़ता है या जाग पड़े हैं अथवा बाहर अपने भीतरको ही देख रहे हैं। और यह ब्रदर यहाँकी सभी मशीनोंके इन्चार्ज हैं, बिजलीका प्लाण्टका सारा दायित्व उनका ही है। इस जेनरेटरसे हमको जो सुविधा मिलती है, उसके लिए हम ब्रदरके प्रति कृतज्ञ हैं, पर क्या उनको इसका भी भान है?

रैक्टर यैन्स छोटे क़दके तथा लम्बे चेहरेके सौम्य फ़ादर हैं। वह इस आश्रमके प्रमुख व्यक्ति हैं, अतः उनसे मिलना अतिथिके रूपमें मेरा कर्तव्य है। आनेके बाद ही एक दिन बुल्केजी मिलानेके लिए ले जाते हैं। उनके बड़े कमरेके दो भाग हैं, एकमें उनका आफ़िस है। हम आफ़िसमें उनसे मिलते हैं। वह मेरा स्वागत करते हुए हर्ष प्रकट करते हैं। उनमें व्यावहारिकता तथा सरलताका विचित्र सामंजस्य परिलक्षित होता है। उनके उत्तरदायित्व, उनके आफ़िस तथा उनकी बातचीतसे यह प्रकट होता है कि वह सभी पक्षोंपर दृष्टि रखते हैं। साथ ही उनकी बातचीतमें यह व्यंजित होता है कि स्वभावकी उनमें सादगी और सरलता आकर्षक है। उनको हमारी मित्रताका ज्ञान है, बुल्केजीने बताया है। हिन्दीमें बातचीत ठीक न कर पानेके लिए क्षमा माँगते हैं और कहते हैं कि हमको अब हिन्दीका व्यवहार अधिकाधिक करना चाहिए। संघमें इस ओर प्रयत्न किये जा रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और बुल्केजीकी प्रेरणा इस दिशामें महत्त्वपूर्ण है। वह स्वयं सीखनेका प्रयत्न कर रहे हैं। फिर वह पुस्तकसे बच्चों जैसी सरलतासे पूछते हैं। हँस-कर कहते हैं कि सीखनेकी कोशिश करता हूँ, पर प्रोग्रेस अच्छी नहीं है।

मैं रैक्टर यैन्ससे एक बार पुनः अकेले मिलने जाता हूँ, उन्होंने हिन्दीमें बातचीत करनेके लिए बुलाया है। वह हिन्दीके बारेमें अपने स्कूलमें क्या कर रहे हैं, इसका परिचय देते हैं। उन्होंने एक पण्डित विद्यार्थियोंको हिन्दी सिखानेके लिए रख छोड़ा है। पर वह उसके कार्यसे सन्तुष्ट नहीं हैं। पंडितजी आदमी भले हैं, पर बातूनी अधिक हैं। पढ़ानेका ठीक ढंग भी नहीं जानते। फ़ादर यैन्स आश्रमके अधिकारीके साथ ही जूनियर्स क्लासके मुख्य शिक्षक भी हैं। उनको एण्टोनीसे भी मेरे बारेमें ज्ञात हुआ है। उन्होंने मेरे यहाँ आनेपर प्रसन्नता प्रकट की। आगे समय मिलनेपर फिर आनेका अभीसे आमन्त्रण भी दिया, बुल्केजीसे उन्होंने पहले ही कह दिया है कि उनका तथा उनके मित्रका यहाँ सदा स्वागत है। यह जगह पढ़ने-लिखने तथा चिन्तन-मननके लिए बहुत उपयुक्त है। फ़ादर इसी तरह साधा-रण चर्चा करते रहते हैं, जैसे वह जीवनको इसी सहज रूपमें ग्रहण करते हों।....अन्तमें हम यहाँसे रवाना होते समय उनसे विदा लेने जाते हैं और वह बहुत स्नेह भावसे हमको विदा देते हैं। उनकी इस विदासे अनुभव होता है, वह सहज ही आत्मीय हो सकते हैं।

अस्सी बरसके फ़ादर फ़ोर्डका उत्साह चमत्कृत करता है। छोटे क़दके फ़ादर फ़ोर्ड अब भी ऐसे चलते हैं कि लगता है तनकर चलते हों। उनकी सफ़ेद लम्बी दाढ़ी फहराती रहती और वह अपनी फूलकी क्यारियोंमें व्यस्त रहते हैं, या अपने चैपल तथा पाठशालामें संलग्न रहते हैं। उनका गाँवके लड़के-लड़कियोंका पाठशाला मेरे इस पीले बँगलेसे कुछ दूरपर ही स्थित है। उसीसे लगा उनका आस-पासके लोगोंके लिए चैपल है, जिसमें रविवार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की सर्विस वह स्वयं करते हैं। इन सब कार्योंके प्रति उनका बड़ा आत्मीय भाव है, और इसका उनके मनमें गर्व ही है। वह सदा हँसते-हँसाते रहना पसन्द करते हैं। बुल्केजी और मुझसे आते-जाते उनकी बातचीत हो जाती है। वह बहुत आत्मीय भावसे अपने फूलके पौधोंको हमें दिखाते हैं। वह उनकी इस प्रकार चर्चा करते हैं, जैसे उन्होंने इन बच्चोंको पालपोसकर बड़ा किया है। उनका उल्लेख भी ऐसे ही करते हैं, जैसे अपने विद्यार्थियोंका—यह गुलाब बड़ा नाटी है, यह लतर बड़ी चंचल है, यह कोमल है, मधुर है, कोई प्यारा है, कोई लाडला है। इनका इस प्रकार परिचय देते और हँसी करते। फिर अपने बच्चोंके लिए कहते—इन बन्दरोंको घेरना क्या आसान है? किताब पढ़नेकी अपेक्षा उसको फाड़ते ही हैं? धीरे-धीरे पालतू बनाना है, बड़े नाटी हैं, पर मुझको प्यारे हैं। कुछ लड़कियाँ तो ऐसे आती हैं जैसे फँसाई हुई चिड़ियाँ, पर बादमें फुदकना सीखकर मेरी दाढ़ी नोचना सीख जाती हैं। फिर अपने चैपल और रविवारकी सर्विसको भी वह कम महत्त्व नहीं देते, कहते हमारे धार्मिक रविवारकी प्रतीक्षा करते हैं, जैसे किसी मेले-में जानेकी प्रतीक्षामें हों। वह अन्य फ़ादरोंके विषयमें हँस लेते हैं। अमुक अभी पचहत्तरके हैं और लगता है कि सौके ऊपर पहुँच गये हैं, अमुक बैठे रहते हैं उनकी हालत सत्तरमें ही ऐसी हो जायगी। वह बुल्केजीको भी लेते—तुम अभी चालीसके होकर भी बूढ़ों जैसी बात करते हो, मेरी ओर देखो मैं तो अब जवान हुआ हूँ। खाली अस्सी तो पार किया है। फ़ादरमें जीवनी शक्ति है जिससे वह दूसरोंको स्फूर्ति देते हैं। उनको अपने कामसे यह प्रेरणा शायद मिलती है। उनको कम दीखता है, पर इसे वह इस रूप-में कभी स्वीकार नहीं करते। कहते रात काम करनेके लिए नहीं है। काम-की जल्दीमें हम फ़ादरको बचा जाते हैं, उनके उत्साहका साथ दे सकना कभी-कभी कठिन भी हो जाता है।

फ़ादर फ़ोर्डके समान ही आकर्षक एक दूसरे वृद्ध फ़ादर हैं डे काइज़र। उनसे संयोगसे भेंट हो जाती है, पर मिलकर लगता है इनसे मिले बिना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यहाँके परिचयकी रेखाओंकी एक महत्त्वपूर्ण सीमा छूट जाती। हज़ारीबाग़ पैरिशके प्रीस्ट मोटर बाइस्किलपर प्रायः आश्रम आते-जाते रहते हैं, वह अत्यन्त व्यस्त व्यक्ति हैं। उनका राँचीसे लेकर हज़ारीबाग़ रोड तथा गोमो तक आना-जाना लगा रहता है। बुल्केजी उनसे परिचय कराते हैं, स्थूलता-की ओर झुके हुए यह फ़ादर अत्यन्त कर्मठ हैं। उन्होंने उल्लासके साथ हमको अपने यहाँ आनेका आमन्त्रण दिया है। हमने निश्चय किया है कि इसी बहाने हमारा नगर घूमनेका कार्यक्रम बन सकता है। फिर एक दिन आकस्मिक रूपसे ही नगरकी पैरिशके लिए चल पड़ते हैं। बुल्केजीने फ़ादर पोनेटसे साइकिल माँग ली है और मैं इलाहाबादके समान साइकिलपर आगे बैठकर चला। जहाँसे नगरसे इस ओर आनेवाली सड़कसे आश्रमकी सड़क कटती है, उसी स्थलसे एक रास्ता गाँवमें होकर नगरसे हज़ारीबाग़ रोड जानेवाली सड़कपर मिलता है। हमको उधर ही जाना है, क्योंकि इधरसे पैरिश चर्च और मिशनका कॉलेज आदि नज़दीक हैं। गाँवसे निकलते समय गाँवके नंगे अधनंगे बच्चे फ़ादर पैसा, साहब पैसा कहकर हमारे पीछे हाथ फैलाकर दौड़े। बुल्केजीने 'हे ओ' चिल्लाते हुए उनको टकरानेसे रोका और वह कहते हैं इधर फ़ादरोंने इनकी आदत बिगाड़ दी है। यह लज्जाकी बात है। बुल्केजी ठीक भारतीयकी तरह सोच पाते हैं, यह उनकी विशेषता है। मेरे मनमें ग्लानि होती है, लगता है जैसे मैं ही पेट खलाकर माँग रहा हूँ। ये बच्चे भिखमंगे भी नहीं हैं, गाँवके किसान मज़दूरोंके बच्चे हैं। केवल गोरे रंगके लोगोंसे इस प्रकार पैसे पाये जा सकते हैं, इस भावसे वे माँगते हैं, यह और भी वेदनाकी बात है। अमरीकी सैनिकोंने इस प्रकार पैसा देकर और भी इनको दया और तमाशाका पात्र बना दिया है।

बीचमें पानी ज़ोरसे आ जाता है, हमको एक स्कूलकी इमारतमें शरण लेनी पड़ती है। पर पानी थोड़ी देरमें ही निकल जाता है और फिर हम एक तालाबके किनारेसे मुड़ते हुए मुख्य सड़कपर आ जाते हैं। यहाँसे चढ़ती उतरती सड़कको पार करते हुए हम पहले मिशनके कॉलेज़के समीप-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से गुज़रते हैं, फिर रास्तेमें लाल कम्पनीका बस स्टेशन भी पड़ता है, जहाँ वास्तवमें मुझे उतरना था और जहाँसे मुझे जाना भी होगा। मुझे शीघ्र जाना है, इसका उल्लेख करते हुए बुल्केजी कहते हैं यह चर्चा हम अभी नहीं करेंगे। मुझे भी जानेकी बातसे कुछ क्लेश होता है, पर यह बुल्केजीको भी ऐसा ही लगता है। हम घूमकर पैरिशके घरमें पहुँच जाते हैं, उसके बग़लमें एक छोटा-सा चैपल बिलकुल नया बना दिखाई दे रहा है।

पैरिश हाउसपर पहुँचनेपर पता चलता है कि यहाँके इंचार्ज फ़ादर राँची चले गये हैं, जिन्होंने हमको निमन्त्रित किया था, उनको आकस्मिक रूपसे जाना पड़ गया है। पर बूढ़े फ़ादर डे काइज़रसे भेंट होती है। वह बुल्केजीको पाकर उल्लसित हो उठते हैं। जब मेरा परिचय मिलता है, तब मेरा भी उसी उत्साहसे स्वागत करते हैं। फ़ादर फ़ोर्डके समान ये भी अंग्रेज़ीमें ही बातचीत कर सकते हैं, जिस ज़मानेके ये लोग हैं, उसमें हिन्दी-की क्या वक़त हो सकती थी और इनको ज़मानेके परिवर्तनपर ध्यान देनेकी आवश्यकता भी क्या है? बुल्केजी जब उनका परिचय देते हैं, तब फ़ादर कह उठते हैं—"माइण्ड यू, आई ऐम डे काइज़र, नॉट दि कैज़र। मैं ज़मीन-की बादशाहत चाहनेवाला कैज़र नहीं हूँ, मैं काइज़र स्वर्गकी बादशाहतका आकांक्षी हूँ।" इसपर हम सब फ़ादरके साथ हँस पड़ते हैं। और परिचयसे ही समझ लेता हूँ, मैं एक दूसरे ज़िन्दादिल व्यक्तिके साथ हूँ। तिरासी वर्षकी अवस्थामें भी फ़ादर काइज़रमें युवकों जैसा उत्साह लगता है। वस्तुतः जान पड़ता है कि ये किसी विगत युगके लोग हैं, जिनमें जीवनका अदम्य उत्साह रहा है।

उत्साहमें समान होकर भी इन फ़ादरमें फ़ादर फ़ोर्डसे एक अन्तर है; उनमें वर्तमान कर्मके प्रति अब भी उत्साह है, पर इन फ़ादर काइज़रमें गत कल्पनाओंमें जीनेका आग्रह अधिक है। वह पिछले जीवनकी स्मृतियोंमें अधिक उल्लासका अनुभव करते हैं। यही कारण है, उनकी बातोंमें कहीं अधिक आकर्षण तथा रोचकता है। हम लगभग दो घंटे यहाँ रुकते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस बीच हमने चाय पी, चैपेल देखा, कुछ देर बरामदेमें भी बैठे। पर सारे समय फ़ादर काइज़र अपनी रोचक बातोंमें हमको घेरे रहते हैं। उनकी चर्चाओंमें छोटे नागपुरके घने जंगली इलाक़ेमें विभिन्न पैरिशोंमें उनके रहनेका वर्णन है। सचमुच इस जंगलोंसे भरे इलाक़ेमें प्रीस्टके रूपमें रहना अपने आप रोमांचक है। काफ़ी दूर तक फैले क्षेत्रमें उनकी पैरिशोंका विस्तार रहता था, और किसी भी कैथलिककी धार्मिक आवश्यकतामें पैरिश प्रीस्टको पहुँचना ही होता है, यह उसका परम कर्तव्य है। अन्तिम समयकी पाप स्वीकृतिके लिए उनको रातमें घने जंगलोंको पारकर गाँवोंमें पहुँचना पड़ा है। कभी घोड़ेपर जाना होता, कभी पैदल ही चल पड़ना होता। ऐसी यात्राओंमें बाघ या भालूसे मुलाक़ात हो जाना साधारण बात है। फ़ादरने ऐसी एक दो घटनाओंका रोचक वर्णन किया। उन्होंने पहाड़ियोंसे घिरे एक स्थानका ऐसा वर्णन किया कि हमारी वहाँ जानेकी इच्छा ही जाग्रत हो गयी।

उन्होंने उत्साहके साथ नये बने चैपलको दिखलाया, और उसके बाद हम विदा लेते हैं। विदा देते समय फ़ादरका भाव है, जैसे वह हमारे आनेसे कृतज्ञ हुए हैं। हमने निश्चय किया है कि झीलके किनारे घूमनेके बाद वापस लौटेंगे। लेकिन जब हम विस्तृत हज़ारीबाग़ लेकके किनारे-किनारे बातचीतमें डूबे घूम रहे हैं, अकस्मात् ही काली घटाएँ छा जाती हैं, और थोड़ी देरमें मूसलाधार पानी बरसने लगता है। हम बरगदकी घनी छायाके नीचे बचनेका प्रयास कर रहे हैं, बुल्लेजी मुझे बचानेकी कोशिशमें हैं। लेकिन पानीसे बच सकना असम्भव है, अन्ततः भीग जानेके बाद हम चल देना ही उचित समझते हैं। लेकिन पानी जब तक कम नहीं हो जाता, हम साइकिलपर चल कैसे सकेंगे? पर पानी जितना तेज आया था, उतनी ही जल्दी साफ़ भी हो गया है। और अब हम झीलके चारों ओरका चक्कर काटते हुए वापस लौट रहे हैं। झीलके विस्तारके चारों ओर रामबाँसके नोकदार लम्बे पत्तोंके बीचमें ऊँचे दण्डोंपर खिले हुए श्वेत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फूल नीले आकाशकी पृष्ठभूमिमें मोहक लग रहे हैं। और हम इस जल्दीमें हैं कि घर वापस जाकर अपने भीगे कपड़े बदलें।

ऐसा नहीं है कि यहाँ फ़ादर्स तथा ब्रदर्सकी रेखाओंके अतिरिक्त अन्य रेखाएँ उभरती ही न हों। यह हमारा सुबह-शाम पानी भरनेवाला चमकते हुए काले रंग और मुखपर संलग्नताकी चेष्टा लिये नित्य आता-जाता रहता है। वह आदिवासी ईसाई है और दोनों ही संस्कार उसमें मिल गये हैं। वह साफ़-सुथरा सौम्य तथा मृदु लगता है, विनम्र भावसे काममें लगे रहना उसका स्वभाव है। रविवारको वह अपनी पत्नी तथा बच्चेके साथ रंग-विरंगे कपड़ोंमें गिरजा आता है। दूसरा है पासके गाँवका नाई जो सप्ताहमें दो दिन मेरी दाढ़ी बनाने आता है। वह नाई ही है, उसके बातचीत करनेके आग्रहसे सिद्ध है। प्रारम्भमें वह कुछ संकोच करता है, लेकिन वस्तुतः केवल वह यह टोह ले रहा था कि मेरा धर्म क्या है, मैं किस प्रकारका व्यक्ति हूँ। शायद उसको यह अन्दाज़ मिल गया है कि मैं हिन्दू हूँ। वह व्याजसे, संकेतोंसे कहना चाहता है कि मैं जिनके बीच हूँ उनका धर्म-कर्म ठीक नहीं है। फ़ादर होकर भी खाने-पीनेमें इनको परहेज़ नहीं है। यह भी संकेत देता है कि मुझे इनके प्रभावसे बचना चाहिए, क्योंकि इनका मतलब अपना धर्म-प्रचार करना है। साफ़ स्पष्ट नहीं कहता, पर व्यंजनामें कह देता है। मैं सोचता हूँ कि इस अपढ़ और गाँवके व्यक्तिमें भी अपने धर्मका कैसा पक्षपात है! भले ही उसकी दृष्टिमें खान-पान, छुआ-छूत, रहन-सहन ही धर्मके प्रमुख अंग हों। उसको यह समझानेका व्यंजसे प्रयत्न भी करता हूँ कि साधुता, सदाचार, अच्छाई किसी धर्म विशेषकी चीज़ नहीं है, पर वह समझनेके स्थानपर मुझे ही सन्देहकी दृष्टिसे देखता है।....अपनी गप-शपमें यहाँकी जनश्रुति भी सुना जाता है, मैंने अधिक ध्यान नहीं दिया, पर इतना समझ पाया हूँ कि यहाँ आस-पास कोई दो आदिवासी राजा किसी प्राचीन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कालमें रहते थे। एककी सुन्दर राजकुमारीका प्रेम किसी साधारण व्यक्ति-से था, और राजा चाहता था कि पुत्रीका विवाह पासके राजकुमारसे हो। विवाह तै भी हो चुका था। लेकिन पुत्रीके संकल्पको जानकर पिता पासके राजाको मना कर देता है। राजा इसको अपना अपमान समझकर आक्रमण करता है। और घमासान युद्धके बाद राजकुमारीके पक्षका भयानक संहार हुआ, उसके पिता और प्रेमी मारे गये। राजकुमारीको बलपूर्वक राजकुमार पक्षके लोगोंने बन्दी बना लिया। इसपर राजकुमारीने आत्महत्या की और शाप दिया, जिसके परिणाम स्वरूप यह सारा इलाक़ा पहाड़ोंसे भर गया।.... बादमें कथाको ध्यानपूर्वक न सुननेका मुझे अफ़सोस भी होता है, क्योंकि ज्ञात हुआ कि इधरकी यह प्रसिद्ध लोककथा है। मेरे मनमें उसके केवल ग़लत-सही सूत्र इसी प्रकार बुने हुए हैं। जो भी हो कथामें इस प्रदेशकी मार्मिक व्यथा भरी है।....एक दिन नाईने क्लेशके साथ अपना यह रहस्य भी मुझे बता दिया कि उसकी पत्नी किसी अन्यके साथ चली गयी है और दो बच्चोंके पालनका भार भी उसपर छोड़ गयी है इसीसे देर सबेर हो जाती है। फ़ादर लोगोंकी कृपासे चल जाता है, उसे इस बातका गर्व भी है कि बड़े-बड़े फ़ादर उससे अपनी दाढ़ी छटवाते हैं।

चलनेके दस-बारह दिन पूर्व यहाँके पण्डितजी छुट्टीसे वापस आ जाते हैं। दामोदर शर्मा कई मानोंमें रोचक हैं। बातूनी ही नहीं वह गप्पी भी हैं। जब बात शुरू करते हैं, उनसे पिंड छुड़ाना आसान नहीं होता। हमने शीघ्र ही निश्चय कर लिया कि पण्डितजीको अधिक प्रोत्साहन देना उचित नहीं है। वह बेचारे हमारी खोजमें रहते हैं, और हम उनसे कार्यकी व्य-स्तताका सहारा लेकर मुक्ति पाते हैं। कुछ दिन उन्होंने खाना हमारे साथ खाया, और उस बीच ही उन्होंने यह सूचना हमको दे दी कि बिहारका शायद ही कोई बड़ा आदमी हो, जिससे उनका परिचय न हो, वह भी परि-चय मात्र नहीं। एक दिन साहित्यकारोंकी चर्चा चलती है तो वह सभी साहित्यकारोंके बारेमें वही भाव व्यक्त करते हैं। पर वह सतर्क हैं, जान-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कारी और पहुँचकी सीमा बिहारके बाहर नहीं बढ़ाते, जानते हैं कि उधर बढ़ते ही बात खुल जानेका ख़तरा है। हम मानकर चलते हैं कि यदि दामोदर शर्माका यहाँके प्रमुख मन्त्रीसे घरेलू सम्बन्ध है तो इससे हमारा लाभ नहीं तो हानि क्या हो सकती है, यदि उनको दिनकरजी निकटसे जानते हैं तो इससे भी किसीका क्या बिगड़ता है! अतः हमने कभी प्रतिवाद नहीं किया। इच्छानुसार रस ही ग्रहण करते हैं।

एक दिन बहुत आग्रहकर वह मुझे मि० सिन्हाके यहाँ ले जाते हैं जो आश्रमसे एक मील नगरके सीमान्तपर अपने निजी बँगलेमें रहते हैं। उनसे शर्माकी सचमुच घनिष्ठता है, पर यह घनिष्ठता उसी प्रकारकी है जैसी घरके बच्चे पढ़नेवाले ट्यूटरसे घरके साधारण काम करवा लेनेके लिए अपेक्षित होती है। पर सिन्हा, उनकी पत्नी तथा उनकी पुत्रीने मेरा स्वागत सत्कार भली प्रकार किया और मैं शर्माजीको इसका श्रेय देनेका भरसक प्रयत्न करता हूँ। इसी कारण मैं उनको अपनी बातचीतमें साथ रखना चाहता हूँ। मि० सिन्हा रहन-सहनमें पूरी तरह पश्चिमी ढंगके हैं, पर उनकी बातचीतसे उनकी सीमाएँ स्पष्ट हो जाती हैं। उन्होंने हमारे विश्वविद्यालयके बारेमें पूछा कि वहाँ वाइसचांसलर कौन हैं, उनके उच्चारणमें व्हाइसचांसलरकी स्पष्ट ध्वनि है। मैं बता देता हूँ, इसपर उनका आक्रोश प्रकट होता है। आप यू० पी० के लोगोंमें क्या कोई योग्य व्यक्ति नहीं है, जो आप बंगालीको चुनते हैं, वैसे तो आप बिहारसे आगे अपनेको मानते हैं, पर हमारे यहाँ तो किसी प्रकार वाइस (व्हाइस) चांसलर बंगाली नहीं चुना जा सकता है। मैंने समझाना चाहा कि वे हमारे विश्वविद्यालयके बहुत पुराने टीचर रहे हैं। इससे भी उनका न समाधान होता है और न उनका आक्रोश कम होता है।....मैं कृतज्ञतापूर्वक विदा लेता हूँ, विशेषकर श्रीमतीसे क्योंकि उन्होंने बहुत दिनोंके बाद मुझे अपने ढंगकी मिठाइयाँ और नमकीन खानेका अवसर दिया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन सब रेखाओंके साथ वे धूमिल सीमा रेखाएँ भी मिलजुल जाती हैं जिनको मैं अपने अहातेमें या बाहर आम बीनते देखता हूँ। यहाँ कलमी आमको ही महत्त्व दिया जाता है, फ़ादर तुक़मी आमको जंगली फल मात्र मानते हैं। इनमें अधिकांश नंगे या अधनंगे लँगोटी लगाये बच्चे ही रहते हैं। इसी प्रकार लकड़ीके गट्ठर सिरपर रखे स्त्रियाँ और बहेंगियोंपर ढोने-वाले पुरुष भी बार-बार मेरी दृष्टिपथपर आ जाते हैं। इनके साथ मेरी भावना संवेदित होती है, ये अपरिचित भावसे मुझे देखते हैं, पर मुझे लगता है ये कहीं गहराईमें मुझसे सम्बद्ध हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीते क्षणोंकी घाटीसे विदा

•

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

: १३ :

आज जा रहा हूँ, वापस जाना है। कल रात घूमते हुए बुल्केजीसे बात-चीत करनेके समयसे यह महसूस कर रहा हूँ। सुबह घाटीमें रोज़की तरह टहलने गया हूँ, सोचा है कि हरी घाटीसे विदा लेना है। पर जब घाटीके बीच में खड़ा हूँ, तो लगता है कि घाटीका जीवन, स्पन्दन, सजीवता, आत्मीयता सब कुछ विलीन हो चुकी है। एक पत्थरोंकी पहाड़ी घाटी है, उसमें ऊँचे-नीचे चट्टानों, पेड़ोंसे ढँके शिखर, उनकी उपत्यकाओंमें घने जंगल, दूसरी ओर भी पेड़ोंसे ढँकी एक श्रेणी और बस। चारो ओर उतरते-चढ़ते जंगल हैं। यह वैसी ही एक साधारण घाटी है, जैसी अनन्त घाटियाँ विन्ध्यकी पूर्वसे पच्छिम तक फैली विहार, उड़ीसा तथा मध्यप्रान्तकी श्रेणियोंमें मिल जाँयगी। आया था उमंगित-सा कि अपनी हरी घाटीसे विदा लूँगा, इतने दिनोंकी आत्मीयता, ममता और संवेदनोंके लिए कृतज्ञता प्रकाशित करूँगा। पर वह हरी घाटी है कहाँ? किससे लूँ विदा? यह जड़, निर्जीव घाटी नहीं थी वह।....वापस लौट रहा हूँ, किसी चोटीने कुछ नहीं कहा, किसी पेड़ने विदा नहीं दी, श्रेणी जड़ है और हवा भी केवल चल रही है। सोचता हूँ ऐसा नहीं कि वह घाटी थी नहीं, ऐसा भी नहीं कि वह असत्य थी, और ऐसा भी नहीं कि वह अनुभव झूठ था। केवल क्षण बीत गया है और घाटी भी रीत गयी है। लौट रहा हूँ, अन्तमें घाटी तटस्थ है।

यहाँसे दो बजे जाना है, चार बजेकी बस हज़ारीबाग़ रोडके लिए पकड़नी है, बुल्केजी शहर तक साथ जाँयगे और मुझे बसपर चढ़ाकर किसी भी बससे आज ही राँची चले जाँयगे। भोजनपर बुल्केजी कहते हैं—"रघुवंश, तुम जा रहे हो, अब यहाँ रहनेमें मन नहीं लगता। अच्छा है मुझे भी जाना है, कॉलेज खुल रहा है।" मैं कहता हूँ—"हाँ, ऐसा ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है।" वह मेरी बातपर ध्यान बिना दिये कहते जाते हैं—"इलाहाबाद मेरे लिए बहुत आत्मीय है, वहाँ मुझे मायका जैसा लगता है और वहाँके लोग मुझे पीहरके लोग जैसे प्रिय हैं। और तुम, तुम तो मेरे भइया हो।" उनको मायकेकी इस उपमामें काफ़ी रस मिलता है, यह मैं जानता हूँ। मन मेरा भी खिन्न है, पर मेरी सारी उदासी अजब प्रकारकी तटस्थतामें बदलती जा रही है। और मनके ऊपर उभर रहा है—जाना है, जा रहा हूँ। जानेकी स्थितिमें हूँ और यह भी स्थिति है, इसको अस्वीकार किया नहीं जा सकता। मेरी मनःस्थितिको बुल्केजी उदासी मानकर उल्लसित करनेका प्रयत्न करते हैं।

सामान ठीक हो चुका है। हम दोनोंका सामान लेकर आदमी चला जा चुका है। हम लोग साइकिलसे जाँयगे। पैरिशमें सामान मिल जायगा। फिर कुछ देर आराम करके हम विदा होनेके लिए लिए तत्पर होते हैं। फ़ादर यैन्ससे हम मिलते हैं, वह बाहर आकर विदा देते हैं, फ़ादर मिनिस्टर विदाके समय आ गये हैं। फ़ादर पोनेट तथा औरोंसे विदा हम ले भी चुके हैं। सब आत्मीयतासे विदा दे रहे हैं, बुल्केज़ी उसी भावसे विदा माँग भी रहे हैं। ऊपरसे मैं भी वही कर रहा हूँ, पर अन्दरसे लगता है कि वह भाव कहीं दूर अनुगुंजित भर होता है। मैं केवल ऐसी स्थितिमें हूँ कि जा रहा हूँ। मार्गमें बुल्के भाई पूछते हैं कि मेरा कार्यक्रम क्या रहेगा? मैं कह देता हूँ कि अभी कोशका कार्य हाथमें है, पर जीविकाका सवाल हल करना भी है ही। वह प्रोत्साहन देते हुए कहते हैं कि इस बार विश्व-विद्यालयमें कोई स्थान हो सकता है। देख लो, नहीं तो फिर बाहर जानेकी बात सोची जा सकती है। मैं हाँ कर लेता हूँ, पर लगता है, यह मेरे मनको छूनेकी बात ही न हो।

बसपर बैठ गया हूँ, बुल्केजी विदाके पूर्व मेरी दोनों बाहोंको अपने हाथोंमें दाब कर प्यारसे विदा देते हैं। पत्र लिखनेकी याद दिलाना नहीं भूलते और स्वास्थ्यकी चिन्ता रखनेकी सलाह देना भी नहीं भूलते। जैसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बड़े छोटोंको सदा सलाह देते आये हैं, स्नेह और ममताके साथ। पर यह क्या हो गया है, मुझे ? अन्दरसे कुछ उमड़कर भी मिट जाता है। मैं स्नेहका प्रतिदान नहीं दे पाऊँ यह कैसा परिवर्तन है ? एक ओर बुल्के हैं जो स्नेहसे वत्सल हो उठे हैं और मैं हूँ कि जैसे द्रष्टा हूँ, भोक्ता नहीं ! एक और खलनेकी बात है कि मेरी इस जड़ताको बुल्के भाई समझ रहे हैं कि मैं उदास हूँ, व्यथित हूँ, मोह मुझे घेर रहा है। मैं चाहता हूँ कि मेरे मनमें भाव जागे, मैं इस विदासे संवेदित हो सकूँ, इसकी वेदना महसूस करूँ। पर जैसे सारे भाव और सारी संवेदनाएँ कहीं दूर आभासित हों, मेरे अस्तित्वसे परे और मैं रोता हुआ बस हूँ। मैं यहाँ इस घाटीके प्रति कृतज्ञ होना चाहता हूँ, बुल्केजीके स्नेह और ममताको जाते समय अनुभूत व्यथाके रूपमें पाना चाहता हूँ। पर यह अजब अवशता है।

बस स्टार्ट होती है, बुल्केजी हाथ उठाकर विदा देते हैं। मैं चुपचाप उनको उस हर्ष-विषादकी भावनासे उद्वेलित देखता रहता हूँ। उनकी वह भंगिमा कुछ क्षण रुककर मनसे धीरे-धीरे हट जाती है और देख रहा हूँ बस नगर पार हो रही है। आगे वह स्थान मिलता है जहाँसे हम आश्रमके लिए गाँवके रास्तेपर होकर साइकिलसे साथ-साथ कई बार गये हैं। एक बार उत्सुकता जैसे उठती है, पर अनुभव होनेके पहले विलीन हो जाती है। सोचता हूँ बुल्केजी अब राँचीकी बसपर जा रहे होंगे। बस एक पहाड़ीके पार्श्वसे निकलती है, ग़ौरसे देखनेमें लगता है, यही वह हस्तिपीठ पहाड़ी है जो इतना पीछा करती थी, उसको बस घूमकर पार कर जाती है और वह एक ओर छूट गई है। सड़क फैलती हुई आगे बढ़ती जाती है, डिलक्स बस-की आरामदेह सीटपर बैठा एक दृष्टि चारोओर डाल रहा हूँ, केवल समझने-के लिए। अनुभव, उसकी स्थिति नहीं है। मेरी बाईं ओर दूरीपर एक पहाड़ी श्रेणी घूमती हुई कई शिखरोंमें फैली है, मैं समझ लेता हूँ यही श्रेणी है जिसके एक पार्श्वमें नीचेकी ओर सेण्ट स्टेनिसलॉसका आश्रम है। कुछ देर-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के लिए वह दिखाई भी देता है। सड़क घूमती जाती है, और यह पहाड़ी दूर होती छोटी और नगण्य होती-होती मिट जाती है।

बस काफ़ी गतिसे दौड़ रही है और इसके केवल दो स्टॉपेज हैं, यह स्पेशल है। सड़क पहाड़ी श्रेणियोंको पार करती, नीचे उतरती, कभी ऊपर चढ़ती भाग रही है। बसपर अधिकांश सम्भ्रान्त लोग हैं, जिनको कलकत्ता या दिल्लीकी ओरकी ट्रेनें पकड़नी हैं। मेरा टिकट भी इलाहाबाद तकका सीधा है। पासकी कुछ महिलाएँ बातचीतमें व्यस्त हैं, सम्भव है एक परिवारकी हों। वैसे वे एक क्षणमें परिचय करनेकी कला भी जानती हैं। एक सज्जन मिलेट्री ड्रेसमें हैं, कमीशन रैंकके होंगे। दूसरे सज्जन बातचीतका मौक़ा न पानेके कारण बहुत खिन्न हैं और शायद मनमें इसके लिए पछता रहे हैं कि उनके पास मेरे जैसा आत्मलीन व्यक्ति है। मैं फिर बाहर दृष्टि फैला लेता हूँ और दूरकी क्षितिजपर चली गयी पहाड़ी श्रेणियों और सामने उठते-गिरते आकाशमें अपने मनको उलझानेका प्रयत्न करता हूँ।

बस पहले स्टॉपेजपर रुकती है। कुछ देरके लिए बाहर निकलनेका अवसर मिल जाता है। इस बीच दूसरी ओर जानेवाली एक अन्य सड़कपर कुछ दूर घूम आता हूँ, वैसे ही अनिश्चित भावसे। फिर बस रवाना होती है और उसी तरह एकरस पहाड़ी रास्तेके बीच दौड़ती रहती है। वैसे अब समतल क्षेत्र अधिक है और धानके खेत अधिकाधिक बढ़ते जा रहे हैं। बस दूसरे स्टॉपेजपर रुकी है। वहाँ एक व्यक्ति मिल जाते हैं, जिन्होंने अंग्रेज़ी स्कूलकी मास्टरीसे स्वतन्त्रता संग्रामके दिनोंमें मुक्ति ले ली थी और कई वर्ष जेल काटी है। अब देशके स्वाधीन होनेके बाद वह यहाँ अपनी ज़मीनपर खेती करने आ गये हैं। यह खेती ननिहालसे उनको प्राप्त हुई है, उनका अपना घर तो मुजफ़्फ़रपुरमें है। यहाँ वह खेतीकी योजना लेकर बस गये हैं। दो वर्षोंमें कुछ जम भी गये हैं, पर यहाँके लोग उनको उखाड़नेकी फ़िक्रमें हैं। उनको इनका यहाँ बसना अच्छा नहीं लग रहा है, यद्यपि वह अपनी भरसक यहाँके लोगोंकी सहायता ही करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुझे भी लगता है यह खद्दरधारी सौम्य मास्टरजी दूसरोंकी सहायता ही कर सकते हैं, इनसे कोई क्यों विरोध करना चाहेगा ? पर ज्ञात होता है इधरके ज़मींदार समझते हैं कि मास्टरके रहनेसे इनके हितोंको हानि हो सकती है और वे प्रभावशील हैं, ग़रीब लोगोंको थोड़ा लोभ देकर इनके विरुद्ध भड़काना आसान है। मैं कहता हूँ, यहाँके शासनके कर्णधार तो आपके साथके ही लोग हैं, मिनिस्टर, चीफ़ मिनिस्टर सभीसे आपका परिचय होगा। 'हाँ, है क्यों नहीं, हमने वर्षों साथ काम किया है।' फिर वह हँसकर कहते हैं—'ऐसा ही होता तो मैं यहाँ होता ही क्यों ?' उनकी हँसीमें निराशा नहीं, पर व्यंग ज़रूर है, ऐसा मैं महसूस करता हूँ।

दो घण्टेके अन्दर हम हज़ारीबाग़ रोड पहुँच जाते हैं। स्टेशनके कम्पाउण्डमें बस सवारियाँ उतारती है। यह वही स्थान है जिसको पहले हज़ारीबाग़ नगर समझता था। कुली सामान उठाकर वेटिंग रूममें पहुँचा देता है, अभी तूफ़ान आनेमें दो घण्टेसे भी अधिककी देर है। सोचता हूँ, तब तक कहीं खाने-पीनेका प्रबन्ध हो सके तो अच्छा है। रेस्तराँ साधारण क़िस्मका है, वहाँ टोस्टका भी प्रबन्ध नहीं हो सकता। फिर मैं उस हलवाईकी दूकानपर पहुँचता हूँ, जो थर्डक्लास वेटिंगरूमसे लगा हुआ है और उसके सामने ही टिकटघर है। वहाँ गरम समोसा और जलेबी मिल सकती है, मैंने तय कर लिया कि इसीसे काम चलाना चाहिए। हलवाई सीधे स्वभावका है और उसका नौकर लड़का मेरी सेवामें मनोयोगसे लग जाता है। वह मेरे लिए चाय भी तैयार करता है, और इस प्रयत्नमें है कि मेरी कोई भी सहायता करनेका अवसर पा सके। उसके इस अनायास स्नेहकी ओर आकर्षित होता हूँ, पर लगता है यह ऐसा सभी ग्राहकोंके साथ करता होगा। थोड़ा बहुत ही खा सका, माँगी हुई सामग्रीमें बहुत सा शेष रह गया है। मैं लड़केसे किसीको देनेके लिए कहकर उठ जाता हूँ, लड़का विस्मित जान पड़ता है। फिर जब मैं पैसे चुकानेके बाद उसको दो आना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

टिपके देता हूँ, तो वह हथेलीपर पैसे रखे अवाक् मेरी तरफ़ देखता रहता है। हलवाई संकोच और हँसीको मिलाते हुए कह देता है—"यह भइयाजी अपना ही लड़का है।" पहले तो मैं सोचता हूँ ग़लती की है और उसका समाधान भी तुरन्त करना चाहिए, मालिकको नौकर मान बैठा हूँ। फिर बात सँभालकर कहता हूँ—"क्या हुआ, अपने बच्चोंको भी दिया जा सकता है।" इसपर हलवाई खुश होकर हँस देता है—"ले लो, भइया दे रहे हैं।" लड़का संकोचके साथ मुट्ठी बन्द कर लेता है, उसके मुखपर हर्ष व्यंजित न हो, ऐसी बात नहीं है।

एक घण्टे तक स्टेशनके प्लेटफ़ार्मपर एक सिरेसे दूसरे सिरे तक घूमता-घूमता थक चुका हूँ। यहाँ स्टेशनके दूसरी ओर कुछ हटकर ऊँची पहाड़ियाँ हैं, जिनके कारण ही सम्भवतः मेरे मनमें पहले यह भाव था कि हज़ारीबाग़ नगर यहीं होगा, क्योंकि उसका वर्णन ऐसा ही कुछ सुना था। वेटिंगरूममें बैठा हूँ, सामनेकी कुरसीपर एक महिला है, जिसको लड़की कहना अधिक अच्छा लगता है। मन लगानेके लिए सूटकेस खोलकर पुस्तक निकालना चाहता हूँ। कौन-सी पुस्तकमें मन रम सकेगा, एक-एककर पुस्तकें उलटनी पड़ती हैं। मेज़पर कई किताबें फैला ली हैं, पर यह निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ कि कौन-सी पुस्तक ऊपर निकालूँ। कुछ पुस्तकें समाप्त कर चुका हूँ, ज़ोलाकी दूसरी नोवेल चलेगी नहीं, टाल्सटाय-की जीवनी समाप्त कर चुका हूँ, 'वेदरिंग हाइट' पढ़ चुकनेके बाद भी पढ़ सकता हूँ, पर उतने मानसिक तनावको सहन करनेकी मनःस्थितिमें नहीं हूँ। हेमिंग्वे चल सकते हैं। ईमीटेश, गीता, उपनिषद् सबको मेज़से उठा कर सूटकेसमें रखता हुआ यही निर्णय करता हूँ, यही····। मुझे लगता है मेरी उधेड़-बुनको कोई देख रहा है। दृष्टि उठाता हूँ, तो वह महिला यह सब देख रही है। मैं अपने कामको समाप्त करनेमें फिर लग गया हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूटकेस फिर व्यवस्थित करके रख दिया जाता है और मेरे हाथमें 'एफ़ेयर वेल टू आर्मस' है।

अब जब मैंने पढ़नेकी व्यवस्था कर ली है, तब मेरा ध्यान सामनेकी ओर बार-बार जाता है। देखता हूँ, स्वस्थ और साधारणतः सुन्दर। युवती स्वस्थ होनेसे सुन्दर लगती है। इस युवतीमें लगता है कुछ विशिष्ट असाधारण भी है। वह युवती है, अतः आकर्षक भी, यह भाव उठा भर। लेकिन वह व्यक्तित्व है, यह ऐसा लगना अधिक आकर्षित कर रहा है। पुस्तकके पृष्ठोंसे मेरी दृष्टि उसकी ओर जाती है, कई बार उसकी भंगिमाको देखता हूँ, पर दृष्टि मिलते ही अनायास नीची हो जाती है। उसे मेरा भाव मालूम है, यह जानकर भी मन सहज ही लेता है। जैसे संकोच स्थितिका है, मनका नहीं। पढ़नेमें लग गया हूँ, इसी बीच कुली आकर सूचना देता है कि तूफ़ान आनेका समय हो गया है। फिर मैं कुलीके पीछे प्लेटफ़ार्मपर चला जा रहा हूँ। वेटिंग रूम मनःस्थितिसे पीछे छूट गया है।

तूफ़ान आकर लग गया है और कुली सेकण्ड क्लासकी बोगीमें ख़ाली सीटवाले कम्पार्टमेण्टकी खोजमें आगे बढ़ रहा है, मैं उसके पीछे हूँ जैसे सब हो रहा है और हो जायगा। सामनेके कम्पार्टमेण्टमें दूसरी ओरकी दोनों सीटोंपर बिस्तर बिछे हैं, पर इधरकी सीट पूरी ख़ाली है। कुली चढ़ जाता है और मेरा बिस्तर उसी सीटपर लगा देता है। कुलीको विदा कर इस भावसे बैठा हूँ कि सीट मिल गयी है और अब ट्रेन चलनेके बाद ही कुछ निश्चय करूँगा। इतनेमें एक युवती कम्पार्टमेण्टके सामने खड़ी हो जाती है, उसके पीछे कुली है, वह कह रही है—"यहीं ठीक है, औरोंमें जगह नहीं है।" फिर वह ऊपर आ जाती है। मेरी सीटके ऊपरकी बर्थ ख़ाली है, उसने अपना सामान उसीपर रखवा लिया और कह देती है, वह ठीक कर लेगी। कुलीको पैसे दे दिये गये हैं और वह जा रहा है। तभी वह पूछती है—"आप माफ़ करेंगे, तकलीफ़ तो होगी।" मैं समझ नहीं पा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहा हूँ, किस बातकी यह माफ़ी है और क्यों मुझे तकलीफ़ होगी। कह देता हूँ—"ठीक है।"

ट्रेन चल दी है। वह अपना सामान लगानेके बाद मेरी सीटपर दूसरी ओर बैठते हुए कहती है—"अभी कुछ देर तो आप जागेंगे।" मैं 'हूँ' कह देता हूँ। समझ गया हूँ, यह वही युवती है। मैं कुछ भी अनुभव नहीं करता, केवल बाहर देख रहा हूँ। एक ओरकी धोक लगा ली है। दूसरी खिड़कीपर युवती बैठी है। अन्य सीटोंके लोग सोनेकी तैयारी कर चुके हैं, शायद इस प्रतीक्षामें हैं कि हम लोग भी व्यवस्था कर लें। हमारे बैठनेके ढंगसे समझ लेते हैं, अभी हम सोने नहीं जा रहे हैं और वे लोग अपनी सीटोंपर चले जाते हैं। अभी बजा ही क्या है? मैं सोचता हूँ, मुझे नींद नहीं आ सकेगी, पढ़कर ही समय बिताया जा सकता है। मैं पढ़नेका उपक्रम करना ही चाहता हूँ, तभी युवती कहती है—"यदि आपको एतराज़ न हो तो लाइट आफ़ कर दी जाय। और लोग सोना चाहते हैं।" मैं कह देता हूँ—"अभी तो काफ़ी अर्ली है।" फिर मैं पढ़ने लग जाता हूँ। समय बीतता जा रहा है, मैं अपनी पुस्तकमें आगे बढ़ रहा हूँ। कभी बाहर देखता हूँ, अँधेरी रात है, पर तारोंसे भरे आकाशके नीचे छाया-प्रकाशमें दृश्य उभर रहे हैं। यह हज़ारीबाग़ और गयाके बीचकी पहाड़ियोंका विस्तार है। बस पहाड़ियाँ, घाटियाँ, नदियोंकी गहराइयाँ, जंगलोंकी सघनता गुज़रती जा रही है, मैं एक आँख बीच-बीचमें देख लेता हूँ तटस्थ भावसे और अपनी पुस्तकमें लग जाता हूँ।

शायद घण्टे भरसे अधिक बीत चुका है। ट्रेन कोडरमाको पार कर चुकी होगी, मुझे इसका अन्दाज़ नहीं लग सका है। आज ट्रेन काफ़ी लेट चल रही है। एकाएक एक सहयात्री उठते हैं और यह कहकर—"एक्सक्यूज़ मी, नाऊ आई वाण्ट टु स्लीप", लाइट आफ़ कर देते हैं। उनके स्वरकी खीझको मैं समझता हूँ और चाहता हूँ कि माफ़ी माँग लूँ, पर इसका अवसर उन्होंने दिया नहीं। वह बिस्तरपर लेट चुके हैं। अब या तो मैं सो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकता हूँ, पर सीटकी दूसरी ओर युवती अब भी बैठी है, नहीं तो बाहरके दृश्यमें मन लगा सकता हूँ। धुँधला अन्धकार कम्पार्टमेण्टमें है, बाथकी लाइट जल रही है। मेरी स्थितिका जैसे अनुमान लगाकर युवतीने कहा—"शायद आप अभी सोना नहीं चाहते।" मैं कह देता हूँ—"सो भी सकता हूँ।" फिर बिना संकोचके कहती है—"लेकिन मुझे बिलकुल नींद नहीं है। यदि आप चाहें तो सो सकते हैं, मैं यहाँ किनारे बैठी रहूँगी। मैं समझती हूँ आपको कष्ट नहीं होगा।" मैं कह देता हूँ—"हूँ ऐसा भी है और जाग भी सकता हूँ। ख़ास नींद तो आ नहीं रही है।" इसपर युवती कह देती है—"यह बाहरका सीन ख़ासा अच्छा है, नहीं है।"—"है भी, लेकिन मुझे आज नहीं घेर पा रहा है।"—"मतलब कभी आपको यह घेरता रहा है।"—"हाँ, यह कह सकता हूँ।"—"तो फिर आप मुझमें इंट्रेस्ट ले सकते हैं, नहीं ले सकते? वेटिंगरूममें ऐसा लगा था, और इसीसे मुझे आपके कम्पार्टमें आनेका ख़याल आ गया था, वैसे जगहका सवाल भी था, क्योंकि....।" मैं उसकी स्पष्टता और संकोचहीनतासे किंचित् चौंककर फिर प्रकृतिस्थ हो जाता हूँ।

—"लेकिन बादमें मैंने रियलाइज़ किया कि मेरा ख़याल ठीक नहीं है, आपको किसी चीज़के बारेमें दिलचस्पी नहीं हो सकती है।"—"कैसे कहा जा सकता है, हो भी सकती है।"—"तो आप मेरे बारेमें जानना चाहेंगे।"—"क्या दिलचस्पीके लिए यह जानना आवश्यक है?" वह कुछ देर चुप हो जाती है। मैं अवश भावसे बाहरकी घाटियोंकी गहरी होती छायाओंपर दृष्टि डालता हूँ। वह फिर कहती है—"इन पहाड़ी वादियोंमें आपकी दिलचस्पी इसलिए नहीं है कि आप इनको जान चुके हैं। और मुझमें आप बिना जाने भी इंट्रेस्ट ले सकते हैं?" यह जैसे उसने प्रश्न किया हो। उसकी ओर ध्यान देते हुए कहता हूँ—"क्या इसमें कुछ अजीब है?" वह चुप है, पर मेरी तरफ़ देख रही है, जैसे मैं व्यक्ति नहीं वस्तु हूँ। मैं भी सहज भावसे उसे देख रहा हूँ। गेहुआँ रंग है, चेहरा कुछ लम्बा है, नाक तीखी,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मस्तक चौड़ा, ओंठ पतले पर फीके, गाल भरे हैं पर गोल नहीं, और आँखें सबसे अधिक प्रभावपूर्ण मानी जा सकती हैं। उसने साड़ी पहन रखी है, पर लगता है लपेट ली है, पहनी नहीं गयी है। नीले ब्लाउज़में कसे हुए वक्ष हैं। उसने पैर सीटपर उठा रखे हैं और मेरी ओर तिरछी होकर बैठी है, बाहर देखती हुई। मैं देखता हूँ, जैसे उसे खोजता हूँ, जानना चाहता हूँ, पहचानना चाहता हूँ।

उसने एकाएक सवाल किया—"आप मुझे देख रहे हैं?" उसका प्रश्न सहज है, उसमें कोई आरोप नहीं है। मैं उत्तर दे देता हूँ—"देख रहा हूँ, जानना चाहता हूँ।" मेरे उत्तरमें किसी संकोचकी छाया भी नहीं है।—"तो आप मुझे देखकर मुझे जान लेंगे?"—"मैं समझता हूँ, इससे अधिक जानना इतिहास है जो इररेलेवेंट है।" मैं समझता हूँ वह हिन्दी अच्छी नहीं जानती।—"तो आप सारी तवारीख यानी हिस्ट्रीको ख़ामख़्याली मानते हैं?" उसका स्वर कठोर और किंचित् उत्तेजित हो जैसे, मैं यह अनुभव करता हूँ—"लेकिन यह मेरी अपनी निगाह है, दूसरेकी अलग भी हो सकती है। फिर उसकी जगह है, लेकिन हमारी ज़िन्दगीमें नहीं।"—"हिस्ट्रीसे कटकर हम जी सकते हैं?"—"हम हिस्ट्रीसे कटकर ही सही मानेमें जीते हैं।"—"तो आप समझते हैं आदमीका प्रिज़ेंट ही अहम् है, उसका पास्ट बीत चुका है, इसलिए बेमानी है।"—"उसका मानी है, पर इतना ही कि वह बीत चुका है और उसका भी एक इक्स-पीरियन्स है।" वह फिर किंचित् उत्तेजित हो जैसे—"यही तो, यही तो, उस इक्सपीरियन्ससे आदमी अपनेको अलग कर कैसे सकता है? अपने किसी गहरे एहसाससे अलग हो पाना क्या आसान है?"—"हो सकता है इक्सपीरियन्स बहुत गहरा और बुनियादी हो, और हो सकता है कि वह आदमीकी शक़सियतको बेसिकली बदल दे। लेकिन फिर भी मैं मानता हूँ, इसके आगे पास्टसे बँधा रहना औपसेशन है।"

वह चुप रहती है। मैं उसकी ओर थोड़ी देर देखता रहता हूँ, फिर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाहर दृष्टि डालता हूँ, जैसे उसे एकान्त देना चाहता हूँ। समझ रहा हूँ, वह भी बाहर देख रही है। फिर उसकी ओर देखता हूँ, वह बाहर देखकर भी अपनेमें व्यस्त है। मैं पूछता हूँ—"आप सोच रही हैं?" उसने मेरी ओर मुखातिब होकर कहा—"हाँ, यही जो आप कह रहे थे।"—"क्या?"—"यही कि आपको मेरे बारेमें औरोंकी तरह जाननेमें क्यों दिलचस्पी नहीं है।"—"लेकिन मैंने यह भी कहा है कि हो भी सकती है।"—"लेकिन वह बात और है, मैं दूसरी बात सोच रही हूँ।" मैं चुप रहता हूँ, वह फिर शुरू करती है—"मैं बहुत खीझी हूँ, मैंने अक्सर बात करनेसे न भी कर दी है, मेरे मनमें बेहद हेट्रेड दूसरोंकी तई हुई है। मैं सोचती रही हूँ लोगोंको मुझसे ज़्यादा मेरी कहानीमें दिलचस्पी क्यों है?" वह चुप हो जाती है, मैं धीरेसे सवाल करता हूँ—"फिर आप भी वही बात मानती हैं?" वह अन्दरसे उद्वेलित है—"नहीं, नहीं, यह इस तरह सहना आसान नहीं होगा, आपका यह ऐटीट्यूड भी सह पाना नामुमकिन है मेरे लिए। आपका यह अनकन्सर्न....।" मैं उसकी उत्तेजना-को रोकता हूँ—"लेकिन यह ख़ाली दिलचस्पी और कन्सर्नमें क्या कोई फ़र्क़ नहीं है?"

वह शान्त होकर सोचती है। हम दोनों अब बिलकुल आमने-सामने हैं। बाहरके ऊँचे-नीचे उठते-गिरते जंगल केवल हमारी दृष्टिको कभी सहारा देते हैं। मैं पूछता हूँ—"आप नहीं मानती हैं इसे?" मेरी ओर ख़ास दृष्टिसे देखते हुए कहती है—"मान लेती हूँ। पर किसी आदमीके दुःख-दर्द, उसके झेलने, उसकी रूहानी तक़लीफों और कान्फ़्लिक्ट्सको बिना जाने, उनसे बिना हमदर्दी रखे कन्सर्नका क्या मतलब हो सकता है। यह तो कैलस ऐटीट्यूड है।"—"और यह हमदर्दी ज़ाहिर करना भी कैलेस हो सकता है, आपने ग़ौर किया है।" कुछ देर तक सोचकर कहती है—"आप सही कहते हैं। मैंने ख़ुद सफ़र किया है। लेकिन कहीं ऐसा नहीं भी हो सकता है, बल्कि इसके बरख़िलाफ़ ही होता है।"—"होता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब जगह एक-सा ही है, फ़र्क इस बातका हो सकता है कि हम किसी सेचुएशनको किस तरह लेते हैं।" जैसे कुछ खीझकर कहती हो—"तो आपका ख्याल है कि किसीकी पर्सनल लाइफ़में दिलचस्पी लेना हमेशा ग़लत है।"—"नहीं, ऐसा नहीं, ग़लतका सवाल न भी हो पर बेमानी है।"

पहाड़ियाँ समाप्त हो गयी हैं और अन्दाज़ मिल रहा है कि अब गया निकट ही होगा। ट्रेन लेट है, ग्यारह बज चुके हैं। युवती कुछ अस्थिर जान पड़ती है। मैं सोच रहा हूँ कि मुझे सोना चाहिए। वह कैसे मेरे मनका भाव जान सकी है—"आपको बहुत जगा चुकी हूँ, अब आपको सोना चाहिए।"—"ऐसा क्यों, आप भी सो सकती हैं।"—"हाँ, मैं भी सोऊँगी, सोना ही है।" लगता है जैसे यह उसके लिए कोई विवशता हो। मैं अपनेको व्यवस्थित करता हूँ, सोनेके पूर्वकी स्थितिमें लानेके लिए। युवती पूछती है—"अब तो गया स्टेशन आने ही वाला है?" उसका भाव है, अब इसके बाद ही सोना ठीक होगा। मैं भी रुक जाता हूँ, मनःस्थितिसे सोनेकी तैयारी स्थगित कर देता हूँ। फिर जैसे प्रतीक्षा करते हैं एक-दूसरेकी। युवती अवसर देकर कहती है—"फिर आप मुझमें किस प्रकार इंट्रेस्ट लेनेकी बात कह रहे थे?" इस प्रश्नसे एक क्षणके लिए हतप्रभ हुआ हूँ जैसे, पर प्रकृतिस्थ होनेमें देर नहीं लगती—"क्यों, यही तुम हो, तुम्हारा जीवन है, तुम्हारा व्यक्तित्व है! यह इतना क्या कम है?" अनुभव करता हूँ, उसके गालोंपर एक आभा चमक जाती है। हम दोनों ही चुप हो जाते हैं।....फिर गयाका स्टेशन आता है, भीड़-भाड़ उमड़ती-घुमड़ती है, आवाज़ें लगती हैं। हमारा कम्पार्टमेंट अछूता है, केवल सहयात्रियोंमेंसे एक जागते हैं, वही जिन्होंने लाइट बुझाई थी। उनको हमको जागते देखकर कौतूहल हो सकता है, पर वह स्थिति स्पष्ट नहीं समझ पाते, क्योंकि अब युवती ऊपरकी बर्थपर जानेके लिए तत्पर है। और मैंने अपनी चद्दर ऊपर कर ली है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कम्पार्टमेंटके धुँधले प्रकाशमें हम इतने धीरे-धीरे बातचीत करते रहे हैं कि उनकी नींदमें बाधा नहीं पड़ सकी है, फिर उन्होंने विशेष ध्यान दिया भी नहीं।

"आप जाग रहे हैं।" मैं लगभग जाग चुका हूँ—"हाँ, सो नहीं रहा हूँ।"—"मैं तो बहुत कम सो सकी हूँ।"—"अब मैं भी शायद काफ़ी सो चुका हूँ, क्या समय हुआ होगा।" युवती तत्परतासे कह देती है—"लगभग तीन बजा है, मिर्ज़ापुरको अभी ट्रेनने छोड़ा है। लेट चल रही है।" मैं उठकर बैठ जाता हूँ, चार घण्टेकी नींद ट्रेनमें मेरे लिए बहुत है। वह पूर्ववत् अपने स्थानपर बैठ गयी है। फिर जैसे प्रकृतिस्थ होकर कहती हो—"न सोनेपर आपकी बात मनमें घुमड़ती रही है।"—"मेरी बात, क्या कहा था?"—"आपने कहा था—इंट्रेस्ट ले सकता हूँ तुममें, तुम्हारे जीवनमें, तुम्हारे व्यक्तित्वमें।" मुश्किलसे वह इन शब्दोंका उच्चारण करती है—"इन लफ़्ज़ोंसे मेरी ज़्यादा उनसियत नहीं है, फिर भी समझती हूँ। लगता है अपने आप मैंने भी यही ज़िन्दगीसे सीखा है, यह मेरा जाना समझा है।" वह कहना चाहती है, अतः मैं सुन रहा हूँ—"सोचती रही हूँ, जब सबको बिना अपनी ख़्वाहिशके, बहुत बार उसके ख़िलाफ़ बताया है, तब एक बार अपनी च्वायससे भी बताऊँगी। तुम हिस्ट्रीमें दिलचस्पी न भी लेते हो, पर ज़िन्दगीकी साँसोंको पहचानना चाहोगे। मैं समझ सकी हूँ शायद।" मैं बैठा रहता हूँ, इस मुद्रामें जैसे सुनानेपर सुन सकता हूँ।

मैं सुनता रहता हूँ, और वह कह रही है—मैं पूरी कहानी सुन नहीं सका, उसने भी पूरी सुनानी नहीं चाही। पर मैंने अनुभव किया पंजाबके विभाजनमें उसके पति और एक वर्षके लड़केको उसकी आँखोंके सामने मारा गया है, और पतिके सामने उसपर बलात्कार किया गया। उसके शरीर और उसकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आत्मापर उस सारी घटनाके गहरे निशान हों जैसे। परन्तु वह सब उसका व्यक्तिगत नहीं रहा, सैकड़ों, हज़ारों, लाखों नर-नारी इस घटनामें, इस भयानक घटनामें सम्बद्ध हैं, अतः वह केवल उसकी व्यथा नहीं है, केवल उसकी पीड़ा नहीं है। पर इनको, लाखोंको इतिहासकी इस घटनासे पार होना भी है। यदि इनको जीना है, इनको ज़िन्दगीको फिर एक बार पकड़ना है, तो उस तवारीखके अत्यन्त तीखे और दर्दनाक़ अनुभवसे निकलना ही होगा। वह यह भी बताती है कि एक नवयुवकने उत्साहमें, आदर्शके आवेशमें उसे अपनानेका संकल्प भी किया था, वह उसीके पाससे आ रही है। वह युवक भला लड़का है, उसमें कोई दोष नहीं कहा जा सकता। लेकिन वह उसको उसके इतिहाससे अलग कर पा सकनेमें असमर्थ है। उसे याद रहता है कि यह रिफ़्यूजी लड़की है, जिसके पतिको उसके सामने मारा गया है, उसके पतिके सामने कई-कई लोगोंने, उसके साथ रेप किया है। और इस भूमिकापर वह उत्साहमें उसे ग्रहण करना चाहता है, इस भावावेशमें वह उसे प्यार देनेका संकल्प करता है। पर यह इस रूपमें जीना आदमीके लिए क्या कभी सम्भव है, क्या कोई इस भूमिकापर ज़िन्दगी जी सकता है? उसके लिए यह सब असह्य हो गया है और वह छोड़-छाड़कर जा रही है, कहाँ? कह नहीं सकती। शायद जहाँ पिछली ज़िन्दगीसे वह अलग होकर जी सकेगी।

मैं सुनता रहता हूँ, एक घण्टाके लगभग वह धीरे-धीरे कहती गयी है। उसने बहुत रुक-रुककर कह पाया है, और मैंने केवल उसीको जैसे पहली बार जिया है, जो सन् ४७से न जाने कितनी बार झेल चुका हूँ। मैं चुप हूँ, बहुत मौन। वह भी चुप हो चुकी है। फिर धीरे-धीरे अपनेको पाकर कहती है—"इसीसे कह रही थी, तुम्हारा कहना शायद ठीक है।" इतने समय बाद पहली बार लगता है जैसे मैं संकुचित हुआ हूँ—"माफ़ करना, मुझे मालूम नहीं था।"—"तो क्या तुम भी हिस्ट्रीमें बाँधकर देखना चाहोगे। मैंने तो यह कहानी अपनेको खाली करनेके खयालसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम्हारे सामने ज़ाहिर की है।"—"यह हिस्ट्री है, और इसीलिए इससे बँधना, जैसा मैंने कहा था, बेमानी है। पर यह इस येजका ऐसा इक्सपीरियन्स भी है जो आदमीकी ज़िन्दगीको वैलुयेबिल बनाता है। क्या यह ऐसा नहीं हो सकता इस पेनफ़ुल इक्सपीरियन्सने हमारे देशको नई दृष्टि दी हो। आप मेरी बात समझ रही हैं?" गम्भीर भावसे वह कहती है—"हाँ, कुछ-कुछ समझ रही हूँ।" फिर रुककर कहने लगती है—"मैंने तुम्हें समझा था कि तुम्हारा यह दिलचस्पी न लेना कैलेसनेस है। सारे देशमें इतना बड़ा तूफ़ान बरपा हो, भयानक भूकम्प आये, इन्सानकी सारी इन्सानियत चूर-चूर हो जाय और कोई आदमी अपने अन्दर गीता और ईसाका इमीटेशन करता रहे। मैंने वेटिंगरूममें देखा था। फिर तुम्हारी बातचीत।"

मैं चौंकता हूँ, लगता है कहीं पकड़ गया हूँ। पर उसी समय मनमें यह भाव विलीन हो जाता है। मैं पूछता हूँ—"मैं सचमुच कैलेस हूँ, यह ऐसा ही है?" वह कह उठती है—"कहूँगी शायद नहीं, मैं समझती हूँ वह जो तुमने दृष्टिकी बात कही है, वह ठीक हो सकती है और अब मुझे लगता है तुमने देशके बँटवारेको अपने ढंगसे झेला है, नहीं यह ऐसा कह भी न सकते।" मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि यह युवती कहना क्या चाहती है।.... देरसे हम चुप हैं, ट्रेन इलाहाबाद पहुँच रही है, एक घण्टेकी देर होगी। मेरा मन कुछ अनुभव करनेकी स्थितिमें न हो जैसे। बाहर देख रहा हूँ, ऐसे ही बढ़ते हुए प्रकाशको। फिर लगा कोई मेरे समीप आ गया है, मैं देखता हूँ युवती मेरे सामने समीप है। एक क्षणके लिए हम दोनोंकी आँखें मिलती हैं। वह मेरी आँखोंमें कुछ पहचाननेकी कोशिश कर रही हो, और मैं भी कुछ खोज ही रहा हूँ। वह एकाएक मेरे हाथोंको अपने हाथोंमें कस लेती है, उसी क्षण उसकी दृष्टि मेरे हाथोंपर पड़ती है और वह चिहुँककर मेरे हाथ छोड़ देती है, जैसे उससे कोई अपराध हुआ हो। मैं लज्जा, खीझ और संकोचसे मुसकरा देता हूँ। इसपर वह भी जैसे लज्जित हो।

× × ×

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्टेशन आ गया है और मैं उतर रहा हूँ। कुलीने सामान सिरपर रख लिया है। वह प्लेटफ़ार्मपर उतर आई है। विदा लेते समय वह निस्संकोच मेरे हाथोंको स्पर्शकर कह देती है—"तुम अजीब हो, क्या तुम्हारे लिए फ़्यूचरका भी कोई मानी नहीं।" मैंने कुछ अनुभव किया, समझा नहीं। उसे ऊपरसे नीचेतक देखकर कह देता हूँ—"हो सकता है।"

मेरा कुली आगे बढ़ चुका है और मैं घाटीसे विदा हो उसके पीछे जा रहा हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

H94.1. RISH 22155

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

This book was taken from the library on the date last stamped. A fine of one anna will be charged for each day the book is kept overdue.

2.6.65	23.6.65		
1.5-1966	10.5.66		

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust

H94.1 R131
हरी घ
7264-2.6.6
6575-1.5.64
7801: 18.1.63

डॉ० रघुवंश

जन्म १९२१ई० में गोपामऊ ज़िला हरदोईमें हुआ। शिक्षाके लिए अधिक भटकना पड़ा—पैतृक गाँव, जौनपुर, सुलतानपुर, फैज़ाबाद, जयपुर और प्रयाग। बी०ए० महाराजा कालेज जयपुरसे और एम०ए० इलाहाबाद विश्वविद्यालयसे। १९४८ में इसी विश्वविद्यालयसे 'प्रकृति और काव्य' शीर्षक शोध-प्रबन्ध पर डी० फिल्० की उपाधि प्राप्त हुई और १९५० से इसी विश्वविद्यालयके हिन्दी विभागमें प्राध्यापक हैं।

सम्पादन—आलोचना, हिन्दी अनुशीलन तथा हिन्दी साहित्य-कोश।

अनुवाद—सेतुबन्ध तथा नाट्यशास्त्र (यन्त्रस्थ)।

कृतियाँ—प्रकृति और काव्य (हिन्दी), प्रकृति और काव्य (संस्कृत), छायातप, तन्तुजाल, नाट्यकला।

पढ़ाना दायित्व है, पढ़ना अध्यवसाय है, घूमना रुचि है और लिखना अनिवार्यता !

n.
be r
if not
another m
residing out
may return bo
forty days of their

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतीय ज्ञानपीठ
काशी

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक-साहित्यका निर्माण

संस्थापक
साहू शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतीय ज्ञानपीठ
काशी

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक-साहित्यका निर्माण

संस्थापक
साहू शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE